॥રામ॥

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

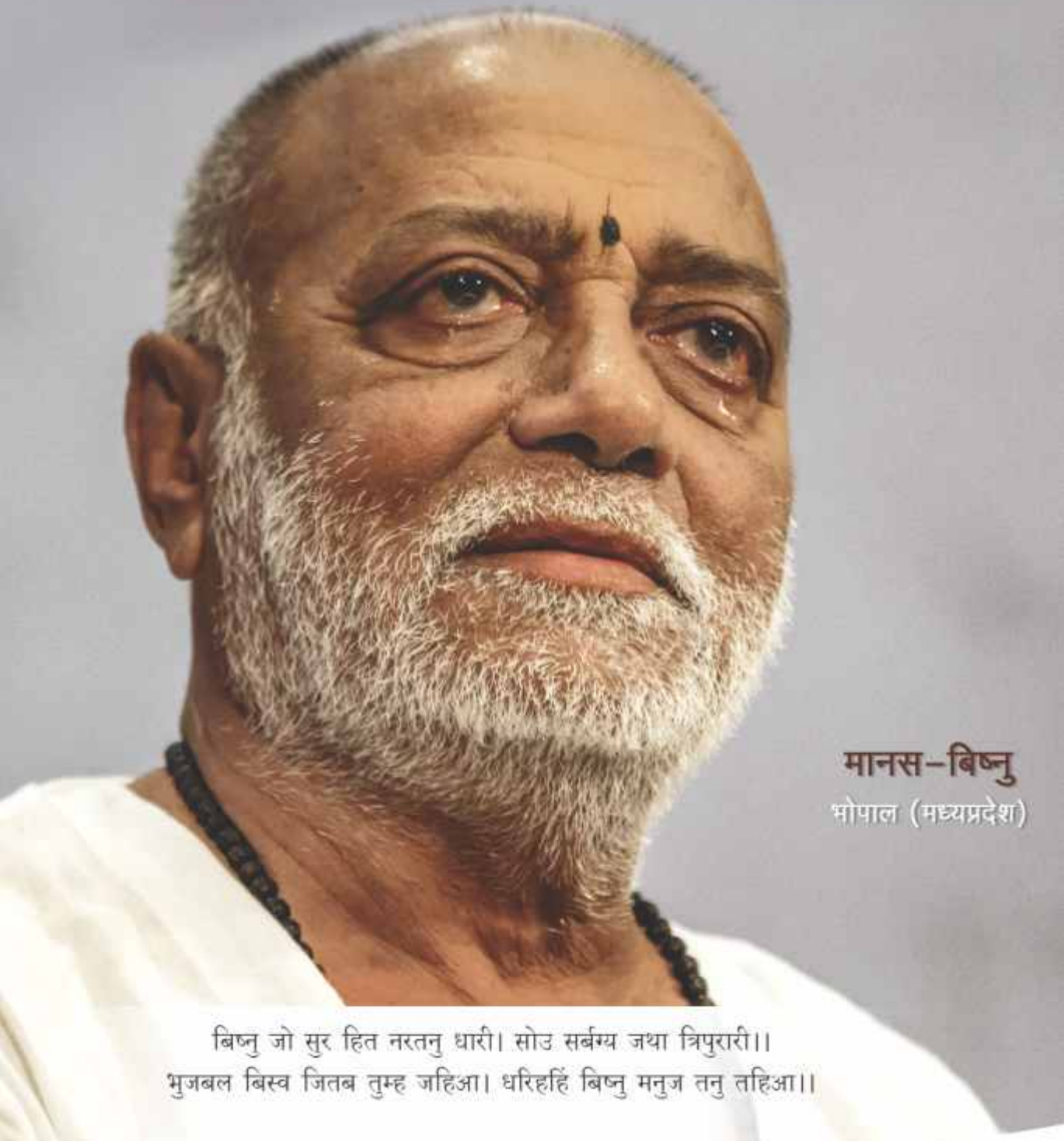

मानस-बिष्णु

भोपाल (मध्यप्रदेश)

बिष्नु जो सुर हित नरतनु धारी। सोउ सर्बग्य जथा त्रिपुरारी।।
भुजबल बिस्व जितब तुम्ह जहिआ। धरिहहिं बिष्नु मनुज तनु तहिआ।।

|| रामकथा ||
मानस-बिष्नु

मोरारिबापू
भोपाल (मध्यप्रदेश)
दिनांक : २८-३-२०१७ से ५-४-२०१७
कथा-क्रमांक : ८०९

प्रकाशन :
जुलाई, २०१९

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

रामकथा पुस्तक प्राप्ति सम्पर्क-सूत्र :
ramkathabook@gmail.com
+91 704 534 2969 (only sms)

ग्राफिक्स
स्वर एनिम्स

प्रेम-पियाला

मध्य प्रदेश की पाटनगरी भोपाल में दिनांक २८-३-२०१७ से ५-४-२०१७ दरमियान चैत्र नवरात्रि के पवित्र दिनों में मोरारिबापू की रामकथा का प्रेमयज्ञ सम्पन्न हुआ। 'मानस-बिष्नु' विषय पर केन्द्रित हुई इस रामकथा में बापू ने भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण से विष्णु विषयक अपना दर्शन प्रस्तुत किया।

विष्णु भगवान के संदर्भ में कहे गये सर्वविदित श्लोक मुताबिक 'शान्ताकारं', 'भुजगशयनं', 'पद्मनाभं', 'सुरेशं', 'विश्वाधारं', 'गगनसदृशं', 'मेघवर्णं', 'शुभाङ्गम्', 'लक्ष्मीकान्तं', 'कमलनयनं', 'योगिभिर्ध्यानगम्यम्' जैसे विष्णु के गुण-लक्षणों का बापू ने सहज-सरल भाष्य किया और साथ ही बापू ने कहा कि आज भी संसार में ऐसे लक्षण किसी में देखें तो उसको विष्णु मानना। वो हमारे समकालीन विष्णु है। वो ओलरेडी अवतार है, ऐसा समझना।

हमारे ग्रंथों में भगवान विष्णु को पंचधर्मा कहा है; विष्णु के पांच धर्म माने गये हैं; तो 'मानस' में भी गोस्वामीजी ने विष्णु के पंचधर्मों की चर्चा की है उसका जिक्र भी बापू ने किया और 'बालकांड' के मंगलाचरण में 'नील सरोरुह स्याम...' सोरठे में निहित विष्णु के पंचधर्म को उद्घाटित करते हुए कहा कि विष्णु श्रमधर्मा है, प्रेमधर्मा है, ज्ञानधर्मा है, ध्यानधर्मा है और समाधिधर्मा है।

मत्स्य, कच्छप, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध आदि नौं अवतारों का परिचय देकर बापू ने भोपाल की इस रामकथा में पहली बार ऐसा निवेदन भी किया कि सद्गुरु दसवां अवतार है। और सद्गुरु में पूर्व नौ अवतारों के सभी विशिष्ट लक्षण समाविष्ट है। 'विष्णुसहस्रनाम' में निर्दिष्ट चतुर्मूर्ति, चतुर्बाहु, चर्तुव्यूह, चतुर्गति, चतुरात्मा, चतुर्भाव, चतुर्वेद इत्यादि विष्णु के रूप 'मानस' में कहां और कैसे दिखाई देते हैं इसकी भी बापू ने सदृष्टांत चर्चा की।

कथा के आठवें दिन बापू ने भोपाल के सुप्रसिद्ध शौर्य स्मारक में मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री महोदय की उपस्थिति में पीपल के वृक्ष बोयें और कथा के श्रोताओं को भी वृक्षारोपण एवम् स्वच्छता की अपील करते हुए कहा कि अपने आंगन में अथवा तो जहां भी व्यवस्था हो वहां वृक्ष बोओ। वृक्ष का जतन हो। नदियों में शब न बहाओ। प्रदूषण न हो।

मोरारिबापू ने ग्वालियर में शिवरात्रि के अवसर पर 'मानस-महेश' पर कथा को केन्द्रित की थी। बर्मा-ब्रह्मदेश में 'मानस-ब्रह्मा' को केन्द्र में रखते हुए आध्यात्मिक चर्चा की थी। और भोपाल में 'मानस-बिष्नु' पर अपना दर्शन प्रस्तुत किया। इस तरह बापू ने इन तीनों कथा के माध्यम से ब्रह्मा, विष्णु और महेश की वाङ्मय पूजा की।

– नीतिन वडगामा

मानस-बिष्नु : १

जो आकाश की तरह व्यापक है वह विष्णु

बिष्नु जो सुर हित नरतनु धारी। सोउ सर्बग्य जथा त्रिपुरारी।।
भुजबल बिस्व जितब तुम्ह जहिआ। धरिहहिं बिष्नु मनुज तनु तहिआ।।

बाप! भगवत्कृपा से हमारे राष्ट्र का एक भू-भाग मध्यप्रदेश, उसकी पाटनगरी में, भोपाल में पुनः एक बार बारह साल के बाद हमारे वडील मुरब्बी आदरणीय आत्मीय रमेशचंद्रजी अग्रवाल बापा और आपका पूरा 'भास्कर' परिवार; फिर एक बार इस नौ दिवसीय रामकथा में निमित्तमात्र यजमान बनकर के रामकथा के माध्यम से 'भास्कर' उत्सव मनाने का उपक्रम आपने बनाया। मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। यहां इस पवित्र चैत्र नवरात्र के दिनों में रामकथा का एक प्रेमयज्ञ शुरू हो रहा है। उसमें व्यासपीठ से आप सभी का आदर। और मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री, मेरी दृष्टि में सरलचित्त आदरणीय शिवराजसिंहजी आये। मध्यप्रदेश की साढ़े सात करोड की जनता की ओर से आपने व्यासपीठ के प्रति आदर व्यक्त किया उसके लिए आप और आपका पूरा समुदाय और पूरी मध्यप्रदेश की जनता के लिए चैत्र नवरात्रि की बहुत-बहुत बधाई और मेरी बहुत-बहुत शुभकामना। यही तो हमारी परंपरा है, प्रवाही परंपरा कि राजपीठ कायम व्यासपीठ को आदर देती आ रही है।

भास्कर मानी सूर्य और सूर्यवंश में भगवान राम प्रकट हुए। इस सूर्यवंश उजागर रामचंद्र की रामकथा नौ दिन के लिए यहां आज से आरंभ हो रही है उसमें आप सभी का मैं स्वागत करता हूं। आप सबको व्यासपीठ से मेरा प्रणाम। आज से चैत्र नवरात्र शुरू हो रहा है। हमारे वैदिक और शास्त्रीय प्रमाण के अनुसार परमतत्त्व ने इस सृष्टि का सर्जन करने का आदेश ब्रह्मा को दिया और सृष्टि का आरंभ हुआ वो दिन आज का है; चैत्र शुक्ल प्रतिपदा सृष्टि का आरंभ हुआ है, ऐसा शास्त्रीय उल्लेख है। दूसरी बात; सतजुग का आरंभ, जब सृष्टि पैदा हुई, सतजुग सबसे पहले कालगणना में आया और सतजुग के आरंभ का भी ये प्रथम दिन है। चैत्र शुक्ल प्रतिप्रदा ये पहला दिन है। हमारे राष्ट्र के एक पुन्यश्लोक राजा विक्रमादित्य, उसने इस आधार को लेकर अपना विक्रम संवत् आज से शुरू किया। और चैत्रीय पंचांग के आधार पर आज से नई साल शुरू हो रही है। इसलिए नई साल की आप सबको बहुत-बहुत बधाई और शुभकामना। सृष्टि के आरंभ के दिन के लिए भी और सतजुग के आरंभ के दिन के लिए भी सभी को बहुत-बहुत बधाई। चौथी बात; एक कथा के अनुसार राम भगवान की चौदह साल की वनयात्रा के दौरान तेरह साल पूरा होने के बाद जब भगवान साउथ में आगे-आगे बढ़ते हैं अपना अवतारकार्य पूरा करने के लिए। एक मत ऐसा भी मिला कि चैत्र शुक्ल प्रतिप्रदा को भगवान राम ने वालि को निर्वाण दिया है। इसलिए आज का दिन वालिनिर्वाण के दिन में पूरा महाराष्ट्र उसको गुडी पडवा कहते हैं; पूरा साउथ उसको गुडी पडवा कहता है। तो आज का दिन उसके साथ भी कुछ जुड़ा हुआ दिन है। कई प्रकार से मंगलमय दिन है।

हमारे यहां दो प्रगट नवरात्र और दो गुप्त नवरात्र, बारह मास में। प्रगट नवरात्र ये चैत्र नवरात्र, जिसमें शक्ति की सब आराधना करते हैं। अश्विन नवरात्र वो तो स्पष्ट रूप में माता के ही नवरात्र माने जाते हैं। उसमें भी सब अपनी-अपनी श्रद्धा के अनुसार अनुष्ठान आदि करते हैं। दो गुप्त नवरात्र; एक नवरात्र है वो है महा शुक्ल नवरात्र। माघ महीने के शुक्लपक्ष के नौ दिन उसको गुप्त नवरात्र के रूप में प्रस्थापित किया गया। एक दूसरा गुप्त नवरात्र, उसमें दो राय है। कई लोग ऐसा मानते हें कि वो भाद्र शुक्लपक्ष के नौ दिन नवरात्र माना जाता है। कई लोग वैशाख शुक्लपक्ष के नौ दिन को नवरात्र मानते हैं, जिसमें जानकी की श्री जन्मजयंती का उल्लेख प्राप्त होता है। कई मत हो सकते हैं। हम उसमें न जाये। लेकिन ये दो प्रगट नवरात्र, चैत्रीय नवरात्र और अश्विन नवरात्र। और इसमें भी ये नवरात्र जो सृष्टि के आरंभ का नवरात्र है; सतजुग के आरंभ का नवरात्र है; विक्रम संवत् का प्रथम नवरात्र है; और जिस नवरात्र में भगवान राम के प्रागट्य का उत्सव। भक्तिपूजा के दिन पूरे होते हैं और शक्तिमान का प्रागट्य होता है। ऐसे ये पवित्र नवरात्र के दिनों में भोपाल में फिर एक बार बारह साल के बाद भगवद्कथा गाने का अवसर प्राप्त हुआ उसकी मैं प्रसन्नता व्यक्त करता हूं और निमित्त बने परिवार के लिए बहुत-बहुत मेरी शुभकामना व्यक्त करता हूं।

मैं सोच रहा था कि इस कथा में कौन विषय पर 'मानस' के आधार पर बोलूं? वैसे तो बर्मा की कथा से ही मैंने उद्घोष कर दिया था। मैं ग्वालियर में शिवरात्रि के अवसर पर कथा गा रहा था तो वहां मेरी व्यासपीठ ने विषय चुना था 'मानस-महेश' शिव के बारे में; फिर ब्रह्मदेश गया; बर्मा गया उसको लोग ब्रह्मा का देश पहले मानते थे; अब तो बदलता जा रहा है सबकुछ। तो वहां मैंने 'मानस-ब्रह्मा' के विषय को केन्द्र में रखते हुए उस प्रेमयज्ञ की आध्यात्मिक चर्चा की। और तभी मैंने कहा था कि ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनों को हम मानते हैं तो क्यों न मैं भोपाल में बिष्णु के विषय में बोलूं? चैत्र नवरात्र भी है और एक अर्थ में भगवान राम विष्णु के अवतार भी माने जाते हैं। यद्यपि राम परमतत्त्व है; उससे कई विष्णु प्रगट होते हैं। लेकिन विष्णु के अवतार के नाते भी ये प्रासंगिक भी लगेगा। इस कथा में फिर एक बार 'मानस-बिष्नु' संवाद आपके साथ करूं, जिसमें सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा रहेगी।

मुझे बताया गया कि कम्बोडिया की कथा में 'मानस-विष्णु भगवान' पर एक बार तो मैं बोल चुका हूं। वहां दुनिया का बहुत बड़ा विष्णु भगवान का टेम्पल है। लेकिन यहां केवल 'मानस-विष्णु' को केन्द्र में रखते हुए मैं आपके साथ संवाद रचूंगा। और उसके लिए मैंने दो पंक्तियां 'बालकांड' से चुनी है। एक पंक्ति तो 'मानस-विष्णु भगवान' में भी गाई गई वो ही पंक्ति मैंने फिर यहां उठाई है। जो पहली पंक्ति, 'बिष्नु जो सुरहित नरतनु धारि।' ये कम्बोडिया में भी ली थी। उसके बाद वहां एक दूसरी पंक्ति जोड़ दी थी जिसमें 'भगवान' शब्द आता था। यहां केवल विष्णु रख रहा हूं इसलिए फिर एक दूसरी पंक्ति मैंने उठाई है। पहली पंक्ति जो उठाई है भूमिका के लिए वो आप जानते हैं कि भगवान शिव और सती कुंभज ऋषि की कथा सुनकर लौट रहे थे और बीच में दंडकारण्य में रामदर्शन होते हैं और भगवान शिव अहोभाव में डूब जाते हैं और रोते हुए राम को देखकर सती के मन में संदेह पैदा होता है तब वो सोचती है कि विष्णु ने अगर ये नरतनु धारण किया है तो विष्णु भी तो सर्वज्ञ माने जाते हैं जैसे कि शंकर। तो वो अपनी पत्नी के वियोग में ऐसा क्यों रोये? क्या उसको पता नहीं कि उसकी पत्नी को कौन चुराकर ले गया। वो पंक्ति है। दूसरी, 'भुजबल बिस्व जितब तुम्ह जहिआ।' अपने भुजा के बल से तू पूरे विश्व को जहां जीतोगे। 'धरिहहिं बिष्नु मनुज तनु तहिआ।' वहां विष्णु मनुष्य शरीर धारण करेंगे। ये दूसरी पंक्ति है।

तो बाप! इस कथा में प्रसंग तो हम लेंगे ही संक्षिप्त में लेकिन मूल संवाद रहेगा 'मानस-बिष्नु।' पूज्यपाद गोस्वामीजी देहाती भाषा में ग्राम्य गिरा में अपना शास्त्र प्रस्तुत करते हैं इसलिए वो 'बिष्नु' शब्द का प्रयोग कर रहे हैं, 'विष्णु' नहीं। तत्त्वत: 'विष्णु' शब्द है। मूल संस्कृत, हिन्दी, गुजराती में 'विष्णु' ही तो हम बोलते हैं, लेकिन तुलसी उसको 'बिष्नु' कहते हैं। तो उसी शब्द को ही जो तुलसी ने उच्चारित किया है वो ही मैं रखूंगा, 'मानस-बिष्नु।' तो इस कथा में भगवान विष्णु की हम वाङ्मय पूजा करेंगे, उसकी परिक्रमा करेंगे।

हम जानते हैं कि भगवान विष्णु के वैसे चौबीस अवतार हमारे यहां माने गये। विष्णु के ही चौबीस अवतार। ब्रह्मा कभी-कभी किसी दूसरे रूप में आये हैं। लेकिन ब्रह्मा की परंपरा में कोई अवतार परंपरा नहीं है। आदिपुरुष जगत का सर्जक जिसको हम ब्रह्मा कहते हैं। वो फिर त्रेता युग में जामवंत बनकर आये हैं। राम की सेवा में जो जामवंत है, ब्रह्मा का अवतार माना गया। फिर भगवान कृष्ण के काल में भी जामवंत-जामवंती के पिता के रूप में भी हमारे सामने आते हैं। लेकिन उसकी कोई अवतार परंपरा नहीं है। शिव की, महेश की तो अवतार परंपरा है ही नहीं, क्योंकि वो अजन्मा है। वो जन्म लेते ही नहीं फिर भी तुलसी ने हनुमानजी को महेश के- शिव के ग्यारह रुद्र का अवतार माना है। लेकिन विष्णु की तरह पूरी अवतार परंपरा न ब्रह्मा की है, न महेश की है। ये केवल विष्णु की है। और उसमें भी भगवान विष्णु के छोटे-बड़े अवतारों की हम गिनती करे तो चौबीस अवतार भगवान ने धारण किये हैं।

'विष्णु' शब्द जो है, संस्कृत के न्याय से जो मैंने दर्शन किया उसके मुताबिक उसमें 'विष' धातु है। 'विष' धातु से ये शब्द बना है। हमारे चार वेदों के एक बहुत परम प्रकांड विद्वान भाष्यकार हुए यास्काचार्य। सायनाचार्य ने भी भाष्य रचा है। उसने 'विष' धातु का अर्थ लगाया है प्रविष्ट होना; प्रवेश करना; बैठ जाना; बैठकर के कायम निभाना। और विष्णु का अर्थ भी ये बताया कि जो सबमें प्रवेश कर जाता है। सबमें बैठ जाता है और सबका निर्वाह करता है; उसको विष्णु कहा। 'विष्णुसहस्रनाम' ओलरेडी हमारे पास है। 'महाभारत' का एक बहुत एक बहुत बड़ा भाग 'विष्णुसहस्रनाम' उसका भी मैं आश्रय लेना चाहूंगा इस कथा में कि कौन-कौन विशेष नाम जो विष्णु की विशालता को प्रस्थापित करता है। विष्णु मानी व्यापक। कोई संकीर्णता नहीं। एक श्लोक हमारे यहां विष्णु भगवान के बारे में लगभग हम सबको आता है। उसमें विष्णु के लिए जो एक शब्द प्रयुक्त किया है इसके लिए मैं आपके सामने ये श्लोक रखना चाहूंगा।

शांताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं।
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।
लक्ष्मीकांत कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यम्।
वन्दे विष्णु भवभयहरं सर्वलोकेकनाथम्।

तो विष्णु भगवान के बारे में ये मंत्र, ये श्लोक हम सब स्तुतियों में प्रार्थनाओं में गाते हैं, वहां विष्णु भगवान के इस लक्षणों की चर्चा है। दसावतार विष्णु के ही माने गये प्रधान। और यहां दस लक्षण की ओर मेरी व्यासपीठ को संकेत लगता है। एक तो 'शांताकार' ये विष्णु का लक्षण है। मैं तो उसको इस रूप में भी देखूं कि ये दस लक्षण वर्तमान जगत में भी जिसमें दिखाई दे वो बहन हो, भाई हो, बच्चा हो, बूढ़ा हो, युवक हो, कोई भी हो; हिन्दु हो, मुस्लिम हो, बौद्ध हो, जैन हो, ईसाई हो, यहूदी हो, भारतीय हो, कोई मुल्क का हो; पूरब का हो, पश्चिम का हो; एशिया का हो, युरोप का, कोई भी हो उसको विष्णु मानने में, उसको विष्णु के रूप में प्रिय भाव से देखने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। उसको जीता-जागता विष्णु समझने में देर नहीं करनी चाहिए। भगवान विष्णु की मूर्ति होती है वो तो है; हमारी श्रद्धा है लेकिन कई बुद्धपुरुष के रूप में मूर्तिमंत विष्णु होते हैं, जो पहचाने नहीं गये। तो ये दस लक्षण मेरे जिसमें आत्मदृष्टि से देख पाये, गुरु की दी हुई आंख से देख पाये तो वो चलता-फिरता विष्णु है। वो हमारे समकालीन विष्णु है।

'शांताकारं भुजगशयनं'; पहला लक्षण बताया जिसका आकार, जिसका आचार, जिसका विचार-उच्चार वो शांत हो। उसमें न व्यग्रता हो; न उग्रता हो। दोनों न हो। और गजब है! धन्य है विष्णु जो सांप के बिछाने पर सोता है और फिर भी 'शांताकारं,' फिर भी शांत है। ये बहुत प्रेरणादायी है। मैं समझ रहा हूं कि व्याख्या करना बहुत सरल है। लेकिन जीवन में शांत रहना बड़ा कठिन है, बड़ा मुश्किल है! फिर भी जो तमाम सभ्यों के बीच में शांत बना रहता है। गुजराती में तो कहते हैं, 'शांति पमाडे एने संत कहिए।' संत कौन? जो शांत रहे। क्योंकि अशांत को कभी सुख नहीं मिलता। जो निरंतर अशांत रहते हैं उसको सुख नहीं मिलता। हम सब अशांत रहते हैं। फिर भी जगत में अशांति के बीच भी कोई शांत यदि बना रहे तो समझना उसने विष्णु का एक अंग अपने जीवन में चरितार्थ कर दिया है। मृत्यु और काल से हम सब डरते हैं। भगवान विष्णु काल के बिछाने पर सोते हैं फिर भी योग निद्रा में रहते हैं। जो काल की पथारी में भी विश्राम कर सके वो विष्णु है।

आपने उसके बारे में कभी सोचा मेरे भाई-बहन कि हम पूरी ज़िंदगी जीते हैं फिर भी जगत में कई लोग बहुत बड़ी मात्रा में, जगत में पूज्य नहीं बन पाते हैं। शंकर सदा-सर्वदा पूज्य क्यों? उसने विष पिया। जिसस पूज्य है क्योंकि उसने मृत्यु का वरण किया। मृत्यु एक ऐसी महिमावंत अवस्था है, होते ही आदमी को पूज्य बना देती है। शव के लोग सगुन लेते हैं यार! शव निकलता है तो सगुन माना जाता है, क्योंकि अब उसका झूठ छूट गया; अब उसकी कुदृष्टि छूट गई; अब दूसरे को छलना छूट गया; अब उसकी बेईमानी छूट गई। ये कुछ भी किये बिना साधु बन गया है; दिगम्बर साधु बन गया है।

शांताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं।

'पद्मनाभं' विष्णु का एक नाम। हमारे यहां पद्मनाभ का मंदिर है भारत में। शिवमंदिर तो गांव-गांव है। हनुमानमंदिर तो गांव-गांव है। ब्रह्मा के मंदिर तो ज्यादा है ही नहीं। एक अजमेर में पुष्कर में है। ओर जगह तो ब्रह्मा के मंदिर बहुत कहीं दिखते नहीं है। लेकिन विष्णु का मंदिर राम-कृष्ण के रूप में जगह-जगह पर है। ये श्रीनाथजी भगवान है, कृष्ण है तो ये विष्णु का ही अवतार माना जाये। तिरुपति बालाजी है विष्णु ही। साउथ में आपको ज्यादा से ज्यादा विष्णु टेम्पल मिल जाते हैं। शिव टेम्पल भी मिलते हैं। पद्मनाभ भगवान है, विष्णु मंदिर है। हमारा द्वारिकाधीश, हमारा मतलब हम सबका है, पूरी दुनिया का द्वारिकाधीश विष्णु है। अब इसी विष्णु पर से एक बहुत बड़ा व्यापक शब्द आया और गांधी के आदर के कारण पूरे विश्व में पहुंच गया वो एक महिमावंत शब्द है 'वैष्णव'; और जो नरसिंह मेहता ने गाया फिर गांधीबापू ने गाया और पूरी दुनिया में फैल गया। ये विष्णु की व्यापकता है।

वैष्णवजन तो तेने रे कहीए जे पीड पराई जाणे रे।

भगवान शंकर की पूरी परंपरा निर्वाणमार्गीय है। मिटाना यानी निर्वाण कर देना, खत्म कर देना नहीं। निर्वाण, एक पुनर्जीवित करना। विष्णु की पूरी परंपरा पालन करने की परंपरा। ब्रह्मा की परंपरा सर्जनात्मक है। हम सब जानते हैं कि फिर रिबोर्न जिसको कहते हैं, जिसको हमारी परंपरा में द्विज कहते हैं, बार-बार जनमना, बार-बार जनमना। पूरी वैष्णवी परंपरा निर्वाहक परंपरा है, पालक परंपरा है। इसलिए विष्णु परंपरावाले मुक्ति नहीं मांगते। 'रामचरितमानस' में भरतजी परम वैष्णव है। 'वैष्णव' शब्द बोलता हूं तो संकीर्ण अर्थ मत करना। पूरी दुनिया वैष्णवी है। वैष्णव मानी व्यापकता। 'वैष्णव' शब्द के साथ 'संप्रदाय' शब्द लगाना भी मुझे ठीक नहीं पड़ता।

तो भगवान विष्णु का एक तीसरा रूप है 'पद्मनाभं।' विष्णु की नाभि से कमल निकला और उसमें ब्रह्मा बैठे और ये पूरी पौराणिक कथा हम जानते हैं। ये पद्मनाभ है। नाभि का जोड़, नाभि की संलग्नता, नाभि की असंगता कमलवत् जिस साधक में आ जाये वो विष्णु का एक अंग है। हम सब नाभि से जुड़े हैं; नाभि नाल से जुड़े होते हैं। समझ में आ जाये तो सब विष्णु है। सब पद्मनाभ है। ये तो हम कह दे कि हिन्दु का बच्चा है, मुस्लिम का है। ये अपनी-अपनी आइडेन्टी है। ये होनी चाहिए, लेकिन नाल को खबर नहीं है कि कौन हिन्दु, कौन मुसलमान, कौन बौद्ध, कौन जैन, कौन ईसाई, कौन यहूदी? ये तो कमल की तरह असंग है। ये तो एक चेतना का संपर्क है। सब बच्चे प्रगट होते हैं, विष्णुरूप में ही प्रगट होते हैं, जो नाभि से जुड़े होते हैं। पद्मनाभं जीवंत होने का साक्ष्य है; जीवंतपना। आपको लगे कि ये आदमी चौबीस कलाक लाईव ही लगता है और फिर भी असंग है; सबको अपना लगे फिर भी लगे कि नहीं, ये आदमी किसी का भी नहीं लगता, ये पद्मनाभं है। बिलकुल असंग रहकर बिलकुल लाइव जीवन जीने की बात है। जो कोई बुद्धपुरुष मिल जाये तो समझना उसमें विष्णु का एक अंग है।

'शांताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं' और 'सुरेशं।' जो देवताओं के ईश है; ये सुरेश है। अब सुरेश तो इन्द्र को माना जाता है। सुरेश मानी इन्द्र। 'मानस' में तो स्पष्ट है, सुरेश मानी इन्द्र। 'सुनु सुरेश उपदेश हमारा। नाम ही सेवक परम पियारा।' लेकिन यहां विष्णुपना जो है वो इन्द्रवाली बात नहीं। जो मुझे रास आती है व्याख्या ये देव मानी दिव्यता हो वो देव। और जगतभर की दिव्यता का शिरोमणि जो है वो सुरेश। हमें और आपको गुरु से प्रज्वलित आत्मज्योति से कोई ऐसा चलता-फिरता आदमी दिखाई दे जिसमें हमें लगे कि सभी दिव्यता निवास कर रही है, सभी दिव्यता का ये स्वामी है, उसको कहते हैं, 'सुरेशं।' ये चौथा अंग है।

'विश्वाधारं।' पांचवां लक्षण विष्णुपने का वो जो है, विश्व का आधार। एक छोटा-सा पांच व्यक्ति, सात व्यक्ति, नौ व्यक्ति, जो जिसका जितना परिवार। इस

परिवार का पूरा का पूरा आधार बनकर जो पालन करता है, बिलकुल समता और ममता को निभाते हुए पालन करता है, ऐसे बाप को विष्णु समझना; ऐसे पिता को विष्णु समझना; ऐसी माँ को विष्णु समझना। यहां लिंगभेद नहीं, जातिभेद नहीं कि स्त्रीलिंग है, पुल्लिंग है; नर है, नारी है। हमारा विश्व कितना? हमारा एक छोटा-सा घर ये हमारा विश्व है। और उसका जो आधार बन जाये। वैसे पूरे विश्व का जो आधार बन जाये। जो सबका आधार है; ये विष्णुपना है। वैश्विकपना जिसमें हो; पूरा विश्व जिसके आधार पर चलता हो, जिसके विचार पर चलता हो; ऐसी कोई परमचेतना को हम विष्णु के दस अंग का एक अंग मान सकते हैं।

आगे का लक्षण है छठ्ठा 'गगनसदृशं।' मैं इसी शब्द पर जा रहा था जो व्यापक है वो विष्णु है। विष्णु कौन? जो आकाश की तरह व्याप्त-व्यापक है। जिसकी विचारधारा व्यापक है। जिसके धर्म की दृष्टि संकीर्ण नहीं है। ऐसे व्यापक विचारधारा जिसकी है आकाश की तरह। हमारी सनातन हिन्दु परंपरा में, हमारी प्रवाही परंपरा में धर्म की ये व्याख्या मिलती है, गगन सिद्धांत; जिसके सिद्धांत आकाश की तरह विशाल हो, छोटे ना हो। मैंने अभी कहा है कि हमारी पहचान है वो कायम निभाना लेकिन दृष्टि संकीर्ण मत करना। गांधीजी ने कहा था कि हिन्दु होने का मुझे बहुत गौरव है, लेकिन गांधी आकाश की तरह विशाल विचार देकर विश्व से गये। विशाल दृष्टिकोण ये बहुत जरूरी है। ये विष्णुपना है। 'विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं।' जिसका वर्ण मेघ जैसा है। मेघ विष्णुभक्त है 'रामायण' में। 'रामायण' में तीन विष्णुभक्त है। इनमें एक मेघ है। जो बादल है वो विष्णुभक्त है। उसके समान विष्णुभक्त कोई नहीं। जो मेघवर्ण है; श्याम वर्ण गहराई का प्रतीक है। श्याम वर्ण ऊपर-ऊपर का नहीं माना जाता, वो गहराई का प्रतीक है। श्यामवर्ण को नकारना मत कभी। भारतीय दृष्टि में तो सांवरा रंग ही पसंद किया जाता है।

विष्णु के हाथ में हमने चार वस्तु क्यों दी? शंख, चक्र, गदा और पद्म। इसका मतलब क्या है? भगवान विष्णु के हाथ में हमने शंख दे दिया। शंख श्वेत है। उसका वर्ण तो उज्वल है, लेकिन शंख में एक नाद है। और आदमी का नाद मलिन नहीं होना चाहिए; उज्वल होना चाहिए। जिसकी गिरा, जिसकी आवाज़ धवल शंख की तरह हो। जिसका कंठ शंख की तरह हो। गर्जना तो श्याम बादल ही करते हैं। श्वेत बादल तो फिक्के हैं, झूठे हैं बिलकुल! एक ही झपाटे में पूरे विश्व का दर्शन करा देती हैं बिजली। बुद्धि और प्रज्ञा में इतना ही फ़र्क है, जितना छोटे दीपक और कौंधी हुई बिजली। जब बिजली कौंधती है तो एक ही चमकारे में इधर से उधर कोना-कोना दिखाई देती है। उसी बिजली में जो मोती पीरो लेता है वो ही प्रज्ञावान है। हमारी गंगासती गुजरात की उसी प्रज्ञा के चमकारे की बात करती है-

वीजळीने चमकारे मोती परोववुं पानबाई!

आपने बिजली जब देखी होगी एक साथ पूरा चारों ओर एक क्षण के लिए सब। प्रज्ञा एक चमकारे में सब दिखा देती है गुरुकृपा से। प्रज्ञा की बिजली कौंधे तो तुम्हें लगेगा कि कोई पराया नहीं है, पूरी दुनिया एक उज्वलता से जुड़ी हुई है। तो मेघ गर्जना करता है। बिजली करके प्रज्ञा का प्रचार करता है मेघ। मेघ करुणा की वर्षा भी करता हैं इसलिए ये विष्णुतत्त्व को संस्कृत ऋषियों ने मेघवर्ण कहा। विष्णु ब्राह्मण नहीं, विष्णु क्षत्रिय नहीं, विष्णु वैश्य नहीं, विष्णु शूद्र नहीं। विष्णु का एकमात्र है वर्ण और वो मेघ। और मेघ नहीं मुसलमान होता है, न हिन्दु होता है, न बौद्ध होता है, न ईसाई। मेघ बिनसंप्रदाय होता है। ये है विष्णुतत्त्व। 'मेघवर्णं।' ऊपर से श्याम है, लेकिन पानी इतना श्वेत बरसता है। यही है 'मेघवर्णं।' दिखता है अंधेरे के समान मानो अंधकार ओढ़कर आया है मेघ लेकिन जब बिजली कौंधती है तो लगता है कि दिल तो बिलकुल प्रकाश से भरा हुआ है। ये है विष्णुतत्त्व।

विष्णु का आगे का लक्षण है 'शुभाङ्गम्।' सब अंग शुभ है। विष्णु बहुत सुंदर है। अब सब अंग सुंदर है उसमें चार हाथ जरा जमता नहीं! आदमी को दो हाथ अच्छे लगते हैं। दो हाथ में एक न हो तो हम विकलांग कहते हैं। मैं साहस करूं तो कहूंगा कि चार हाथ हो वो भी विकलांग है। दो ही होना चाहिए। इसलिए भारतीयों ने जब ईश्वर मांगा तब कहा, द्विभुज परमेश्वर। हमें दो हाथवाला ईश्वर दो, चार हाथवाला नहीं। चार हाथ क्या प्रतीक है कि दो हाथ से कमाओ और चार हाथ से बांटो, यदि तुम्हें विष्णु होना है, यदि तुम्हें वैष्णव होना है। खूब कमाओ। पैसा कमाने का हमारे सनातन धर्म ने कहीं भी मना नहीं किया है। मैं बहुत जिम्मेवारी के साथ बोल रहा हूं। व्यासपीठ से बोल रहा हूं। हर शब्द रेकोर्ड हो रहा है। जिस क्षेत्र में आप हो, खूब कमाओ। पूरी ऊर्जा लगाओ कमाई में। दो हाथ से जितना कमा सको, कमाओ। लेकिन ये भी याद रखो कि दूसरे का पालन करने के लिए जब करना है तो दो हाथ से नहीं, चार हाथ से बांटो। यही विष्णुतत्त्व है। विष्णु के सब अंग शुभ है, मंगल है। आदमी के पास धन का भंडार हो लेकिन दान का अंग नहीं है तो ये शुभाङ्गम् नहीं है, विकलांग है। संग्रह है; समर्पण नहीं है, तो विकलांग। बुद्धि

बहुत है लेकिन जो गिरते हैं, डिप्रेशन में चले गये हैं उसके पास जाकर अपना समय देकर अपनी समस्या से यदि उसको बिठाना नहीं तो हमारी बुद्धि विकलांग है। कोई डोक्टर उसके पास इतनी डोक्टरी विद्या है लेकिन मरीज़ की स्थिति देखे बिना उसका लूट का विचार हो तो डोक्टर विकलांग है, शुभाङ्गम् नहीं है। शुभाङ्गम्, प्रत्येक अंग से शुभ हो। विष्णु ऐसे हैं। जिसके सभी अंग शुभ हो, ये भी विष्णुपना का एक लक्षण है।

'लक्ष्मीकांतं।' लक्ष्मी का कांत, ये तो सांसारिक परिचय है। लेकिन एक परिचय तो ये लक्ष्मीकांत है। हम लक्ष्मी के पति नहीं। यद्यपि लोग कह दे कि लक्ष्मीपति है, धनपति है। हम लक्ष्मी के पति नहीं, गुलाम बन चुके हैं। मालिक तो विष्णु है, जो लक्ष्मी उनके पैर दबाती है। ये भी एक लक्षण है। 'लक्ष्मीकांत कमलनयनं।' जिसकी दृष्टि, जिसका नज़रिया, जिसका दृष्टिकोण कमल की तरह असंग है, लिप्त नहीं है; ये भी उसका एक लक्षण है। 'योगिभिर्ध्यानगम्यम्।' योगियों के ध्यान में बहुत अगम पड़े वो विष्णुतत्त्व है। योगी को भी मुश्किल पड़े ऐसा एक अर्थ में अगम्य जो है वो विष्णुतत्त्व है। करुणा करे तो उनके समान कोई सुगम नहीं, कोई प्रयत्न करे तो उनके समान कोई दुर्गम नहीं ऐसा। 'वन्दे विष्णु भवभयहरं।' ऐसा हे विष्णु भगवान, आप भव भय हरते हैं। हमारी भव की पीड़ को मिटाते हैं। आप समस्त लोक के नाथ है। सभी लोक के अधिपति है। चौदह ब्रह्मांड के अधिपति है। मेरी तो इतनी ही प्रार्थना है, मेरी आंख और आपकी आंख भी संसार में किसी में ये लक्षण यदि देखे तो उसको विष्णु मानने में देर मत करना। ये विष्णु है। ये ओलरेडी अवतार है, ऐसा समझना। मैं तो ऐसा ही मानता हूं साहब! आप सोचना। नौवें दिन के बाद कुछ अनुभव शुरू हो जाएंगे। कुतूहल से आओ।

नौ दिन की कथा में पहला कदम है कुतूहल, यस। और कई लोग ऐसे ही आते हैं, कुतूहल! जो निरंतर कथा सुनते हैं वो भी पहले दिन तो कुतूहल में ही होते हैं कि कौन-सी चौपाई आयेगी? तो पहले दिन कुतूहल से आओ। ये मैं भीड बढ़ाने के लिए नहीं कहता। भीड़ से मेरा रिश्ता-नाता नहीं है। हमारे मरीज़ साहब का गुजराती में एक शे'र है -

बे जणा दिलथी मळे तो एक मजलिस छे मरीज़,
दिल विना लाखो मळे एने सभा कहेता नथी।

दो दिलवाले मिल जाये तो महफ़िल है। जहां दिल ही न हो और लाखो लोग हो तो क्या वो खाक महफ़िल है! महफ़िल तो दो में जम जाती है। जलालुद्दीन रूमी ने कहा था कि दो मित्र मिल जाये उसको ही मैं परमात्म तत्त्व की झांकी मानता हूं। प्रेमपूर्ण कोई दो मिल जाये बस।

तो पहला दिन कथा का कुतूहल से आना। ये नियम नहीं, व्रत नहीं, लेकिन ये तलगाजरडी वर्गीकरण है। दूसरे दिन जो सब्जेक्ट शुरू हो जाये उसके उपर आप थोड़ा स्वाध्याय करो कि ये पंक्ति कहां आई है, क्या है; उसका आगे-पीछे का संदर्भ क्या है? तीसरे दिन पक्का करके आना कि मुझे कथा में फ्रेश होकर जाना है। ताजे-तरोजे हो के आओ। मैं और आप ताजे-तरोजे होकर 'मानस' को समर्पित हो जाये। चौथे दिन की कथा, चौथा व्रत, प्रसन्नता से सुनो। कथा के समान कोई लाभ नहीं है। सत्संग के समान विश्व में कोई लाभ नहीं है साहब! सबसे बड़ा लाभ सत्संग है। पांचवें दिन की कथा में आओ उससे पहले नक्की करो, अब कथा में रहे तब तक हम कम खायेंगे। खोराक कम करो। और पचे ऐसा खोराक खाओ ये बहुत जरूरी है। और इसी क्रम से तुम्हारी यात्रा चलेगी तो तुम्हारा पांचवें दिन की कथा में खोराक थोड़ा कम हो ही जाएगा, जो मेरा अनुभव है। छठ्ठे दिन की कथा में हरिनाम का आहार करते रहो ताकि कमजोरी न आये। सातवें दिन में जो सातवां व्रत है वो है, कथा में आओ इससे पहले ठंडी गहरी सांस लो। ये तो योग की प्रक्रिया है बाप! रातभर जो ऊंडे श्वास लेते हैं उसकी सुबह फ्रेश होती है। कथा में जब तक स्तुति चले, आप गाओ, न गाओ। हमारी पंद्रह-बीस मिनट तो स्तुति में जाती है। तब तक तुम गहरे सांस लो। सुनते समय भी आदत हो जाये। आदमी की भीतरी प्रसन्नता ओर बढ़ती है। गहरी सांस और गहरा विश्वास, ये सातवां व्रत है। आठवें दिन की कथा में आप जहां भी बैठो तब ऐसा भाव लगाओ कि आठवां दिन हो गया है, कल तो पूर्णाहुति हो जाएगी; आओ, ब्रह्मादिक नारदों के बीच में घूस जाऊं और मैं भी 'मानस' की आरती कर रहा हूं, ऐसा भाव प्रकट करो। सम्मिलित हो जाओ आठवें दिन की आरती में; मानो तुम ब्रह्मादिक लोगों के साथ आरती कर रहे हो; तुम सामान्य नहीं रहे, तुम्हारी गिनती उस ब्रह्मलोक में हो चुकी है। नौवें दिन शरणागति का व्रत लेकर जाओ कि अब शरण, बस। तो ऐसे कथा सुनने की एक विधा भी है, जो अनुभव से आई है।

तो 'मानस-बिष्नु' उसकी पहले दिन की भूमिका में आपके सामने कुछ ये निवेदन कर रहा था। पहले दिन की कथा का एक प्रवाही नियम है कि वक्ता को चाहिए जिस शास्त्र की कथा गाये उस शास्त्र का परिचय करवा दे, जिसको माहात्म्य कहते हैं। अब 'रामचरितमानस' का, 'रामायण' का परिचय किसको देना है? कौन नहीं जानता? सात सोपान में ये ग्रंथ है 'रामचरितमानस।' बाल्मीकि ने जिसको कांड नाम दिया है, बालकांड, अयोध्याकांड, अरण्य, सुन्दर, किष्किन्धा, लंका, उत्तर। तुलसी ने प्रथम सोपान, दूसरा सोपान, तीसरा, ऐसे सात सीढ़ी की यात्रा बताई है। पहला सोपान तुलसी का जो 'बालकांड' है। उसके मंगलाचरण में तुलसी ने सात संस्कृत मंत्र लिखे हैं। एक-दो मंत्र का स्मरण कर लें शास्त्र आरंभ में-

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

मंगलाचरण के पहले मंत्र में वाणी और विनायक की स्तुति की है। तुलसी के सामने भी कुछ ऊंगली उठी है कि उसने नारीसमाज की आलोचना की है! उसमें मैं अभी न जाऊं लेकिन तुलसी का शास्त्र मातृवंदना से शुरू हो रहा है उसकी नोंध कोई नहीं ले रहा! हमारी परंपरा तो ये कहती है कि सबसे पहले हम गणेश से आरंभ करते हैं। तुलसी ने इस परंपरा हटाकर के सबसे पहले गणेश नहीं, सबसे पहले सरस्वती की वंदना की। पहली माँ सरस्वती की, फिर गणेश की वंदना की। फिर शंकर-पार्वती की वंदना की और आगे बढ़े। पहले 'भवानीशंकरौ वंदे।' पहले भवानी की वंदना, फिर शंकर की। उसके बाद 'सीताराम गुण ग्राम।' पहले सीता की वंदना उसके बाद राम की वंदना। फिर वाल्मीकि, हनुमानजी की वंदना की। और फिर संस्कृत के इतने महान विद्वान होते हुए भी लोगों की बोली में लोक तक रामकथा पहुंचे; श्लोक को लोक तक पहुंचाने के लिए तुलसी बिलकुल देहाती भाषा में बोले। जितने-जितने महापुरुष हुए हैं, अपनी लोकबोली में बोले हैं। तुलसी भी ग्राम्यगिरा में शास्त्र शुरू करते हैं। पांच सोरठें लिखें। जगद्गुरु आदि शंकराचार्य ने हमको पांच देव की पूजा करने की सूचना दी वो तुलसी ने अपने वैष्णवी शास्त्र में पहले रखकर सेतुबंध किया है। गणेश की वंदना, सूर्य की वंदना, दुर्गा की वंदना, भगवान शिव की वंदना और विष्णु की वंदना। और उसके बाद गुरुवंदना से शास्त्र का आरंभ होता है।

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।

गुरुमहिमा में गुरुपद की महिमा; गुरुचरणरज की वंदना। गुरु के चरण के नखज्योति की वंदना। मेरी समझ में अथवा मुझे तो जरूरत है, जीवन में कोई गुरु चाहिए, जो दीप प्रज्वलित करके हट जाये। मेरी दृष्टि में तो दसवां अवतार ही सद्गुरु है। नौ अवतार जो आए हैं उसका सरवाला दसवां अवतार ही सद्गुरु है। तुलसी कहते हैं, मेरी आंख पवित्र हो गई गुरुकृपा से तो सब वंदनीय लगने लगे। अब किसकी निंदा करूं? ब्राह्मण देवताओं की वंदना की। साधु समाज की वंदना की। खलों की, सठों की, अच्छे की, बुरों की सबकी वंदना करते हुए तुलसी का पहला प्रकरण 'मानस' का जो वंदना प्रकरण है, उसमें 'सीय राममय सब जग जानी।' करके सबको ब्रह्ममय देखकर तुलसी ने प्रणाम किया। फिर कौशल्या माँ की वंदना, दशरथजी की वंदना, जनकराज की वंदना। भैया भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न की वंदना और फिर सीता-राम की वंदना करने से पहले तुलसी ने अपने 'मानस' में हनुमानजी की वंदना की। और प्रत्येक कथा के पहले दिन हनुमंतवंदना से हम विराम देते हैं। तो आइए, हम श्री हनुमंतवंदना 'विनयपत्रिका' की एक-दो पंक्ति से कर लें-

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।।
पवनतनय संतन-हितकारी।
हृदय बिराजत अवध-बिहारी।।

विष्णु कौन? जो आकाश की तरह व्याप्त–व्यापक है। जिसकी विचारधारा व्यापक है। जिसके धर्म की दृष्टि संकीर्ण नहीं है। हमारी सनातन हिन्दु परंपरा में, हमारी प्रवाही परंपरा में धर्म की ये व्याख्या मिलती है, गगन सिद्धांत; जिसके सिद्धांत आकाश की तरह विशाल हो, छोटे ना हो। हमारी पहचान है वो कायम निभाना लेकिन दृष्टि संकीर्ण मत करना। गांधीजी ने कहा था कि हिन्दु होने का मुझे बहुत गौरव है, लेकिन गांधी आकाश की तरह विशाल विचार देकर विश्व से गये। विशाल दृष्टिकोण ये बहुत जरूरी है। ये विष्णुपना है।

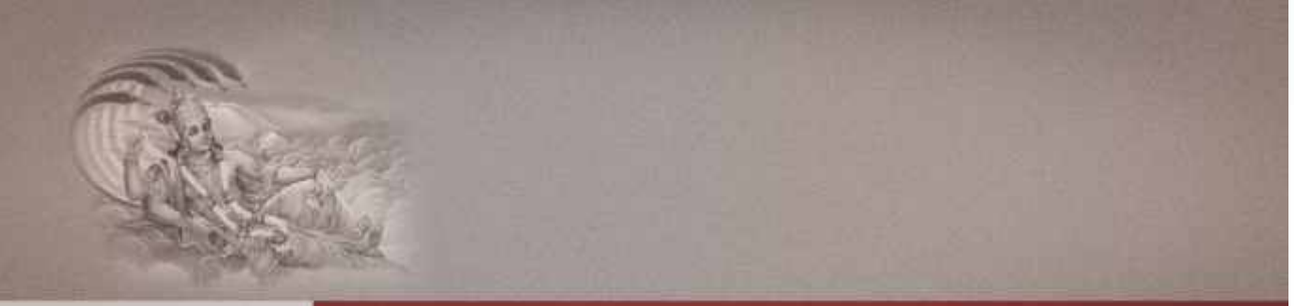

मानस-बिष्नु : २

सद्गुरु दसवां अवतार है

'मानस-बिष्नु', जिसको केन्द्र में रखते हुए हम जिन दिनो में विष्णु के अवतार के रूप में महाविष्णु, परमविष्णु राम प्रगट होनेवाले हैं रामनवमी के दिन, ऐसे विष्णु भगवान को केन्द्र में रखते हुए हमारे जीवन में विकास और विश्राम के लिए कुछ संवादी सूत्र में बातें कर रहे हैं। हमारे ग्रंथों में भगवान विष्णु को पंचधर्मा कहा है। कई एंगल से कई दिशाओं से हमें भगवान, ये नारायण, ये विष्णु, ये हरि, जो कहो, उसका दर्शन करना होगा। विष्णु के पांच धर्म माने गये। धर्म मानी तिलक करना, एक विशिष्ट वेश में रहना, धर्म के आगे-पीछे कुछ विशेषण लगा देना उसी अर्थ में 'धर्म' शब्द का प्रयोग यहां नहीं कर रहा हूं। धर्म मानी स्वभाव। शास्त्रों ने अपने स्वभाव को धर्म कहा है। और अपने स्वभाव में जीना ही स्वधर्मपालन है। 'गीता' में इसलिए भगवान कृष्ण ने कहा कि तेरे स्वभाव में तू मर जा तो भी कोई चिंता नहीं, 'स्वधर्मे निधनं श्रेय।' हिन्दु धर्म, मुस्लिम धर्म, कोई नामधारी धर्म की बात नहीं। सबकी अपनी-अपनी महिमा है। लेकिन धर्म मानी स्वभाव। तो विष्णु के पांच स्वभाव। पंचधर्मा विष्णु माना गया। 'रामचरितमानस' का दर्शन करता हूं गुरुकृपा से तो 'मानस' में भी विष्णु के पंच धर्मों की चर्चा गोस्वामीजी ने प्रारंभ में बता दी है। कल हम 'रामचरितमानस' का प्रथम सोपान 'बालकांड' उसका मंगलाचरण कर रहे थे कथा के अंतिम दौर में। उसमें तुलसी ने पांच सोरठे लिखे। इनमें पांच देवों की स्तुति की। गणेश, सूर्य, भगवान शिव, माँ दुर्गा और भगवान विष्णु।

तो 'बालकांड' के आरंभ में विष्णुपूजा करते हुए तुलसी ने पंचधर्मा भगवान विष्णु का स्मरण किया है, जो शास्त्र ने ओलरेडी कह रखा है। विष्णु के पांच स्वभाव। विष्णु का एक स्वभाव है, विष्णु श्रमधर्मा है। विष्णु श्रम बहुत करते हैं, ध्यान देना। और समाज में जो श्रम करे, पुरुषार्थ करे; प्रमाद और आलस में न जीये उस व्यक्ति में नर होते हुए कुछ नारायणपना है। और हम जानते हैं, माँ जन्म देती है बच्चे को; एक बहुत बड़ा समर्पण है। नौ मास अपने उदर में बालक को रखती है फिर जनम देती है। लेकिन बहुत कम अवधि में माँ को श्रम है। उसके बाद इस बालक को बाप पालन करता है। पालन बहुत बड़ा श्रम है पूरी ज़िंदगी। और संहार तो दो मिनट में हो जाता है। ब्रह्मा सर्जन करता है इसमें देर नहीं लगती। एक बालक का जन्म होता है, एक काल अवधि बारह महीना फिर बालक चार-पांच महीने का या तो साल-दो साल चलो, सर्जन कर्म पूरा। और इस बच्चे का पूरी ज़िंदगी पालन करना ये श्रमसाध्य है। तो ब्रह्मा सृष्टि को बनाता है ये बहुत श्रमसाध्य घटना नहीं है लेकिन विष्णु परिपालन करते हैं ये बहुत श्रमसाध्य है; बहुत पुरुषार्थ करना पड़ता है। और संहार शंकर एक मिनट में कर देता है। कुछ तोड़ना हो तो तुरंत हो जाता है। तो बाप! विष्णु श्रमधर्मा है; पालन करता है पूरे अस्तित्व का। और दुनिया में देखियेगा कि जो लोग बहुत श्रम करते हैं उसका वर्ण काला होता है; उसका रंग उज्वल नहीं होगा। इसका मतलब ये नहीं कि जो गोरा है वो श्रम नहीं करते। लेकिन श्रम करनेवालों की चमड़ी इतनी गोरी नहीं रहती। खेत में मज़दूरी करे, धूप में अपने शरीर को श्रमित करे उसकी चमड़ी काली होगी। आदमी कितना भी गोरा होगा, श्यामवर्ण होने लगेगा। तो विष्णु है श्रमधर्मा और उसका रंग है श्याम, जिसकी कल हमने चर्चा भी की 'मेघवर्णं।' और तुलसीदासजी पंचवर्णा विष्णु की चर्चा मंगलाचरण में करते हुए कहते हैं, 'नील सरोरुह स्याम।' हे विष्णु, आप नील कमल की तरह श्याम है क्योंकि आप श्रम करते हैं; आप श्रमधर्मा है।

एक सूत्र और मैं मेरे युवान भाई-बहनों को कहते चलूं कि आदमी को परिश्रम करना चाहिए। तुम्हारे भाग्य में यदि कोई श्रम नहीं है, आप कोई ऐसे क्षेत्र में हो कि आपको श्रम करना ही नहीं पड़ता तो कम से कम साधना का श्रम करो। भगवान व्यास ने प्रमाद को मृत्यु कहा है। प्रत्येक व्यक्ति को श्रम करना पड़ता है। मुझे कई लोग कहते हैं कि बापू, आप बात तो करते हैं; आपको तो कोई श्रम है ही नहीं! लेकिन बाप! चिंतन-मनन भी एक श्रम है। साधना भी एक श्रम है। साधक अवस्था में साधना करना एक बहुत बड़ा उद्यम है। पालन करनेवालों को श्रम करना चाहिए ही। विष्णु है श्रमधर्मा इसलिए विष्णु का वर्ण है श्याम। 'नील सरोरुह श्याम।' भगवान विष्णु श्यामवर्ण है लेकिन कैसे श्यामवर्ण है? नील रंग का जो कमल होता है उसके वर्ण जैसे वो श्याम है। और मेरी व्यासपीठ को गुरुकृपा से दिखता है कि वे पंचधर्मा विष्णु का प्रथम लक्षण है श्रमधर्मा। नररूप में यदि नारायण का आनंद लेना है तो हमें श्रमधर्मा होना ही चाहिए। हमें श्रम करना चाहिए। हमें हमारी ड्यूटी का निर्वहन करना ही चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति का अपना जो फ़र्ज़ है; धर्म मानी एक अर्थ होता है फ़र्ज़; धर्म मानी कर्तव्य; धर्म मानी स्वभाव; धर्म मानी अपनी आत्मा; धर्म मानी अध्यात्म। और मेरी व्यासपीठ को पूछो तो धर्म मानी सत्य, प्रेम और करुणा। तीन ही बात है मेरी दृष्टि में। पूरे समस्त धर्मो का सार तलगाजरडा की दृष्टि

में तीन ही है-सत्य, प्रेम और करुणा। तो धर्म मानी क्या? सत्य, प्रेम और करुणा। सत्यरूपी धर्म के लिए न हिन्दु मना कर सकती है, न मुसलमान मना कर सकता है, न ईसाई; कोई भी मना नहीं करता। प्रेमरूपी धर्म की कोई मज़हब मना नहीं कर सकता। और करुणारूपी धर्म का कौन विरोध करे? तो धर्म मानी ये तीन-सत्य, प्रेम, करुणा। धर्म मानी ड्यूटी। धर्म मानी कर्तव्य। मैं मेरा कर्तव्य पूरा निभाऊं; आप अपना कर्तव्य पूरा निभाये ये धर्म है।

तो विष्णु है पंचधर्मा। इनमें पहला धर्म है श्रम। हम सबको श्रम करना चाहिए। आदमी को उद्यम करना चाहिए जीवनपर्यंत। और रह तो नहीं पायेंगे; कर्म तो करना ही होगा। तो पंचधर्मा विष्णु का एक धर्म है श्रमधर्मा। 'नील सरोरुह स्याम तरुन अरुन'; ये दूसरा धर्म है। और वो है प्रेमधर्मा। प्रेमधर्म एक ऐसा है जो रोज ताजा रहता है। तरुण अरुण; तरुण मानी ताजा जुवान। प्रेम कभी वासी नहीं होता। प्रेम कायम ताजा-तरोजा रहता है। विष्णु है प्रेम। भगवान विष्णु का प्रेमधर्म पूर्ण रूप में चरितार्थ हुआ कृष्ण अवतार में। अर्जुन तो विश्वरूप दर्शन में जब कृष्ण का विशाल रूप देखा तो विष्णु को ही देख रहा है उसमें। तो प्रेमरूपा विष्णु पूरा का पूरा प्रकट हुआ है कृष्ण रूप में, कृष्ण अवतार में।

उसके बाद शब्द आता है विष्णु का तीसरा धर्म 'बारिज नयन।' वारिज मानी कमल। वारि मानी जल। बारिज मानी जल से जो प्रगट होता है कमल। जिसका नेत्र कमल समान है। विष्णु के नेत्र कमल है और कमल असंगता का प्रतीक है। पानी में रहे तो भी भीगता नहीं। विष्णु है ज्ञानधर्मा। और असंगता ये ज्ञानधर्म का संकेत है। ज्ञानी असंग होता है। जो ज्ञानी भक्त होगा वो सबके बीच में रहते हुए भी असंग होगा। ज्ञानी साधु ऐसे ही असंग रहेगा कि सामनेवाला को ऐसा ही लगेगा कि हमारा ही है। उसकी असंगता को पकड़ नहीं पायेगा। तत्त्वत: वो असंग है; वो ज्ञानधर्मा है।

विष्णु को लिए चौथा धर्म है ध्यानधर्मा। विष्णु ध्यानधर्मा है। 'नील सरोरुह स्याम तरुन अरुन बारिज नयन। करउ सो मम उर धाम।' ये पक्ष ध्यानधर्मा का लक्षण है। मैं महसूस करूं कि आप मेरे हृदय में बैठे हैं। विष्णु है ध्यानधर्मा। प्रत्येक व्यक्ति को ध्यानधर्मा ही होना चाहिए। ये कलियुग ध्यान का युग नहीं है; यद्यपि हरिनाम का युग है। ध्यानधर्मा; नर होते हुए नारायणपना महसूस करना है तो हमें भी हमारे जीवन पर ध्यान धरना है। मैंने कल आपके सामने नौ दिन की कथा के वैसे 'व्रत' तो मैंने शब्द बोल दिया; मैं व्रत-व्रत दिलवानेवाला आदमी नहीं। उसमें आखिर में मैंने पूरा करना था तो शरणागति करके वात बंद कर दी। लेकिन नौवां व्रत तो मुझे आपको ये बताना था कि भगवत्कथा में जब तक हम हो तब दो इन्द्रिय छोड़कर ओर सभी इन्द्रियों का उपवास करो। एक आंखे खुली रखो और एक कान खुले रखो। आंखों से दर्शन, कानों से श्रवण। बाकी सभी इन्द्रिय चुप हो जाये। विष्णु है ध्यानधर्मा। तुम्हारा घर का बच्चा एकाग्र होकर अपने कमरे में स्वाध्याय कर रहा है, ब्रह्मा चमत्कार करता है। पूरी सृष्टि, नदी बनाई, बाग ये सब चमत्कार लगता है। सर्जनहार चमत्कार करता है, पालनहार कोई चमत्कार नहीं करता है। वास्तविक दर्शन दिलाना है, हकीकत पेश करना है, जो पालन करता है। बाप का कर्तव्य है वास्तविक दर्शन कराये, चमत्कार नहीं। भगवान विष्णु ध्यानधर्मा है, चमत्कारधर्मा नहीं।

पांचवां धर्म है समाधिधर्मा। योगनिद्रा जिसको मानी जाती है। 'नील सरोरुह स्याम तरुन अरुन बारिज नयन। करउ सो मम उर धाम सदा छीरसागर सयन।' योगनिद्रा में विष्णु रहते हैं। ये है उसका समाधि धर्म। और शंकराचार्य मोहर मारते हैं कि 'निद्रा समाधि स्थिति।' तू तेरी निद्रा को समाधि समझ। इतनी छूट कौन आचार्य देता है, आप कल्पना तो करो साहब! शंकराचार्य भगवान ने कहा कि तेरी बुद्धि ही पार्वती है; इधर-उधर घूमने की जरूरत नहीं। तू मंदिरों में जाये मना नहीं है, तू जाये तो बहुत अच्छा लेकिन तेरी आत्मा ही शंकर है, ऐसा शंकराचार्यजी ने ओलरेडी कह दिया। 'आत्मा त्वं गिरजा मति सहचरा प्राणशरीरं गृहं।' तेरे शरीर में जो पंचप्राण है वो तेरे सहचर है, तेरे नौकर-चाकर है। मैं आपसे निवेदन कर रहा हूं दुनिया की धार्मिक विचार धाराओं को खोलकर देखिये, इतनी उदार विचारधारा कौन दे सकता है? तेरे नौकर-चाकर ये तेरे प्राण है। और जो गृहस्थ अपने नौकर-चाकर को प्राण की तरह प्यार नहीं करता उसके घर में शिव नहीं रहता, उसके घर में पार्वती नहीं रहती, उसके घर में कुछ नहीं रहता। अपने नौकर-चाकर को, अपने सहचर को प्राणतुल्य समझो। मेरे पास कोई स्वर्ग की बात है ही नहीं। मेरे पास जहां जिस सदी में हम जी रहे हैं उस सदी में कैसे हम प्रसन्न रह सके वही बात है।

मेरे पास आज एक चिठ्ठी आई है। एक श्रोता ने लिखा है, 'बापू, मुझे आपसे यह जानना है कि जैसे कभी तबियत खराब हो जाने के बजह से हम स्नान नहीं कर सकते हैं तो क्या बिना स्नान 'हनुमानचालीसा' का पाठ कर सकते हैं? 'गीता' और 'सुन्दरकांड' का पाठ कर सकते हैं?' तबियत खराब हो तो स्नान करने की जरूरत ही नहीं है। आप जरा भी चिंता न करो। दंतमंजन करो, हाथ-पैर धो लो, आंखे धो लो, हाथ धो लो। स्नान करने की जरूरत नहीं। तबियत पहले संभालो। 'हनुमानचालीसा' कर सकते

हैं। मुझे पूछा है तो मेरी तो छूट है। कोई दूसरे आदमी को पूछो और मना करे तो तुम्हारी तुम जानो। आप कर सकते हैं। कोई नियमावली नहीं है। और फिर भी आपको किसी धर्माचार्य ने सिखा दिया हो कि बिना स्नान न करे तो मैं इतना ही कहूंगा, तबियत ठीक न हो तो स्नान मत करियेगा। आपके आंगन में तुलसी का गमला हो तो तुलसी को छू लो, स्नान हो गया। अथवा तुलसी के गमले से एक छोटी-सी मिट्टी का कण लेकर अपने टाल में ऐसा छुआ दो स्नान हो गया। अरे छोड़ो, तुम्हारे घर में छोटी बेटी हो न पांच-सात साल की वो बेटी तुम्हारे पास आये उसके सिर पर हाथ रखकर के तुम्हारे सिर पर रखो, स्नान हो गया। छोटी कन्या ये हमारी गंगधारा है। तबियत ठीक न हो; सूरज निकला है सुबह-सुबह तुम्हारे आंगन में, तुम उनके सामने दो मिनट खड़े रह जाओ, सूर्य स्नान करा देता है। सूर्य में स्नान हो जाएगा। तुलसी की बात आई तो मैं ये जरूर कहूंगा, मेरे पास ऐसे प्रश्न आते हैं; तुलसी के पत्र को सूर्यास्त के बाद तोड़ना मत। तुलसी ही क्यों, किसी भी पेड़-पौधे का पत्ता मत तोड़ना। उसको हिलाना तक नहीं क्योंकि रात्रि उसकी साधना का काल होता है। हम ही साधना करते हैं ऐसा नहीं, पेड़-पौधें भी साधना करते हैं।

तो यहां धर्म का अर्थ स्वभाव है। और मैं ज्यादा पसंद करता हूं धर्म का अर्थ स्वभाव। मेरे तुलसी ने भी धर्म की कई परिभाषा की। स्मृतिकार भगवान आदि मनु ने भी धर्म के दस लक्षण बता दिये हैं। 'रामचरितमानस' के 'लंकाकांड' में आप जाये तो तुलसीदासजी धर्मरथ का निरूपण करते हैं वहां दस से भी ज्यादा धर्म लक्षण बता दिये तुलसीदासजी ने। लेकिन मुझे बहुत निकट पड़ता है, धर्म मानी स्वभाव। तुम्हारे स्वभाव से कोई विरुद्ध तुम्हारा स्वभाव बदलने की कोशिश करे तो समझना, ये तुम्हारा धर्मांतरण करा रहा है। स्वभाव में जीयो। स्वभाव ही धर्म है। और पांच-पांच स्वाभाविकता जिसके जीवन में हो ऐसे नर को नारायण समझकर के प्रणाम करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं। तो शास्त्रों में भगवान विष्णु को पंचधर्मा कहा।

जो विषय पर चर्चा चल रही है उसी विषय के अनुरूप एक ओर जिज्ञासा किसी श्रोता ने पेश की है कि बापू, कल आपने कहा कि विष्णु के दस अवतार है। नौ अवतार तो बुद्ध तक हो चुके हैं। दसवां अवतार कल्कि अवतार जो होनेवाला है; आपने कल कहा कि व्यक्तिगत रूप में मैं ये मानता हूं कि कोई सद्गुरु ही दसवां अवतार है। उस पर विशेष प्रकाश डाले। मैंने बहुत ध्यानपूर्वक कहा है; बहुत सोच समझकर कहा है; प्रगाढ़ अनुभव के बाद कहा है। अब तक मैंने ये निवेदन नहीं किया। ये पहली बार भोपाल का मेरा निवेदन है ये कि दसवां अवतार सद्गुरु है। और मेरी बात से वो शब्द जो मैंने जोड़ा भी कि हमारे गुजरात में ऐसा कहते हैं कि नकलंक जो है, ये रामदेवपीर को भी नकलंक कहते हैं। 'नकलंक' तो एक अपभ्रंश है, लेकिन मूल शब्द तो 'निष्कलंक।' निश्छल कौन हो सकता है? हम और आप तो कुछ न कुछ छल करते हैं, कपट करते हैं, धोखा करते हैं, घमंड करते हैं। हम और आप क्या नहीं कर रहे हैं? बुद्धपुरुष-सद्गुरु ये मेरी व्यासपीठ की दृष्टि में दसवां अवतार है। इसलिए मोरारिबापू को दसवें अवतार की प्रतीक्षा नहीं। दसवां अवतार हो चुका। कबीर आ गये, हमारे सामने तुलसी आ गये, नानक आ गये, बाई मीरां आ गई, नरसिंह मेहता आ गये, भगवान महावीर आ गये, ज्ञानेश्वर आ गये, नामदेव आ गये, तुकाराम आ गये, रामकृष्णदेव आ गये, रमण महर्षि आ गये, महर्षि अरबिंदो आ गये। ये क्या अवतार नहीं है साहब! मैं सद्गुरु को दसवां अवतार इसलिए कह रहा हूं कि नौ अवतारों में जो-जो विशेष क्षमता होती है वो एक बुद्धपुरुष में सभी क्षमताएं आ जाती है। बुद्ध को कभी आप नाचते हुए नहीं देख पाओगे। कृष्ण को नाचते हुए देखोगे। है एक ही विष्णु के अवतार लेकिन वहां नृत्य है, बुद्ध में नहीं है। प्रत्येक अवतार के अपने विशेष गुण है। एक में है तो दूसरे में नहीं है। राम में बोध है, क्रोध नहीं है। परशुराम में क्रोध है, बोध नहीं है। कमियां सब अवतारो में है। ये सभी विशिष्ट लक्षण का संग्रह एक सद्गुरु होता है। जितने-जितने आचार्य हुए हैं, क्या अवतार नहीं है दसवें? शंकराचार्य, रामानुज, निम्बार्क, वल्लभाचार्य। मेरी दृष्टि में ये सब सद्गुरु के रूप में जो आये ये दसवां अवतार है।

हमारे मदन भैया मुझे लेने आये तो हवाई जहाज में कह रहे थे, बापू, आप जो ये बात कहते हैं वो बहुत अच्छी लगती है। उसको बुद्धि और दिल से कैसे समझे? वो मजबूर साहब कहा करते थे कि 'सबसे बड़ा रोग। क्या कहेंगे लोग?' दो ही पंक्ति में बहुत बड़ा महाकाव्य है। सबसे बड़ी दुनिया में कोई बीमारी है तो यही है कि हमारे बारे में लोग क्या कहेंगे? बस ये दिमाग में लोग सो नहीं पाते! मैं मदन भैया से बात कर रहा था कि भैया, किसी ने कुछ कह दिया तो बुद्धि से सोचोगे तो बुद्धि तुम्हें हजार नखरा करायेगी! कहेंगे कि उसने कहा है तो दो टूक जवाब दे दो! क्या कंगन पहन रखे हैं? बोल दो उसको। बुद्धि तो ये कहेगी लेकिन दिल क्या कहेगा? दिल ये कहेगा कि दुनिया तो कहती रहेगी, किन-किन मुंह को चुप करने जाओगे? हरि भजो, हरि भजो, हरि भजो। बुद्धि कहती है, ये करो; दिल कहता है, ये। तो हम करे क्या? तो बड़ा प्यारा शे'र खुमार बाराबंकवी का-

अक्ल और दिल जब अपनी-अपनी कहे खुमार,
तब अक्ल की सुनिये और दिल का कहा कीजिए।

दिल कहे वो करने लगो और अक्ल को सुनो। हां, आपने कहा ठीक है, कहा लेकिन करो हृदय कहे सो। बुद्धि तो कहेगी, उसने ऐसा कहा दो! लेकिन किन-किन के सामने जवाब देने जाओगे? तो लोग कहेंगे। यहां किसके बारे में लागों ने कोमेन्ट नहीं की है? जैसे अवतार होते हैं वैसे क्रिटिक लोगों के भी अवतार होते हैं, जो यही काम किया करते हैं! उसको ओर कुछ काम करना ही नहीं होता! करने दो। जिसको अध्यात्म में प्रवेश करना है, जिसको किसी भी स्थिति में हर हाल में प्रसन्न रहना है, उसको लोकमान्यता पर ज्यादा आधार मत रखना। लोकमान्यता बदलती रहती है।

तो बाप! उपर के जो नौ अवतार है, पूर्व नौ अवतार वो सद्गुरु में समाविष्ट है। ये नौ अवतार मैं कहीं संगति हां उसको उत्क्रांतिवाद कह दो तो पहले मछली, फिर कछुआ, फिर वराह, फिर आधा मनुष्य, आधा पशु नृसिंह, फिर ये वामन, फिर परशुराम, फिर राम, फिर कृष्ण, फिर बुद्ध ये जो-जो एक आध्यात्मिक उत्क्रांतिवाद है। तो सद्गुरु है दसवां अवतार। बुद्धपुरुष में आगे के विशिष्ट लक्षण जो अवतार के हैं वो आप देख पाओगे। मत्स्यावतार यहां पहले हुआ। भगवान मछली बनकर आये। अब मछली के कुछ विशिष्ट जो लक्षण है। मत्स्यावतार का लक्षण है, पानी में रहकर प्यासे रहना। चौबीस कलाक हरिनाम रटनेवाला कोई बुद्धपुरुष भी प्यासा रहता है कि अभी भी तृप्ति नहीं हुई, अभी भी तृप्ति नहीं हुई। हम बार-बार कथा सुनेंगे तो लोगों को हंसी आयेगी कि एक बार कथा सुन लेते, बात खतम! लेकिन ये प्यास कभी तृप्त न हो। कथा में रहने से ओर प्यास बढ़े, ये एक लक्षण है। बुद्धपुरुष निरंतर हरि स्मरे, निरंतर ध्यान धरे जो-जो उनका प्रदेश हो, जो-जो उनका मार्ग हो लेकिन उसको तृप्ति नहीं होती। कृतकृत्य हो जाने के बाद भी प्यास बनी रहे कि अभी ओर गाऊं, अभी ओर नाचूं। मछली का गुण है। मछली का एक दूसरा लक्षण है वो तैरती रहती है। निरंतर तैरती है मछली। सद्गुरु वो है जो कभी आलसी नहीं होते; निरंतर स्फूर्त, रोज नया तरोतराजा। तीसरा लक्षण मछली का होता है, सामने प्रवाह में तैरना। मछली ही तैर सकती है। हाथी बह जाएगा, मछली तैर जाएगी। बुद्धपुरुष वो है, समाज का तथाकथित जो वहेण होता है उसके सामने जाता है; साहसी होता है। बुद्धपुरुष वो है जो धारा के सामने चले। ये उनका लक्षण है। चौथा एक लक्षण मछली का मुझे कहना है, मछली कभी चमत्कार नहीं करती।

मेरी कथा सुननेवाले दो वस्तुओं का ध्यान रखे मेरे भाई-बहन, घमंड अच्छा नहीं, लेकिन पाखंड न करे। पाखंड बहुत खतरनाक है। घमंड तो आदमी में कुछ है तो करे चलो ना; ये प्रशंसनीय नहीं है, लेकिन क्षम्य हो तो है। जिसके पास सत्ता है तो सत्ता का घमंड करे तो ये कोई सराहना करनेयोग्य नहीं लेकिन क्षम्य है। किसी में ताकत है, भुजबल है, तो वो गुरूर करे; यद्यपि प्रशंसनीय नहीं लेकिन क्षम्य तो है। किसी के पास दौलत है तो करे घमंड। सराहनीय नहीं लेकिन क्षम्य तो है। लेकिन हमारे जैसे लोग तो कुछ है भी नहीं और घमंड-घमंड किये जाये! फिर भी व्यासपीठ जिम्मेवारी के साथ कहती है कि घमंड बेहतर है पाखंड से। पाखंड बहुत बुरा है।

दूसरा अवतार हुआ हमारे यहां कछुए का। कछुए के दो लक्षण। कछुआ की पीठ बहुत पक्की होती है और 'गीता' के न्याय से और हमारी नज़रों के न्याय से भी कछुआ जब चाहे अंग बाहर निकलता है, अंग संकीर्ण कर अंदर संकोर लेता है। कछुए अवतार का ये दो लक्षण ही पकड़ो। सद्गुरु वो है जिसकी पीठ बहुत मजबूत होती है, लेकिन दिल बड़ा नाजूक होता है। सहन बहुत करेगा लेकिन संवेदना बहुत होगी। पीठ का धर्म है सहन करना। दिल का धर्म है संवेदनशील रहना। ये बुद्धपुरुष का लक्षण है। सहेगा बहुत। कोई भी साधु बहुत सहेगा। जितने भी साधु संसार में आये होंगे जो यद्यपि साधु है तो उसके प्रारब्ध में एक लिखी बात होती है, सहन बहुत करना पड़ता है। बाप! पीठ जिसकी मजबूत हो, घाव सहन करे लेकिन दिल उनके हित के लिए ये दुआ करता रहे कि अल्लाह उसका ठीक करे, अल्लाह उसका भला करे। तो बहुत मजबूत होते हैं बुद्धपुरुष। ये लक्षण कच्छप अवतार का है। और दूसरा, बुद्धपुरुष जब चाहे विस्तार कर ले और चाहे अपने अंगों को, अपनी कामनाओं का विस्तार भी कर सकता है और सर्वस्व का अपने अंदर समाहित भी कर सकता है। पतंजलि योगसूत्र में उसको प्रत्याहार कहते हैं। समेट लेता है, सिकुड़ लेता है। तो सहन करना और संवेदनशील रहना। लगे कि जगत के हित में विस्तार करना है तो विस्तार करे। लगे कि बहुत बोलने की जरूरत है तब बहुत बोले और लगे कि नहीं, अब बोलने की जरूरत नहीं तब ऐसा चुप रहे कि लगे कि मानो ज़िंदगी में कभी बोले ही नहीं! चुप रहे तो अस्तित्व शांत हो जाये। और बोले तो आकाश में गुंज होने लगे। कच्छप अवतार का एक तीसरा लक्षण, जब समुद्रमंथन किया देवासुर ने तब कच्छप की पीठ पर मेरू मंदराचल को रखा गया था और समंदर का मंथन किया था। तो आप कल्पना करो कि मंदराचल को जिसकी पीठ पर रखकर मंथन किया तो उसकी पीठ कितनी बड़ी धारक तत्त्व रहेगी? सद्गुरु हम सब का धारक है। हम चाहे नासमझी से कुछ भी करे लेकिन वो हम सबको धारे हुए हैं। हमको मथ डाले, कसौटी करे कि देखो, रत्न निकलता है, क्या-क्या निकलता है! अपने को निशान बनाकर उसका मंथन शुरू करे। ये लक्षण जिसमें मैं और आप देखे उसको विष्णु का दसवां अवतार समझना।

तीसरा वराह अवतार। वराह अवतार के कुछ लक्षण बहुत अच्छे हैं, बहुत अच्छे। सबसे पहला वराह का लक्षण है स्वभाव नहीं छोड़ता; कभी भी स्वभाव नहीं छोड़ेगा। तुलसी कहते हैं-

एक सूल मोहि बिसर न काऊ।

गुर कर कोमल सील सुभाऊ।।

तुलसी कहते हैं, एक चुभन मैं कभी भूल नहीं पाता कि मेरे गुरु का स्वभाव अत्यंत कोमल। और उनके शील के समान कहीं मैंने शील नहीं देखा। वराह अवतार के ये भी लक्षण, ये विशिष्टता स्वभाव की विशिष्टता। बुद्धपुरुष अपने स्वभाव में जीते हैं, इसलिए वो विष्णु का दसवां अवतार।

चौथा अवतार है नृसिंह अवतार। आधा सिंह, आधा नर। बुद्धपुरुष को देखियेगा, कभी-कभी ये कठोर भी दिखता है, गर्जना करता है। और फिर सुकोमलता भी इतनी होती है। हिरण्यकशिपु को मारने के लिए दहाड़ा नृसिंह और जब प्रहलाद को गोद में लिया तो क्षमा मांगता है, तेरे पास आने में मुझे विलंब हो गया; तो हे वैष्णव, मुझे माफ़ कर देना ऐसा कहकर प्रहलाद से क्षमा मांगी। तो कोमल और कराल दोनों का मिश्रण होता है बुद्धपुरुष। पिटीपिटाई बातों को तोड़ने में प्रासादिक आक्रमकता होती है उसकी क्योंकि इसको ध्वस्त किये बिना नव निर्माण असंभव है। और आश्रित के प्रति इतनी ही संवेदिता, इतना ही करुणाभाव। नृसिंह के जो लक्षण है वो बुद्धपुरुष हमारे यहां हुए हैं उनमें हम दिखते हैं।

पांचवां अवतार है वामन अवतार। छोटा, वामन। वामन का अर्थ है बटुक; ऊंचाई ज्यादा नहीं है। बुद्धपुरुष की ऊंचाई बहुत होती है लेकिन रहता है छोटा विनम्र अपने जैसा। विशेषता का पता ही न लगने दे कि वामन में विराट छुपा हुआ है! लेकिन वो दिखाई नहीं देता। समय पर दिखाई दे। बलि की बात ओर है लेकिन वो छोटा बनकर मांग भी कितनी उसकी! तीन कदम पृथ्वी दे दो। मांग भी छोटी, ऊंचाई भी छोटी, एकदम सामान्य स्थिति। सद्गुरु के भी ये लक्षण माने गये। विराट क्षमता अंदर होते हुए भी जो अपने आपको छोटा-सामान्य बनाये रखे वो वामन अवतार का लक्षण। हम और आप कई सद्गुरु में देखते हैं; जो हुए है; होंगे भी कोई; होते रहेंगे। ये वामन अवतार है।

छठ्ठा अवतार है परशुराम। परशुराम का अवतार शास्त्रों में आवेश अवतार माना है। जैसे लोहे का रंग काला है लेकिन भट्ठी में डालो तो उसमें अग्नि इतनी मात्रा में प्रवेश कर जाती है तो रंग लाल हो जाता है। लोहे का अपना मूल रंग लाल नहीं है, काला है। लेकिन अग्नि अंदर आने से वो लाल हो जाता है। उसमें अग्नि का आवेश कुछ समय रहेगा फिर अग्नि निकल जाएगी तो लोहा काला हो जाएगा। परशुराम ऐसा अवतार है। कुछ समय के लिए उसमें आवेश है। मैं ये नहीं कहता कि सद्गुरु में आवेश होता है। सद्गुरु शाश्वत अखंड धारा में रहते हैं। लेकिन परशुराम का जो लक्षण है; वो बहुत बड़े उदार दाता है, दानी है। जितनी बार उसने पृथ्वी नक्षत्री की, ब्राह्मणों को दे दी। तुलसीदासजी ने 'लंकाकांड' में लिखा है, 'दान परसु।' उसका वो कुहाडा है वो दान है। बुद्धपुरुष बड़े दानी होते हैं। सद्गुरु समान कोई दाता नहीं।

सातवां राम अवतार। राम तो राम है। उसके गुण, उसके शील। राम तो सबकुछ है, लेकिन मैं एक ही सूत्र कहकर आगे बढ़ूं। राम अवतार का सबसे विशिष्ट लक्षण है सत्य, बस। 'रामो विग्रहवान धर्म साधु सत्य पराक्रम।' राम सत्यमूर्ति है। सद्गुरु में जो 'सद्' शब्द है वो सत्यवाचक शब्द है। सद् मानी सत्य। हमें लगे कि इस आदमी में असत् हो ही नहीं सकता। पहली मुलाकात में प्रतीति हो जाये कि इसमें असत् हो ही नहीं सकता, तब समझना कि विष्णु का दसवां अवतार है।

आठवां अवतार भगवान कृष्ण का। कृष्ण है प्रेममूर्ति, जिसकी आंखों में प्रेम, जुबां से प्रेम; मानो प्रेम ने ही देह धारण किया है। प्रेम ही सब कुछ है जिसका। सद्गुरु में प्रेम लबालब होता है इसलिए वो विष्णु का दसवां अवतार है। नौवां अवतार है बुद्ध। बुद्ध की करुणा। सातवें अवतार, आठवें अवतार, नौवें अवतार में फिर सत्य-प्रेम-करुणा कि त्रिपदी लग जाती है। करुणा से जो भरा है वो विष्णु का नौवां अवतार है और दसवां अवतार जो होना है अथवा तो निष्कलंक, कल्कि अथवा तो नकलंक, जो लोग बोले, जो जिसकी रुचि। जो निष्कलंक है; नखशिख निष्कलंक है। इसलिए मैंने बहुत जिम्मेवारी के साथ और साहस के साथ कहा कि ईश्वर भी पवित्र नहीं होता इतना पवित्र बुद्धपुरुष होता है। निष्कलंक जिसका जीवन हो। जिसको खुद को महसूस हो और अस्तित्व जानता हो, निश्छल। सद्गुरु में एक भी छल नहीं है।

मेरी समझ में सद्गुरु ये विष्णु का दसवां अवतार है। सभी विशिष्टता एक जगह आती है। कभी एक ही विग्रह में सभी चेतना निवास करती है। एक ही जगह सभी चेतना आ जाती है। कई बुद्धपुरुष हम ऐसे देखते हैं कि उसको देखे तो लगता है, ये तो कबीर लगता है; ये तो नानक लगता है; ये तो रामकृष्ण लगता है। विश्व की परम चेतनायें कभी-कभी एक विग्रह में आ जाती है। कोई आम्रकुंज जैसा होता है। विश्वामित्र को भी ठहरने की इच्छा हो जाती है। वशिष्ठजी को भी ठहरने की इच्छा हो जाती है। शतानंद को भी ठहरने की इच्छा होती है। कोई-कोई कुटियां ही ऐसी होती है कि सबका मन लालायित हो जाये कि यहां ऊतारा मिल जाये तो अच्छा। वैसे कोई पिंड बनता है ब्रह्मा की सृष्टि में वहां सभी चेतना निवास करने के लिए लालायित होती है।

मेरी समझ ऐसी बनी है कि सद्गुरु सभी अवतारों का मेल है, जिसमें पूर्व नौ अवतार एक साथ ओल इन वन, सब एक में समाहित है। उसको मेरी व्यासपीठ दसवां अवतार मानती है। और फिर अपनी-अपनी श्रद्धा के अनुकूल हम अपने बुद्धपुरुष में देख सकते हैं। मुझे यदि देखना है तो मैं मेरे दादा में देखूंगा। मेरे लिए ये दसवां अवतार है। मेरे लिए ये पघडी दसवां अवतार है। दुनिया लाख नया अवतार लाये, मुबारक! सद्गुरु ये मेरी समझ में विष्णु का दसवां अवतार है।

तो 'रामचरितमानस' के आधार पर विष्णु की संवादी चर्चा हम कर रहे हैं। तीन प्रकार के महत्त्व के वाद्य में एक वाद्य माना गया है विष्णुवाद्य। और गजाननजी, मृदंग अथवा तो पखावज उसको विष्णुवाद्य कहा है; सनातन परंपरा में ये विष्णुवाद्य है। विष्णु खंड है। जैसे तीन लोक; जैसे शिवलोक, ब्रह्मलोक और विष्णुलोक- वैकुंठ ये तीन खंड में भी विष्णु का नाम है। विष्णु का एक नाम है 'गो' शब्दकोशों में। 'गो' का अर्थ होता है आकाश। तो विष्णु मानी आकाश। 'गगन सदृशं।' गो का अर्थ होता है इन्द्रियों का समूह। और विष्णु का एक अर्थ गो है इसका मतलब है इन्द्रियों के समूह पर जो कन्ट्रोल करता है उसको हम ऋषिकेश कहते हैं। और ऋषिकेश को विष्णु कहते हैं। विष्णु मानी ऋषिकेश, जो कृष्ण का नाम है। गो को पृथ्वी भी कहते हैं। और विष्णु पृथ्वीपालक है, त्रिलोक के पालक है। गो को दिशायें भी कहते हैं। गो को वृक्ष भी कहते हैं। गो धरु, गो तरु, गो किरण; गो को प्रकाश भी कहते हैं। विष्णु प्रकाशपुंज है। तो विष्णु भगवान का बहुत विशद विश्लेषण हमारे ग्रंथों में है। और 'विष्णुसहस्रनाम' तो गजब है! विनोबाजी ने उस पर टिप्पणी की है। हमारे सांई मकरंद आदि ने भी उस पर टिप्पणियां की है।

शेष समय जो बचा है उसमें कथा का थोड़ा क्रम आगे बढ़ाऊं। तो कल पहले दिन की कथा में मंगलाचरण में वंदनाप्रकरण में हनुमानजी तक की वंदना का जो क्रम है 'मानस' का। उसके बाद तुलसीजी ने भगवान राम के अवतारकार्य के सभी साथियों की वंदना की यानी परिचय दिया। उसके बाद माँ जानकी और भगवान राम की वंदना की। वहां भी मातृशरीर को प्रधानता दी। पहले माँ की वंदना की। माँ जानकी की वंदना करते हुए तुलसी ने कहा, इनके चरण की मैं वंदना करता हूं जिसकी कृपा से मुझे बुद्धि तो मिली है लेकिन माँ की कृपा से मेरी बुद्धि निर्मल हो जाये। दुनिया में बुद्धि तो सबको मिली है लेकिन निर्मल बुद्धि नहीं है। तो माँ के चरण की पहले वंदना। कुछ बातों को विना समझे लोग आलोचना करते हैं कि तुलसी ने नारी की आलोचना की! तुलसी ने हमारी उपनिषदी परंपरा का निर्वाह किया। 'मातृदेवो भव।' उसके बाद 'पितृदेवो भव।' तुलसी ने वही क्रम लिया। तो जानकी की वंदना, फिर राघव की वंदना। फिर तुलसीजी ने कहा, तत्त्वत: सीता-राम एक ही है। तो सीताराम की वंदना की। फिर आगे तुलसी भगवान के पवित्र नाम की वंदना करते हैं। ईश्वर के कई नाम है। इवन राघवेन्द्र के भी कई नाम है। लेकिन तुलसी कहते हैं, राम के कई नामों में से मैं इनमें जो रामनाम है उसका मूल नाम, उसकी मैं वंदना करता हूं। तुलसी तो वहां तक कहते हैं कि त्रेतायुग में भगवान राम ने जो-जो लीला की वो आज कलियुग में उसका नाम कर रहा है; जैसे जीवों के लिए एक प्रभु का नाम ही अवलंबन है। मेरे भाई-बहन, हमें किसानी करनी है, मज़दूरी करनी है, दफ्तर-ओफिस-स्कूल जाना है; इन सबमें से जब भी समय मिले, प्रभु का नाम। कलियुग में ओर कोई साधन नहीं। और कोई भी नाम लेने की छूट है। मैं हर कथाओं में कहता हूं कि मेरा कोई आग्रह नहीं है आप 'राम-राम' जपो। यद्यपि यहां महिमा रामनाम की है लेकिन तुलसी ने भी भेद नहीं किया। तुलसी वहां तक लिख देते हैं कि स्वयं राम अपने मुख से अपने नाम की महिमा नहीं गा सकते। कुल मिलाकर इतना ही कि नाम का आश्रय खूब करना।

बुद्धपुरुष–सद्गुरु ये मेरी व्यासपीठ की दृष्टि में दसवां अवतार है। इसलिए मोरारिबापू को दसवें अवतार की प्रतीक्षा नहीं। दसवां अवतार हो चुका। कबीर आ गये, हमारे सामने तुलसी आ गये, नानक आ गये, बाई मीरां आ गई, नरसिंह मेहता आ गये, भगवान महावीर आ गये, ज्ञानेश्वर आ गये, नामदेव आ गये, तुकाराम आ गये, रामकृष्णदेव आ गये, रमण महर्षि आ गये, महर्षि अरबिंदो आ गये। ये क्या अवतार नहीं है साहब! जितने–जितने आचार्य हुए हैं, क्या अवतार नहीं है दसवें? शंकराचार्य, रामानुज, निम्बार्क, वल्लभाचार्य। मेरी दृष्टि में ये सब सद्गुरु के रूप में जो आये ये दसवां अवतार है।

मानस-बिष्नु : ३

सद्गुरु दसवां अवतार वो है जो निरंतर गति करता है

'रामचरितमानस' में भगवान विष्णु का दर्शन किस रूप में है, उसको 'मानस' की कथा को भूमिका बनाकर के हम भगवान विष्णु का दर्शन कर रहे हैं इन पवित्र नवरात्र में। मेरे पास बहुत-सी जिज्ञासाएं है। दो-तीन जिज्ञासाएं बिलकुल कोमन है और सबके मन में ये जरा दुविधा है कि विष्णु के अवतार राम है कि फिर 'मानस' में जैसे कहा कि राम से कई विष्णु निर्मित होते हैं, सच क्या है? क्योंकि यही 'मानस' में लिखा है कि-

संभु बिरंचि बिष्नु भगवाना।
उपजहिं जासु अंस तें नाना।

वो परम कोई तत्त्व है। राम एक है, विष्णु अनेक है, ऐसा भी 'मानस' में प्रतिपादन है। और जिन चौपाईयों का आश्रय लिया है वहां ये बात कही गई कि 'बिष्नु जो सुर हित नरतनु धारी।' भगवान विष्णु ने देवताओं के लिए मनुष्य का रूप धारण किया उसीका नाम राम है। तो ये दुविधा स्वाभाविक है सबके मन में कि असल में क्या है? पानी और बर्फ़ जैसी बात है। जल है तो जल से बर्फ़ निर्मित होती है, आकारित होती है। जल निराकार है। पानी को जिस पात्र में हम डालते हैं, पानी उसी आकार का हो जाता है। पात्र की दीवारें टूट जाती है, पानी फिर निराकार हो जाता है। पानी का अपना कोई आकार नहीं लेकिन पानी जब घनरूप लेता है विज्ञान के अनुसार तापमान घटता-घटता झीरो से भी माईनस होने लगता है तब वो ही जल नज़रों के सामने बर्फ़ बन जाती है। वैसे निराकार से साकार। फिर बर्फ़ पिघल जाती है तो फिर पानी हो जाता है; फिर निराकार। लेकिन यहां समस्या ये है कि भगवान राम से विष्णु पैदा होते हैं कि विष्णु से राम? तत्त्वत: बात एक है लेकिन अपनी-अपनी निष्ठा और अपनी श्रद्धा के कारण लोग जहां अपनी श्रद्धा है वहां ज्यादा बल देते हैं। अब 'भगवद्गीता' में जाइए, अवतार-दसावतार की परंपरा में विष्णु का अवतार कृष्ण है। और भगवान कृष्ण 'गीता' में ये भी कहते हैं कि -

आदित्यानामहं विष्णुर्ज्योतिषां रविरंशुमान्।
मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी।।

कृष्ण कहते हैं कि ग्यारह आदित्य मैं नहीं हूं, लेकिन बारह आदित्य में जो ये विष्णु एक आदित्य है वो मैं हूं। तो ये जल और तरंग की तरह है, या तो जल और बर्फ़ की तरह है। अब भगवान चतुर्भुज विष्णु में जिसकी अधिक निष्ठा है वो ये मानते हैं कि राम विष्णु का अवतार, कृष्ण का अवतार। ये परंपरा ठीक भी है। और तुलसी का पूरा समर्पण राम में है तो वो कहते हैं, राम परमतत्त्व है; उससे विष्णु पैदा हुए। विष्णु और राम को तकरार नहीं है। हमें और आपको तकरार है! विष्णु और राम को कोई विवाद नहीं। ये दोनों बिलकुल वैकुंठ में बैठकर केशरवाला दूध पीते हैं! तकलीफ़ है हम चाय पीनेवालों को! वहां कोई भेद नहीं। तत्त्व एक है।

मैं बहुत सालों के बाद बोल रहा हूं। इस दुविधा सब खतम हो जाये इसलिए मैंने बहुत साहसपूर्ण वक्तव्य दिया है मेरी दृष्टि में। आप तो श्रद्धा से मान लेंगे लेकिन उस पर डिबेट हो सकती है। शुरू हो चुकी है कि बापू ने ऐसा कैसे कह दिया कि गुरु ही दसवां अवतार है! सब असमंजसता मिट जाये इसलिए। क्योंकि विष्णु का अवतार राम है कि राम से विष्णु प्रकट हुए ये तकरार से तो फिर ओर नई तकरार कि राम है वो ही कृष्ण है कि कृष्ण है वो ही राम है? राम है वो ही बुद्ध है? बुद्ध है वो ही मीन है? मीन है वो ही कच्छप है? कच्छप है वो ही वराह है? बहुत मुश्किल है! सभी का समन्वित रूप है कोई बुद्धपुरुष।

एक युवक ने आज ये भी पूछा है कि बापू, आप कहते हैं कि गुरु दसवां अवतार है लेकिन हम उसको पहचाने व्यक्ति के रूप में कैसे? पहली बात तो ये समझो कि गुरु को केवल व्यक्ति समझोगे तो व्यक्तिपूजा शुरू हो जाएगी। और व्यक्तिपूजा अच्छी नहीं है। कोई भी व्यक्ति में कमजोरियां होती ही है, याद रखें। मैं आपको कहूं कि आदमी में कमजोरियां

होती है। इसलिए मैं मेरे साधक भाई-बहनों को कहूं कि गुरु को व्यक्ति के रूप में मत देखो। हां, ये व्यक्ति के रूप में हो सकता है, लेकिन व्यक्ति नहीं। ये हमारे जैसे आकार में हो सकता है लेकिन ये ब्रह्मा की सृष्टि का आदमी नहीं। ये ब्रह्मा की सृष्टि का अपवाद है। तुलसी कहते हैं, कुछ हस्तियां अपने आप प्रगट होती है, विधाता के सर्जन का हिस्सा नहीं है। इसलिए राम को देखकर बूढ़े ब्रह्मा भी चकित है 'मानस' में कि मैंने पूरी सृष्टि बनाई लेकिन ये राम कौन है, जो मेरी रचना में आता नहीं! ये है कौन? और कभी-कभी शास्त्रज्ञ जवाब नहीं देते ऐसा जवाब ग्रामीण लोग देते हैं! इसलिए 'मानस' का एक देहाती कहता है कि 'आपु प्रगट भये बिधि न बनाये।' ये राम ब्रह्मा, आपकी सृष्टि का हिस्सा नहीं है, वो स्वयं प्रगटे। तो दीक्षित दनकौरी की ग़ज़ल -

या तो कुबूल कर मेरी कमज़ोरियों के साथ,
या छोड़ दे मुझे मेरी तन्हाइयों के साथ।

हे परमात्मा, तू मेरी कमजोरियों के साथ मुझे स्वीकार, या तो मुझे छोड़ दे।

लाज़िम नहीं कि हर कोई हो कामयाब ही,
जीना भी सीख लीजिए नाकामियों के साथ।

कभी असफलता के साथ भी जीने की आदत डालनी चाहिए। कल का निवेदन याद करो, कोई व्यक्ति में दसवां अवतार हमारी बुद्धि के तर्क के कारण, हमारी पूर्ण शरणागति कमजोर होने के कारण न दिखाई दे तो 'रामचरितमानस' को दसवां अवतार मानो। 'गुरुग्रंथसाहब' को दसवां अवतार मानो। तुम्हारा इष्टग्रंथ 'श्रीमद् भागवतजी' है तो दसवां अवतार मानो। तुम 'भगवद्गीता' के उपासक हो तो 'भगवद्गीता' को दसवां अवतार मानो। आप वैदिक है तो वेदों को दसवां अवतार मानो। एक ग्रंथ को दसवां अवतार मानो। न आपसे कभी दक्षिणा मांगेगा, न आपसे पूजापाठ करवायेगा!

तो मेरे भाई-बहन, ग्रंथ को गुरु मानो, ये दसवां अवतार है। मेरी पूर्ण श्रद्धा मेरे दादाजी में है, मेरे सद्गुरु भगवान में है, तो मेरे लिए तो यही दसवां अवतार है। लेकिन व्यक्ति में कमजोरियां मिलेगी। और कमजोरियां होती भी है। कलियुग है, व्यक्तिपूजा को बढ़ावा नहीं मिलना चाहिए। और गुरु व्यक्ति नहीं है, गुरु अस्तित्व है। 'अखंड मंगलाकारं।' ये आप सोचे। ये तीन देव गुरु बन गये। दत्त गुरु। गुरु दत्तात्रेय ये गुरु हो गये। और एक 'रामचरितमानस।' इसका मतलब ये नहीं कि मैं 'मानस' की ही बात करूं। आपका जो ग्रंथ हो। मुझे 'बाईबल' से भी कोई तकलीफ़ नहीं। आप 'बाईबल' को मान लो लेकिन तुम्हारी निष्ठा दोषमुक्त होनी चाहिए। पुष्टिमार्ग के परम आचार्य भगवान वल्लभाचार्य भगवान ने वैष्णवों के लिए, वैष्णवी परंपरा के साधकों के लिए तीन दोष की चर्चा की। एक, मुखरता दोष न हो। परमतत्त्व के आश्रित में मुखरता दोष नहीं होना चाहिए। वो बोल-बोल ज्यादा न करे। महाप्रभुजी कहते हैं, मेरा वैष्णव, मेरा आश्रित ठाकोरजी की तीन घंटे सेवा करे; ठाकोरजी की माला तैयार करे; ठाकोरजी की झारी जी लगाये; ठाकोरजी का भोग लगाये; ठाकोरजी का शृंगार करे; ठाकोरजी को नज़र न लगे, काला टीका करे; ठाकोरजी का नीलांजन करे, सब करे लेकिन मुखरता दोष न आये। कोई पूछे कि आप कहां थे? तो कहे, मैं तो तीन घंटे पूजा में बैठा था ठाकोरजी की। तो तुम में मुखरता दोष आ गया। तुम नहीं बैठे थे, ठाकोरजी ने तुम्हें बिठाया था। वरना तू तो दुकान पर बैठा होता! वरना तू कोई ओर जगह बैठा होता! ठाकुर के परम अनुग्रह ने तुम्हें बिठाया था।

हम जीव है; मुखरता दोष आ जाता है। अभिमान तो होता है। तुलसी ने तो अभिमान की दिशा बदलने की भी बात कह दी। जीव का स्वभाव है, अभिमान आ जाता है। लेकिन अभिमान की दिशा बदली जाए। ऐसा अभिमान करें कि मैं भारत की संतान हूं। वहां 'मैं' सार्थक हो जाएगा। मैं फलां बाप का बेटा हूं। ये मेरा खानदान, ये मेरी शालीनता, ये मेरा कुलीनपना, वो अभिमान सार्थक हो जाएगा। मैं फलां गुरु का आश्रित हूं। मैं फलां ग्रंथ का सेवक हूं। मुखरतादोष न रहे। ठाकोरजी ने सेवा करवाई। ठाकोरजी ने मुझे माला जी की सेवा की नियुक्ति कर दी। ठाकोरजी ने यमुनाजी की झारी की सेवा करवाई; मेरी नियुक्ति कर दी। मैंने ये किया, ऐसा कर्ताभाव जब आता है उसी को तो अहंकार कहते हैं। और हम जीव है। जितनी मात्रा में मुखरता दोष से मुक्त हो। कोई आपको कहे कि आध घंटा हो गया, आप क्या कर रहे थे? मैं 'यमुनाष्टक' का पाठ कर रहा था। तू नहीं कर रहा था। यमुनाजी ने कहा, बेटा, तेरे मुख से मेरा पाठ होता है ना, मुझे अच्छा लगता है। ये बुलावा है। प्रत्येक परमतत्त्व का हमें बुलावा है कि तू हरिनाम जप। तेरे मुख से 'राम' निकलता है तो अयोध्या में उसकी ध्वनि प्रकट होती है। ये निमंत्रण है। आप और मैं 'हनुमानचालीसा' नहीं कर रहे। हनुमान निमंत्रित करता है कि तू 'हनुमानचालीसा' कर। मुखरता दोष खत्म हो जाएगा। बहुत सावधान। मेरे दादाजी ने मुझे

कहा था, अहंकार से सावधान रहना। क्योंकि आयेगा बेटा, पता न चले ऐसे घूस जाएगा! आदमी कुछ न हो तो भी उसका कुछ न कुछ अहंकार होता है!

दूसरा दोष वल्लभप्रभु कहते हैं अन्याश्रय दोष; दूसरे का आश्रय। 'मेरे तो गिरिधर गोपाल।' मीरां ने दूसरों को गालियां नहीं दी लेकिन कोई दूसरा दिखता नहीं। ध्यान रखना, मीरां भी देखती है, दूसरा है लेकिन दूसरा बचा ही नहीं! मीरां कहती है, 'दूसरा न कोई।' बिलकुल सब खाली है; मेरा एक सांवरा ही दिखता है। जहां दूसरा बचे ही ना। 'और देवता चित्त न धरई।' 'हनुमानचालीसा' में आता है। कोई होगा तो कभी न कभी चित्त में आयेगा लेकिन ओर देवता चित्त में आता ही नहीं, क्योंकि मेरे लिए अब और देवता कोई बचा ही नहीं। तुम्हें छोड़कर यदि मैं दूसरी जगह जाऊं तो तो परंपरा को तो कलंक लगेगा ना दाता! मैं तेरा हूं। दूसरे की उपेक्षा नहीं करेगा। दूसरा दिखता ही नहीं।

अन्याश्रय दोष; हम कितने छोटे अर्थ निकालते हैं! अन्याश्रय का ऐसा अर्थ निकाल लिया कि कृष्ण को माननेवाला कृष्णकथा के सिवा ओर कोई कथा सुन ही नहीं सके! उसको अन्याश्रय कह दिया! हमारे समझदार वैष्णवों ने इस परंपरा को ठीक से समझा कि राम की कथा भी सुनते हैं। नवरात्र में 'मानस' का पाठ भी वैष्णव करते हैं वल्लभ परंपरा के लोग। उसने जाना है कि ये अन्याश्रय दोष नहीं है। उसने देखा कि मैं 'रामायण' पढ़ूं तो मेरे लिए 'रामायण' भी कृष्ण है। मेरे लिए वो भी 'भागवत' है। आचार्यों के वचनों को कितने हमने छोटे बना दिये! कितने छोटे! मैं राम को गाता हूं तो मेरे यहां तो 'अल्लाह' शब्द आता है; 'खुदा' शब्द आता है; 'बाईबल' की बात आती है। मेरे चारों ओर तो ये सब खड़े रहते हैं। मैं प्रणाम करके बुलाता हूं तो सब मेरी व्यासपीठ पर आते हैं। इधर से मोहम्मद आया, इधर से ईशु आया, इधर से बुद्ध आया, उधर से महावीर आया। सब आये हैं। व्यासपीठ राजपीठ नहीं है कि संकीर्ण हो। बहुत चौड़ी है। व्यासपीठ का मेरा मतलब है विशालता। अल्लाह भी आता है, उसको इस रूप में मैं बुलाता हूं। फ़कीर आते हैं, सांई आते हैं, शेरो-शायरी आती है, फिलम की पंक्ति आती है, लोकगीत आता है। चौपाई तो मेरा जीवन है। व्यापकता यदि बने तो अन्याश्रय का मतलब समझ में आ जाएगा। और स्वयं महाप्रभुजी भी चित्रकूट में जाकर 'वाल्मीकि रामायण' की कथा करते हैं। मैं जब चंपारण्य में गया तब मेरा निवेदन था कि महाप्रभुजी स्वयं चित्रकूट में 'रामायण' की कथा कहते हैं तो मैं उनका बालक चंपारण्य में रामकथा क्यों न करूं? कई लोगों ने कहा था, बापू, रामकथा और वो भी चंपारण्य में? वहीं होनी चाहिए क्योंकि हम अन्याश्रय नहीं कर रहे हैं। हम दूसरा देखते ही नहीं। दुनिया में तो एकमात्र है, 'दूसरा न कोई।' इसी अर्थ में 'हनुमानचालीसा' पढ़ी है, 'और देवता चित्त न धरई।' लेकिन तुलसी का अनुभव है, कोई मेरे लिए दूसरा है ही नहीं। 'मुरारीपादार्पित चित्तवृत्ति' मेरी पूरी चित्तवृत्ति मुरारी के चरणों में समर्पित हो चुकी है।

तीसरा दोष बताया अनिवेदिता दोष। कोई भी चीज वैष्णव ग्रहण करे तो निवेदन कर के ही ग्रहण करे। बिना ठाकुर को अर्पण किये जो ग्रहण करता है वो अनिवेदित दोष माना जाता है। कोई आचार्यों ने ये नहीं कहा कि तुम अच्छे कपड़े न पहनो; तुम गहने न पहनो; तुम अच्छा भोजन जो परमात्मा को अर्पण करके खाया जाये ऐसा भोजन न खाओ। किसी ने नहीं कहा। लेकिन कहा कि अनिवेदित दोष से बचो। पहले निवेदन कर दो। जैसे हम भगवान को भोग लगा देते हैं। वो तो खानेवाला नहीं; केवल संकल्प ही करना है। वैष्णव नया कपड़ा पहनेगा तो ठाकोरजी को अर्पण करेगा। नया गहना; स्थूल रूप में न रखो तो मानसिक रूप में भी निवेदन करो और ये हमारा स्वभाव है। देखो, यह परीक्षा का समय है। बच्चे स्कूल जाते हैं न तो अपने घर में ठाकोरजी होते हैं वहां अपनी पेन रखकर जाते हैं, निवेदन कर रहे हैं। या तो कोई संत-बाबा से हाथ छूआ देते हैं कि मेरी परीक्षा हो जाये। नोटबूक को, मेरी पेन को आप जरा छू लो। ये हमारे धर्म संस्कार है कि हम अनिवेदित दोष से बचे रहते हैं। दाता को पहले दिया। आदमी बेरखा-माला रखता है; नयी लेता है तो किसी से छूआ लेता है, ये जरा छू दो। निवेदन, निवेदन, निवेदन। और आखिर परंपरा की भक्ति है वो आत्मनिवेदनम्। आत्मा तक निवेदन कर दे।

ये तीन दोष है। इन दोषों के कारण हमारे मन में ये समझ में नहीं आता इसलिए असमंजसता पैदा होती है कि विष्णु से राम आये कि राम से कई विष्णु प्रकट हुए? जहां जिसकी निष्ठा है वो उसको बढ़ाओ। तो राम की निष्ठा कहेगी कि राम से कई विष्णु आये। परंपरा की निष्ठा कहेगी, विष्णु से राम आये। जो कहो। और ये सब दुविधा मिट जाये इसलिए गुरु दसवां अवतार है। ये दुविधा तोड़ने के लिए जिसमें ग्यारह वस्तु आपको दिखे उसको दसवां अवतार समझ लेना। जिसके पास चार मुख हो, चार हाथ हो और तीन नेत्र हो उसको दसवां अवतार समझ लेना। ये ग्यारह लक्षण दसवें अवतार की निशानी है। ये संकेत है क्योंकि ब्रह्मा, विष्णु, महेश ही गुरु के रूप में आये। ब्रह्मा के चार मुख, विष्णु की चार भुजा, आठ और शंकर की तीन आंखें, ग्यारह। वो बुद्धपुरुष दसवां अवतार है जिसमें ग्यारह हो। अब चार मुख जिसको हो उसको गुरु माने यार! गुरु को तो एक मुख होता है। लेकिन चार मुख गुरु का; मैंने कई बार कहा है, थोड़ा फेरफार के साथ जब दसवें अवतार की मैं लीला गा रहा हूं इस कथा में खासकर।

एक मुख गोमुख और दूसरा वेदमुख वो ही रखूंगा। वो गुरु दसवां अवतार है जिसका एक मुख वेदमुख है। वो जो बोले वो शास्त्र हो जाएगा। शास्त्र में है वो बोले ये बाध्यता बुद्धपुरुष की नहीं है। वो जो बोलेगा वो वेद हो जाएगा। तो एक मुख है वेदमुख। दूसरा मुख है गोमुख। दसवां अवतार सद्गुरु गोमुख होता है। उसका चेहरा गाय की तरह रांक होता है, सौम्य होता है। जिस बुद्धपुरुष का चेहरा गाय जैसा। गाय जैसा मीन्स पशु का नहीं लेकिन रांक-निर्दोष। उसको दिखता है कि सर्वनाश की ओर समाज जा रहा है तब भी वो गोमुख गुरु सोचेगा कि हम क्या किये जा रहे है! तीसरा लक्षण; जो सद्गुरु दसवां अवतार के रूप में है उसका तीसरा मुख है अंतर्मुख। ये लगेगा बहिर्मुख है लेकिन अंतर्मुख है। निरंतर अंदर डूबा हो। बुद्धपुरुष अंतर्मुख है लेकिन जगत कल्याण के लिए फिर थोड़े वाणी के रूप में बहिर्मुख होता है। तीसरा निरंतर अंतर्मुख है फिर भी सबके सन्मुख है। ये चौथा मुख है। गुरु कभी किसी से विमुख नहीं होता। विमुख हो वो गुरु का लेबल लगा बैठा है, लेवल नहीं है। सन्मुख होता है। कोई ये कहे कि हमारा गुरु थोड़ा विमुख लगता है तो या तो वो गुरु नहीं है या तो तुमने उसको पहचाना नहीं! गुरु कभी विमुख नहीं हो सकता।

ग्यारह लक्षण वो दसवां अवतार है, जिसके चार मुख हो। पूरा ब्रह्मा समाया है इसलिए तो हम कहते हैं, 'गुरुर्ब्रह्मा।' गुरु ब्रह्मा है चतुर्मुख। फिर 'गुरुर्विष्णु'; 'विष्णु चतुर्भुज बिधि मुख चारि।' जो गुरु है उसके चार हाथ है। होते तो दो ही है। कबीर साहब के भी दो ही थे। पैगम्बर को दो ही थे। जिसस को भी दो ही थे। बुद्ध को दो ही थे। लेकिन उसको चतुर्भुज कहा है। और चतुर्भुज में मैंने पहले दिन संकेत किया था, जब विष्णु भगवान को विषय बनाकर कम्बोडिया में कथा गाई तब उसका विवरण किया था कि एक शंख, एक चक्र, एक गदा, एक पद्म जो चतुर्भुज के हाथ में है। शंख का अर्थ है उज्ज्वलवाणी, उज्ज्वल आवाज़, शंखध्वनि, निर्दोष और पवित्र बोली। पवित्र कर्तव्य। पवित्र कर्तव्य हाथ का काम करना है। सोचा-बोला वो करके दिखाया। एक भुजा है शंखदध्वनि। दूसरी भुजा है जिसमें एक चक्र रहता है सुदर्शनचक्र। प्रमादी नहीं

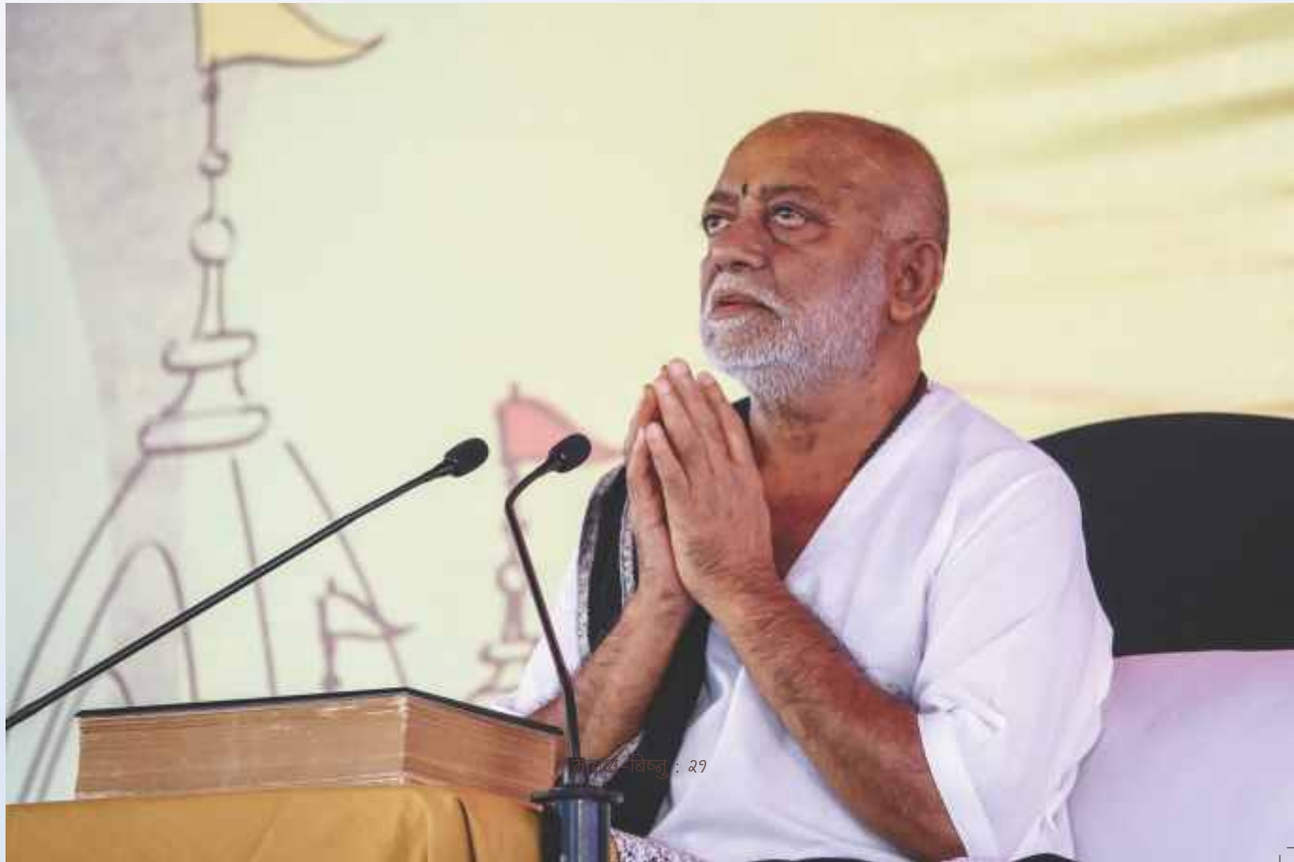

है विष्णु। हाथ में सुदर्शनचक्र है। चक्र है गति का प्रतीक। 'चरैवेति चरैवेति चरैवेति', चलते रहो, काम करते रहो, काम करते रहो।

हमारे यहां सूत्र है, 'सर्वजन सुखाय सर्वजन हिताय।' मेरे पास कई लोग आते हैं न तो कहते हैं, वो फलां संस्था चलाता है। फलां एक मेगेझिन में डालना है, तो लिख देता हूं, आपकी संस्था 'सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय' जो-जो प्रवृत्ति करे इसमें मेरी प्रसन्नता और मेरी शुभकामना। राम सुमिरन के साथ। -मोरारिबापू। तुम यदि 'सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय' सद्प्रवृत्ति करते हो तो ये मेरी प्रसन्नता है। अब मैंने भोपाल आने से पहले उसमें भी फेरफार कर दिया। 'सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय' नहीं। जन मानी हम मानुष। हमारे सिवाय इस दुनिया में कोई है ही नहीं? केवल हमारे सुख के लिए ही प्रवृत्ति हो? तो मैंने बदल दिया है, 'सर्वभूत सुखाय।' पृथ्वी का भी सुख हो, पानी का भी सुख हो, आकाश का भी सुख हो, पर्यावरण का सुख हो, तेज का सुख हो। ये मैंने बदला है। तलगाजरडी दृष्टिकोण बदल रही है। 'सर्वभूत सुखाय।' प्राणियों का भी सुख हो, नदियों का भी सुख हो, आकाश का सुख हो, वन्य संपत्ति का सुख हो। 'सर्वभूत सुखाय।' 'सर्वभूत हिताय।' और ये तीसरा जोड़ा, 'सर्वभूत प्रीताय।' सबके लिए प्रेम के कारण ही ये सब किया। केवल मनुष्य के लिए नहीं। पशु के लिए प्रेम।

ये गायें क्यों कटती हैं? हमारे लिए गाय पूज्य रही, प्रिय न रही। पूजा के बदले प्रेम करना सीखो तो गाय नहीं कटेगी। पूजा तो पांच पैसे में हो जाती है! हल्दी-कुमकुम गाय के माथे पर चढ़ा दो। घास लेकर खिला दो, गुड़ खिला दो, पूंछ को इधर-उधर कर लो, पूजा हो गई! प्रेम करना कठिन है साहब! जब हम गायों को प्रेम करना सीख जायेंगे, गाय नहीं कटेगी। हम नदियों को पूजे, अच्छी बात है; पूजना चाहिए। और ये अच्छा विदेशी निर्णय हिन्दुस्तान में भी ग्रहण कर लिया गया, कोर्ट ने भी हां कह दी कि नदियों को एक नदी के रूप में नहीं, एक हस्ती के रूप में स्वीकारा जाये; एक व्यक्ति के रूप में कबूल किया जाये। बड़ा प्यारा निर्णय। जैसे व्यक्ति को नुकसान पहुंचाना जुर्म है, तो नदी को नुकसान पहुंचाना जुर्म है। एक व्यक्ति पर कीचड़ डालना जुर्म है, तो नदी में कचरा डालना जुर्म है। व्यक्ति का दर्जा दीजिए। ये हस्ती है। ये बड़ा प्यारा निर्णय। प्रेम करे नदियों से। हम पूजा तो करते हैं; पूजा की सामग्री नदियों में बहाते हैं। आधा शव जलाया, आधा रह गया, फेंक दिया! नहीं, प्रेम करते हो तो हम नहीं ये कर सकते। प्रेम करो। वृक्ष की पूजा कर लेते पीपल की, वट की, तुलसी की; फिर हजारों पेड़ काटे जा रहे हैं! पूरी दुनिया से हजारों!

मैंने मुखमंत्री को कहा कि भोपाल को छोड़ने से पहले जहां मैं निवास कर रहा हूं अथवा तो जहां कहेंगे, मैं अपने हाथ से भोपाल में ग्यारह वृक्ष बो कर जाऊंगा। मेरी जनता को ये मेसेज मिले। इतने वृक्ष मत काटे जाय मेरे भाई-बहन! भोपाल फिर भी ग्रीन है। ये तालाब का नगर है। उसकी अपनी एक महिमा है। ये हार्ट है; मध्यप्रदेश हिन्दुस्तान का मध्य है। हां, उसको बहुत हराभरा रखो साहब! कितनी प्यारी नदी में शव न बहाये जाये। नदी के किनारे पर ऐसी स्वच्छता अभियान के लिए शौचालय बनाये जाये। बहन-बेटियों को मर्यादा में तकलीफ़ न हो इसलिए उनके लिए ऐसे स्नानागार बनाये। और मेरे श्रोताओं को कह कर जाऊंगा, आज भी कह दूं, जाते-जाते भी कहूंगा कि रामनवमी के दिन पूर्णाहुति है उसी दिन आप भी अपने आंगन में अथवा तो जहां-जहां ऐसी व्यवस्था हो वहां पेड़ बोओ। इस बार की रामनवमी कई वृक्ष बोकर के मनाई जाये। हम पेड़ बोएं। पूरा मध्यप्रदेश, पूरा हिन्दुस्तान। वृक्ष का जतन हो; जल का जतन हो। प्रदूषण न हो। नदियों में शव न बहाओ, प्लीज़। सरकार की न मानो तो मोरारिबापू की तो मानो! ऐसा पूजा-पाठ तटों पर न करो कि उसकी बची हुई सब बेकार वस्तु आप नदी में बहा दो और नदियां प्रदूषित हो जाये! प्रेम करो तो ये बंद हो जाएगा। वृक्ष से प्रेम करो। पूजा तो करनी ही करनी है। हम सबको प्रेम कर रहे हैं। रामराज्य का एक ही सूत्र था साहब! 'मानस' में जब भगवान राम का राज्य स्थापित हुआ तो रामराज्य का जो एक चावीयुक्त सूत्र था -

सब नर करहिं परस्पर प्रीती।
चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।।

प्राणतत्त्व था रामराज्य का। सब नर एक-दूसरे से प्रेम करे, परस्पर प्रीति करे। इसी रूप में देखो दुनिया को। इस देश को, इस प्रांत को, जहां हम है उसको हरा-भरा करे, उसको प्रेम करे। तो मैं वृक्ष बोकर जाऊंगा। मेरी गुरुदक्षिणा यही रहेगी। मैं तो कुछ लेता नहीं किसी से रुपया-पैसा। मेरी आनेजाने की व्यवस्था कर देते हैं, ले आते हैं, छोड़ देते हैं, बात खतम! मेरा कोई लेना-देना नहीं आपसे। हां, फिर भी नौ दिन की कथा सुनकर आप कुछ देना चाहे तो मेरी व्यासपीठ को यही देना, खूब पेड़ बोओ। बिना कारण कोई पेड़ काटा न जाये। पवित्र दिन रामनवमी के दिन पूर्णाहुति होती है। खूब वृक्ष बोये जाये उसी दिन। पेड़ पौधे लगाओ। कम से कम जितने मेरे श्रोता है। वो सब एक-एक पौधा बोये तो कितना बड़ा काम! ये प्रयोगशाला है; प्रयोग करो जिसका रिझल्ट हो। जिसका कुछ परिणाम समाज के सामने आये।

तो दसवां अवतार जिसको मैं सद्गुरु कहता हूं विष्णु का उसके चार मुख- सन्मुख, अंतर्मुख, गोमुख और वेदमुख। जैसा बोले वैसा करके दिखाये वो शंख। दूसरा चक्र, 'चरैवेति' काम करो। हमारे आज़ाद भारत के प्रथम वडाप्रधान आदरणीय पंडितजी, उसने एक सूत्र दिया था दुनिया को, 'आराम हराम है।' खूब मेहनत करो, अच्छा है। अब भी हमें खूब मेहनत करनी है, पुरुषार्थ करना चाहिए। मैं अपने ढंग से करूं, आप अपने ढंग से करो। क्योंकि विष्णु श्रमधर्मी है। आदमी को कार्य करते रहना चाहिए। आदमी को निर्णय लेते रहना चाहिए। मैं ये भी कह रहा हूं, समाज में निर्णय लेने चाहिए। गलत हो तो सुधारो लेकिन निर्णय करो, निर्णय करो। हो सकता है, कोई गलत हो, सुधारा जाये। लेकिन निर्णय करते जाना चाहिए। कब तक टाला जायें? सालों बीत जाते हैं! उर्दू का एक बहुत प्यारा शेर है -

लम्हों ने खता की थी सदियों ने सजा पाई।
इस राज़ को क्या जाने साहिल के तमाशाई।

किनारे पे घूमनेवाले इस रहस्य को क्या समझे? निर्णय के लिए पुरुषार्थ। विष्णु है श्रमधर्मा। तो चक्र ये दूजा अपना हाथ काम करे। चक्र है पुरुषार्थ। आदमी आलसी न बने। आदमी प्रमादी न बने। सद्गुरु दसवां अवतार वो है जो निरंतर गति करता है। वो एक कोने में बैठ जाये तो भी निरंतर गति है उसकी। रमण महर्षि एक कोने में बैठ गये लेकिन उसकी सद्वृत्ति पूरे समाज में घूम गई। बिना कर्म कोई एक क्षण नहीं रह सकता। गुजराती में दो-तीन पंक्ति है, सुनिए-

आभना थांभला रोज ऊभा रहे,
वायुनो वींझणो रोज हाले;
उदय अने अस्तनां दोरडां उपरे,
नट बनी रोज रविराज म्हाले।
भागती भागती, पडी जती पडी जती,
रात नव सूर्यने हाथ आवे;
कर्मवादी बधां कर्म करतां रहे,
एहने ऊंघवुं केम फावे?

कर्मवादी को चाहिए कर्म करे। सूरज कर्मवादी है, कभी छुट्टी नहीं लेता। सितारे कर्मवादी है। नदियां कर्मवादी है। पेड़-पौधे रोज बढ़ते जा रहे हैं, अपना विकास किये जा रहे हैं। बुद्धपुरुष बोलकर, मौन रहकर, बैठकर या परिव्राजक बनकर चक्र की तरह घूमते रहते हैं।

तो बाप! शंख, चक्र, गदा, पद्म। बुद्धपुरुष का तीसरा हाथ है गदा। गदा का अर्थ है बल। हिंसा के लिए नहीं, मारने के लिए नहीं, तारने के लिए। किसी को खतम करने के लिए नहीं, नव निर्माण के लिए। और गदा दंड का भी प्रतीक है और संसार को ठीक रखने के लिए दंड विधान भी खुद चाणक्य ने कुबूल किया है, नीतिकारों ने कुबूल किया है। ये भी तो एक नीति है। मजबूत हाथ। और वेदों ने जो कहा; वेदों ने कहा कि हमने कोई दूसरा भगवान नहीं देखा है। हद कर दी! ये मेरे हाथ भगवान है; मेरे हाथ ही परमात्मा है। मेरा हाथ पूरी दुनिया की बीमारियों की औषधि है, ऐसा वेद कहते हैं। उपनिषद ने कहा, जो बलवान नहीं है उसको आत्मा नहीं मिलती। यहां बल केवल शारीरिक बल नहीं। आत्मबल, मनोबल, बुद्धिबल, विधिबल ये तीसरा हाथ है। और पद्म; इतना होने के बाद भी कमल की तरह असंग रहना, अनटच रहना, वर्जिन रहना। असंगता बनी रहे ये बुद्धपुरुष का लक्षण है।

सद्गुरु दसवां अवतार वो है जो निरंतर गति करता है। वो एक कोने में बैठ जाये तो भी निरंतर गति है उसकी। रमण महर्षि एक कोने में बैठ गये लेकिन उसकी सद्वृत्ति पूरे समाज में घूम गई। बिना कर्म कोई एक क्षण नहीं रह सकता। कर्मवादी को चाहिए कर्म करे। सूरज कर्मवादी है, कभी छुट्टी नहीं लेता। सितारे कर्मवादी है। नदियां कर्मवादी है। पेड़–पौधे रोज बढ़ते जा रहे हैं, अपना विकास किये जा रहे हैं। बुद्धपुरुष बोलकर, मौन रहकर, बैठकर या परिव्राजक बनकर चक्र की तरह घूमते रहते हैं।

तो ग्यारह लक्षण दसवें अवतार के। चार मुख, चार हाथ, आठ; तीन नेत्र। गुरु ब्रह्मा है, गुरु विष्णु है, गुरु महादेव है। महादेव के तीन नेत्र पर ये व्याख्या तो मेरी व्यासपीठ ने कई बार कही। शंकर के तीन नेत्र है सत्य-प्रेम-करुणा। दायीं आंख शंकर की सत्य है, बायीं आंख करुणा है और बीच में तीसरी आंख प्रेम है। सद्गुरु दसवां अवतार है तो उसके ग्यारह लक्षण ये है। तो 'मानस' में विष्णु का जो रूप है उसको लेकर हम और आप सात्त्विक-तात्त्विक संवाद कर रहे हैं हमारे भीतरी विकास और विश्राम के लिए।

एक दूसरा प्रश्न, ''अध्यात्म अंदर उतरना है और जब हम अंदर उतरते हैं तो संसार को समय नहीं दे पाते तब समाज हमको अहंकारी समझने लगता है। उचित क्या है?'' ये एक डोक्टर ने पूछा है। हम अध्यात्म में उतरना चाहते हैं यानी डूबना चाहते हैं। लेकिन हम जब अध्यात्म में उतरते हैं तो संसार को समय नहीं दे पाते और समाज हमको अहंकारी कहते हैं, क्या करें? अध्यात्म किसी को संसार छुड़वाता नहीं। सच्चा अध्यात्म कभी कर्तव्यच्यूत नहीं करता। कबीर का एक पद है गुरु के बारे में। 'साधो सो गुरु सत्य कहावै।' कौन गुरु? जो देह को कभी कष्ट न दे। ये न कहे कि तुम व्रत करो; तुम उपवास करो; तुम्हारे शरीर को तोड़ डालो; देह कष्ट न सिखाये। और मुझे बहुत प्यारी पंक्ति कबीर साहब की कि 'नहीं संसार छुड़वै।' भजन करनेवाला मुझे लगता है कि ज्यादा अच्छा कर्तव्य निभा सकता है। 'छठ दम सील बिरति बहु करमा।' छट्ठी भक्ति करनेवाला बहुत कर्तव्य निभायेगा, और फिर धीरे-धीरे परिपक्वता आती है तब अपनेआप छूट जाएगा। कर्तव्य से च्यूत मत होना। उचित यही है, अध्यात्म में उतरना है तो कर्तव्य निभाते रहो।

आज की कथा थोड़ी आगे लूं। रामनाम महिमा की चर्चा कल की थी। उसके बाद 'रामचरितमानस' में रामकथा का एक पूरा इतिहास बताया है कि सबसे पहले 'रामचरितमानस' की रचना भगवान शिव ने की। शंकर भगवान ने 'रामचरितमानस' की रचना कर बहुत समय तक अपने हृदय में रखा। योग्य समय पात्रता आई तब ये 'रामचरितमानस' की कथा शिव ने पार्वती के सामने कैलास पर गाई। वो ही कथा कागभुशुंडि को मिली और कागभुशुंडि ने उत्तर दिशा में नीलगिरि पर्वत पर गरुड के प्रति इस कथा का गायन किया। उसके बाद ये कथा बिलकुल सपाट धरा पर प्रयाग में आई, जहां याज्ञवल्क्य महाराज ने ये कथा भरद्वाजजी को सुनाई। तुलसी कहते हैं, मैंने ये कथा वराह क्षेत्र में मेरे गुरु से सुनी। तब मेरा बचपन था; नादान अवस्था थी। कृपालु गुरु मुझे रामकथा दे रहे थे लेकिन मेरी समझ में नहीं आई। फिर भी करुणामूर्ति ने बार-बार कथा मुझे सुनाई और सुनते-सुनते थोड़ी बुद्धि में, हृदय में उतरी तब मैंने गांठ बांध ली कि मैं ये भावबद्ध कथा को भाषाबद्ध करूंगा। तुलसी ने उसको भाषाबद्ध किया, ग्रंथस्थ किया।

तुलसी ने बताया कि ये 'रामचरितमानस' जंगम मानसरोवर है। ये स्थावर है। वहां जाना पड़ता है। ये मानसरोवर हमारे घर तक आता है। छोड़ो, हमारे घट तक जाता है ये जंगम मानसरोवर। तुलसी ने चार घाट बनाये 'रामचरितमानस' के। एक घाट बनाया जिसका नाम दिया ज्ञानघाट। उस घाट पर शिव बैठे हैं वक्ता के रूप में और श्रोता के रूप में पार्वती बैठी है। दूसरा घाट बनाया कर्मघाट। उस घाट पर महर्षि याज्ञवल्क्य महाराज बैठे हैं और श्रोता के रूप में भरद्वाज बैठे हैं। तीसरा घाट बनाया उपासना का, भक्ति का। उस घाट पर बाबा कागभुशुंडि बैठे हैं वक्ता के रूप में और श्रोता के रूप में गरुड और अन्य विहंग। चौथा घाट तुलसी ने बनाया शरणागति का, प्रपन्नता का, समर्पण का। जिस घाट पर स्वयं तुलसी बैठकर अपने मन को ये कथा सुनाते हैं और संतगण सुनते हैं। विक्रम संवत् सोलह सौ इकतीस रामनवमी का दिन था। कहते हैं कि त्रेतायुग में भगवान राम का प्रागट्य रामनवमी के दिन हुआ उस समय जोग, लगन, ग्रह, वार, तिथि जो अनुकूल हुआ था ऐसा ही योग फिर सोलह सौ इकतीस में आया था और उसी दिन तुलसी ने 'रामचरितमानस' का प्रकाशन अयोध्या में करने का शिवसंकल्प किया।

तुलसीदासजी ने अपने शरणागति के घाट से कथा का आरंभ किया और इसी क्रम में वो तीर्थराज प्रयाग में कर्मघाट पर याज्ञवल्क्य महाराज और भरद्वाजजी के बीच में कथा का संवाद शुरू करते हैं। एक बार महाकुंभ हुआ प्रयाग में। कल्पवास करके सब महात्मा विदा लेने लगे तब याज्ञवल्क्य नामक परम विवेकी महापुरुष ने भरद्वाजजी से विदा मांगी। भरद्वाजजी ने चरण पकड़ लिये कि बाबा, मेरे मन में एक बहुत बड़ा संशय है कि रामतत्त्व क्या है? आप मुझे रामकथा सुनाओ। और याज्ञवल्क्य महाराज भरद्वाजजी के सामने कर्म के घाट पर रामकथा का आरंभ करते हैं और पहला चरित्र वो शिवचरित्र सुनाते हैं। भरद्वाजजी ने पूछा रामचरित्र; याज्ञवल्क्य ने सुनाया पहले शिवचरित्र। यही सेतुबंध था कि राम और शिव तत्त्वत: एक है। यही प्रस्थापित करना था। शिव की कथा से ही रामकथा की ओर जाया जा सकता है, ये संकेत करना था। तो याज्ञवल्क्य के मुख से कथा का आरंभ होता है।

मानस-बिष्णु : ४

साधु स्वयं वृक्ष है

'रामचरितमानस' कथित जो रामकथा है उसमें भगवान विष्णु का दर्शन तुलसी ने जिस रूप में किया और प्रस्तुत भी किया, उसी को केन्द्रबिंदु बनाकर हम कुछ सात्त्विक-तात्त्विक संवादी चर्चा कर रहे हैं। आपकी बहुत-सी जिज्ञासाएं, यूं कहे कि जिज्ञासाओं के ढेर मिलते रहते हैं! सब पढ़ना भी मुश्किल है। कुछ-कुछ मैंने रखा है। यथासमय यथामति मैं कोशिश करूंगा।

'महाभारत' में एक प्रसंग है कि 'महाभारत' के युद्ध में जीत के बाद पांडवश्रेष्ठ युधिष्ठिर धर्मराज ज्यादा उदास रहते हैं। अपने चार बंधुओं के सामने और महाराणी द्रौपदी के सामने अपने विचार प्रस्तुत करते रहते हैं। जब युधिष्ठिर ये कहने लगता है कि मैं बन में चला जाऊं। इधर-उधर वृक्षों से भिक्षा मांगूं फल की। वृक्षों के छाल से वस्त्र मांगूं। अकेला पड़ा रहूं जंगल में। ये सब उदासीन बातें कहते हैं तब महारानी द्रौपदी बहुत पीढ़ बनकर परिपक्वता से उसको जवाब देती है कि आपके लिए ऐसा सोचना ठीक नहीं है। आप प्रजा पालक के रूप में शासन पर आसीन है सिंहासन पर। अब आप ऐसी बातें करे तो ठीक नहीं है। ये सब गंभीर चर्चा चली ही रही है इतने में व्यास भगवान का प्रवेश हुआ और व्यास पूरा माहौल संभाल लेते हैं। इधर कृष्ण भी आ जाते हैं और कहते हैं, भीष्मदादा की अंतिम क्षण है; हम उसके पास जाये और युधिष्ठिर, अपने मन की बात भीष्म के सामने रखो और जो-जो प्रश्न आपके मन में हो सब पूछ लो क्योंकि ये आखिर चराग है, बुझ जाये इससे पूर्व जितना उससे लिया जाय, ले लो। सब जाते हैं बाणशैया पर लेटे हुए पितामह भीष्म के पास। फिर बारी-बारी से युधिष्ठिर प्रश्न पूछता रहता है और दादा जवाब देते हैं। इसमें एक प्रश्न युधिष्ठिर पूछता है कि दादा, इस विश्व में ऐसा देव कौन है जिसकी प्रतिभा बहुमुखी हो? जिस में नखशिख सत्त्व भरा हो और सबका निर्वहन करता हो। बहुत-से प्रश्न पूछे। इनमें केन्द्र में ये प्रश्न, ऐसा कौन है, आप बताते जाओ। तो वैशंपायन के मुख से व्यासजी बुलवाते हैं। यहां भीष्म के मुख से बुलवाते हैं-

यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसार बन्धनात्।
विमुच्यते नमस्तस्मै विष्णवे प्रभविष्णवे।।

युवान भाई-बहनों को आग्रह करूं। 'महाभारत' पढ़िये। अब तो दुनिया तुम्हारी मुठ्ठी में है, हाथ में है। इन्टरनेट ये विज्ञान ने जितनी सुविधा कर दी है; जो श्लोक चाहो एक मिनट में आपको अपने हाथ रहे यंत्र में प्राप्त कर सकते हैं। मौका मिले तो 'महाभारत' पढ़िये या तो कहीं सुनिये। पढ़ने से सुनना ज्यादा अच्छा है। श्रवण की महिमा है। हमारे यहां बुद्ध और महावीरकाल में एक सभ्यता चली जिसको हम कहते हैं, श्रमण सभ्यता। श्रमण; इसमें श्रम है, तप है, उपासना है, परिश्रम है, बहुत अद्भुत है। मुझे कोई पूछे कि 'रामायण' की सभ्यता क्या है, श्रमण कि ब्राह्मण? दो सभ्यता रही। श्रमण; परिश्रम, तप-साधना। एक ब्राह्मण सभ्यता। मेरी व्यासपीठ को यदि कोई पूछे तो मेरी जिम्मेवारी से मैं इतना ही कहूंगा, रामकथा की संस्कृति ये तो सबकुछ है मेरी दृष्टि में लेकिन न श्रमण संस्कृति है, न ब्राह्मण संस्कृति है; ये केवल श्रवण संस्कृति है। जो सुनता है वो पा जाता है।

तो 'महाभारत', 'रामायण' ये केवल ऐतिहासिक ग्रंथ नहीं है; ऐतिहासिक कह दो, चलो, एग्री लेकिन ये आध्यात्मिक ग्रंथ है। भूतकाल की घटी घटनाएं है; वर्तमान का नितनूतन सत्य है और भविष्य का अद्भुत और अकाट्य मार्गदर्शन है 'महाभारत' और 'रामायण'। सुनिये; सुनना जरूरी है। वक्ता भी एक लेवल तक पहुंच जाता है तब वक्ता बोलता नहीं, वो भी सुनता है। बोलनेवाला बिलग हो जाता है। केवल होठ हिलते हैं। एक इन्स्ट्रुमेन्ट बन जाता है वक्ता। मैं बहुत दर्द के साथ कहना चाहता हूं कि जिन लोगों ने सुनने की इतनी आलोचना की उसने जमाने को बहुत नुकसान पहुचाया। सुनने से बहुत फायदा होता है। केवल पढ़ने से इतना फायदा नहीं होता। तो 'महाभारत' पढ़ो। पढ़ने से समझ न आये तो किसी पहुंचे हुए जिन्होंने जाना है ऐसे कहीं जा कर सुनो भी। बहुत फायदा होगा। 'यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसार

बन्धनात्।' साहब! जानेवाला आदमी बोल रहा है। कोई पाखंड नहीं है। कोई फरेब नहीं है। कोई दिखावा नहीं है। आदमी आखरी क्षणों में ओर पवित्र होने लगता है। और ये तो नखशिख गंगा का पुत्र है। उसकी पवित्रता के सामने कौन माय का लाल ऊंगली उठा सकता है? युधिष्ठिर, जिसका केवल स्मरणमात्र, एक बिजली कौंध गई, एक याद आ गई, एक स्मृति आ गई एक क्षण के लिए। तो हे धर्मराज, जन्म और संसार के समस्त बंधन नष्ट हो जाते हें। ऐसी सत्ता जो है वो है विष्णु। विष्णु का वर्णन जो भीष्म की जुबां से 'महाभारत' में आया है। मुझे तो वहां केन्द्र में जाना है।

नमः समस्तभूतानाम् आदिभूताय भूभृते।

अनेकरूपरूपाय विष्णवे प्रभ विष्णवे।।

कौन है विष्णु? 'आदिभूताय भूभृते।' 'भूभृते' मीन्स जो धरती को धारण करता है। भूभृते तो शेष नारायण है। लेकिन उसका जवाब अगले शब्दों में है, 'अनेकरूपरूपाय।' अनेक रूप है उसके। ऐसे विष्णु को मैं प्रणाम करता हूं। अनेक रूप है। तब मुझे 'मानस' मदद करती है। तुरंत 'मानस' सपोर्ट करती है, आशीर्वाद देने लगती है।

देखे सिव बिधि बिष्नु अनेका।

अमित प्रभाउ एक ते एका।

अनेक रूप है विष्णु के लेकिन विष्णु अनेक है, राम एक है, ये मत भूलिए। सती ने देखा, राम तो वही के वही है सीता की खोज करनेवाले लेकिन ऐश्वर्य देखती है तो राम के चरणों में अनेक विष्णु देखे, अनेक शिव देखे, अनेक प्रभाव सबका लेकिन मध्य में, केन्द्र में मेरा राघव एक। 'रामरूप दूसर नहीं देखा।' विष्णु अनेक। हरेक लोक में विभिन्न विष्णु, विधाता भिन्न, सब भिन्न लेकिन राम एक। दशरथ भिन्न, कौशल्या भिन्न, सरजु भिन्न, अयोध्या भिन्न, अयोध्या के नर-नारी भिन्न, मेरा राम एक निरूपम। तो केन्द्र में राम को न भूले। अब विष्णु राम है कि राम विष्णु है, अपनी-अपनी निष्ठा पर छोड़ दिया है। परमतत्त्व एक होता है, उसकी व्यवस्था अनेक में विभाजित कर दी जाती है। परम ऊर्जा, परम सामर्थ्य का नाम है राम। और उस सामर्थ्य को जब व्यवस्था करनी होती है, अकर्ता को कुछ करके दिखाना है तब वो ऊर्जा को बांटता है। थोड़ी ऊर्जा विष्णु को देता है, ब्रह्मा को देता है, तुम बनाओ, सब बनाओ। रजोगुण ले जाओ मेरे पास से और रजोगुण से बनाओ सब सृष्टि का निर्माण। फिर थोड़ी इसमें एक तृतीयांश ऊर्जा देते हैं विष्णु को, तुम परिपालन करो। सबको संभालो, परित्राण करो। फिर तीसरे भाग की ऊर्जा दे देते हैं, शिवजी को, तुम संहार करो। परमतत्त्व राम है, ये भूलियेगा मत। 'अमित प्रभाउ एक ते एका।' 'अनेकरूपरूपाय।'-'विष्णुसहस्रनाम'; समय मिले तो पढ़ना। अद्‌भुत है 'विष्णुसहस्रनाम।' मैं बचपन में 'विष्णुसहस्रनाम' पढ़ता था। मेरे भाई-बहन, 'विष्णुसहस्रनाम' की बहुत महिमा है। लेकिन राम मत भूलना। मेरे महादेव ने जब भवानी को कहा कि एक बार 'सहस्रनाम' का जप करो और एक बार 'राम' बोल दो तो बात पूरी। और भवानी भी अपने पियु के संग राम महामंत्र का जप करने लगी। अनेक रूप है विष्णु के। तो रामतत्त्व एक है। विष्णु अनेक रूप में आते हैं। अनेक रूप, अनेक नाम उसकी विशिष्ट महिमा है। उसको पढ़े, उसकी व्याख्याएं पढ़े, लेकिन राम को न भूले। केन्द्र राम है।

लोकाध्यक्षः सुराध्यक्षो धर्माध्यक्षः कृताकृतः।।

चतुरात्मा चतुर्व्यूहश्चतुर्दंष्ट्रश्चतुर्भुजः।।

चतुरात्मा का अर्थ होता है चार आत्मा। आत्मा चार नहीं होती। आत्मा एक ही होती है। लेकिन हम आत्मा को कई प्रकार से जोड़ते हैं। जीवात्मा, परमात्मा, महात्मा। किसीको जीवात्मा कहते हैं। किसी को महात्मा कहते हैं। किसी को परमात्मा कहते हैं। प्रेतात्मा, भूतात्मा। चतुरात्मा का अर्थ भाष्यकारों ने बताया है कि चार युग में विष्णु के बिलग-बिलग चार रूप है। वर्ण भी बिलग-बिगल है यारों! सतजुग का विष्णु श्यामवर्ण नहीं है, गौरवर्ण है। त्रेता का विष्णु जो मूल राम से निकला है वो 'नील सरोरुह।' द्वापर का विष्णु थोड़ा ताम्रवर्णीय दिखता है और कलियुग का विष्णु बिलकुल ब्लेक, फास्ट ब्लेक। प्रत्येक युग में बिलग-बिलग वर्ण, बिलग-बिलग रूप। 'चतुरात्मा चतुर्व्यूह।' चतुर्व्यूह है, जिसके चार व्यूह मानी विग्रह। चार विग्रह से वो चार काम करते हैं। उत्पत्ति, स्थिति, रक्षण और नाश। उसको चार व्यूह कहते हैं। एक व्यूह उत्पत्ति करना। फिर स्थिति करना; उसको ठीकठाक संभाल कर रखना। ये दूसरा व्यूह। तीसरा व्यूह रक्षा करना। और चौथा व्यूह नाश करना। ये है विष्णु का चतुर्व्यूह कर्म। चार दांत; नृसिंह अवतार में चार दाढ है। सिंह का रूप लेकर नारायण आया तो उसकी चार दाढें दिखाई दी। ये विष्णु का एक रूप है। और चतुर्भुज तो है ही। लेकिन बहुत प्यारा मंत्र है, विष्णु कौन है? 'लोकाध्यक्षः।' पूरे लोकों का अध्यक्ष है। चुनाव नहीं करना पड़ा। पहले से आदि काल से लोकाध्यक्ष विष्णु। 'सुराध्यक्षो', देवताओं का भी अध्यक्ष विष्णु। और बहुत प्यारी बात 'धर्माध्यक्षः।' ये धर्म का अध्यक्ष है। 'कृताकृतः।'

'रामचरितमानस' कथित रामकथा में विष्णु का दर्शन अपने अनुभव से जो गोस्वामीजी हमें कराते हैं, उसमें विष्णु का अनेक रूप है। अनेक रूप ये पहला लक्षण। विष्णु के अनेक रूप हमें मिलते हैं। दूसरा, विष्णु तपस्वी है। तुलसी का विष्णु तपस्वी है। मेरे 'मानस' का विष्णु तपस्वी है। 'मानस' के विष्णु में तपबल है। तपबल उसका एक लक्षण है। अवश्य, तप का बहुत बल है। परिवार में आप रहते हो आप सच्चे हो फिर भी आपको बहुत सहना पड़ता है ये आपका तप है। इस तप को कमजोरी मत समझो, बल समझना। आज कोई तप-उपवास करना कलियुग का तप नहीं माना जाएगा। जो करे, प्रणाम करूं मैं उसको।

कलियुग का तप है मेरे भाई-बहन, जैसा मैं मानता हूं; मैं जो समझ रहा हूं और गुरुकृपा से कोशिश कर रहा हूं कि ऐसे किया जाये, सहन करो। दुनिया बहुत व्यस्त है। इस व्यस्तता में समय मिले, स्मृति आ जाये, कोई भी भले नाम लो न लो लेकिन हरि की स्मृति आ जाये और तुम्हारी आंख में आंसू आ जाये तो ये दर्द के आंसू नहीं है, ये तपस्या के आंसू है। ये तप है। याद रखो, वैरागी तप कर सकता है ऐसा नहीं है; तप आदमी को वैरागी बना देता है। तप आदमी को वैरागी बना देगा। गहने पहने हो तुमने फिर भी वैरागी माने जाओगे। तुम छप्पन भोग खाते हो, वैरागी माने जाओगे। तुमने कुछ नहीं छोड़ा; सबके मध्य में तुम हो फिर भी वैरागी। वैरागी का गणवेश नहीं होता। खैर, गणवेश हो भी; ये तो उपर का है। ये चमड़ी है, आत्मा नहीं है। श्रीमन् महाप्रभुजी कहते हैं, आदमी जब निस्साधन हो जाता है, परिपूर्ण प्रपन्न हो जाता है, प्रपत्ति जिसका स्वभाव और श्वास बन जाता है तब वो वैरागी बन जाता है। हरि की स्मृति में, प्रिय की स्मृति में अकारण आंसू आ जाये; जानते हुए तुम मुस्कुराते हुए ये सहन कर लो, भला-बुरा सबका सुनो लेकिन किसीको कुछ न कहो ये सब तप है कलियुग के। वैराग्य और सर्वदान। 'सर्वदान' महाप्रभुजी का शब्द है। सर्वदान करो। सर्वदान मानी मन का दान, बुद्धि का दान, चित्त का दान अहंकार का दान। सावधानी से सुनियेगा; देह का दान। देह का दान मानी शरीर का नहीं, देह अभिमान का दान। वहां तो देहदान लिखा है, लेकिन ये देहदान का बहुत गलत अर्थ हुआ समाज में और पूरी परंपरा इससे बदनाम होती जा रही है। क्योंकि हमने देहदान का बिलकुल स्थूल अर्थ कर लिया! देहदान का अर्थ है देह अभिमान। कोई रूप का अभिमान करे, कोई अपने सौंदर्य का अभिमान, ये अभिमान सब समर्पित हो जाये क्योंकि हमारी आंखें मूलपुरुष को ठीक से देख ही नहीं पाती! मेरे 'मानस' में एक चौपाई है। मेरी स्मृति में आता है, बोलता जाता हूं-

संत बिटप सरिता गिरि धरनी।

परहित हेतु सबन्ह कै करनी।।

साधु, वृक्ष, नदी, पर्वत और धरती; उसका स्वभाव परोपकार। परहित वही उनका कर्म है। लेकिन किसी साधु को हम देख पाते हैं। देखने के बाद भी समझ पाते हैं। ठीक से समझ पाते तो हमारा देह अभिमान, हमारा मनो अभिमान, हमारा बुद्धि अभिमान, हमारा चित्त अभिमान सब कुछ पानी-पानी हो जाये। कल हम वृक्षारोपण की बात कर रहे थे कि वृक्ष बोओ, वृक्ष बोओ। याद रखना, साधु स्वयं वृक्ष है। साधु स्वयं सरिता है। साधु स्वयं पर्वत है और साधु स्वयं धरती है। ये संत की चार व्याख्या भी हो सकती है। और ये पंच परोपकारी तत्त्व भी हो सकते हैं। 'संत बिटप'; अब साधु वृक्ष है। मेरे भाई-बहन, जरूरी हो कोई वृक्ष काटा जाये बात ओर है। बाकी अकारण वृक्ष काटना एक अर्थ में किसी साधु की हत्या करना है। क्योंकि वृक्ष साधु है। साधु वृक्ष है।

निझामुद्दीन ओलिया इमली के वृक्ष का टेका लेकर बैठा है। हमारे यहां कई पेड़-पौधे भी देवताओं के नाम पर है। जैसे विष्णु का पीपल। भगवान महादेव का वट वृक्ष। सभी देवताओं के अपने-अपने वृक्ष है शास्त्रों में। कामदेव का वृक्ष है आम। आम का पेड़ कामदेव का वृक्ष है। इमली का पेड़ है; घुटने टेककर जो उनकी चिर परिचित बैठक थी निझामुद्दीन ओलिया की। वो बैठे थे; अपनी मस्ती में डूबे थे। अमीर खुशरो उसका प्रधान शागिर्द किसी कामवश बाहर जा रहा है। रास्ते में एक फ़कीर उसको मिल गया। फ़कीर अपनी आंखों में मांग लेकर आया कि आज पीर की झांकी करूंगा। पीर के तकिये में आया है। पीर का तकिया मानी पीर का स्थान। हमारे परवाज़ साहब का एक शे'र है -

शबभर रहा खयाल में तकिया फ़कीर का ।
दिन भर सुनाऊंगा तुझे किस्सा फ़कीर का।

रातभर मेरे दिमाग में फ़कीर की कुटिया, उसकी झोंपडी उसका आसन उसकी बैठक मेरे दिमाग में रही।

हिलने लगे हैं तख्त उछलने लगे हैं ताज,
शाहों ने जब सुना कोई किस्सा फ़कीर का।

सम्राटों ने जब कोई फ़कीर का किस्सा सुना तो उसके तख्त हिलने लगे, ताज उछलने लगे। पीर बैठे हैं। फ़कीर आता है। बिलकुल इतना डिस्टन्स है कि ठीक से देख पाये बाबा को। एक क्षण में वो फ़कीर रहस्य खोज नहीं पाया। ये क्या मैं देख रहा हूं? मैं आया निझामुद्दीन का दर्शन करने के लिए और ये मेरी आंखें तो कमजोर है! और निझामुद्दीन मुस्कुरा रहे हैं। कुछ समय तो रहस्य को रहस्य रहने दिया। और वो फ़कीर बहुत मुश्किल में पड़ गया। तो पूछा, महाराज, मुझे देखते हो आप? बोले, बाबा, माफ़ करियेगा, मैं बहुत उलझन में हूं। बोले, क्या? कि कभी इमली में आप दिखते हो, कभी आप में मुझे इमली दिखती है! उसको मेरा 'मानस' कहता है 'संत बिटप।'

साधु वृक्ष है। जिन-जिन महापुरुषों को ब्रह्मज्ञान हुआ है, किसी न किसी पेड के नीचे हुआ है। बुद्ध को कहां हुआ? अभी मैं ब्रह्मदेश में म्यानमार बर्मा में था। सारनाथ से वहां भी वो वृक्ष की डाली ले लेकर इन लोगों ने अपने स्थान में बोये हैं और घेघूर वृक्ष बने हैं, जिस पेड़ के नीचे बुद्ध को बुद्धत्व हांसिल हुआ था। मेरा कागभुशुंडि, जहां नीलगिरि पर्वत है वहां चार विशिष्ट वृक्ष के नीचे उसकी साधना चलती है। तुलसी लिखते हैं, पीपर के तरु के नीचे वो ध्यान करते हैं। पाकरि के नीचे वो जप यज्ञ करते हें। आम के पेड़ के नीचे वो मानस पूजा करते हैं। और बट के वृक्ष के नीचे बैठकर हरिकथा का गायन करते हैं। वृक्ष की बड़ी महिमा है।

'संत बिटप सरिता।' साधु सरिता है। दूसरा दृष्टांत; दूसरी घटना ठाकुर रामकृष्ण परमहंस की। दक्षिणेश्वर भगवती गंगा बहती है। कलकत्ते की गंगा स्वयं सागर होने की तैयारी में है क्योंकि उसको उसके गंतव्य की ओर जाना है। और बाबा बैठे हैं। रामकृष्णदेव ठाकुर का पैतृक गांव है। उस गांव का ठाकुरकालीन एक किसान बेंगोली फटी धोती पहनी है; शरीर कृश और ऊपर का भाग काला पड़ गया मजदूरी करके। परिवारवाला आदमी है गरीब घर का। किसी ने कहा, कालिका का दर्शन करो कलकत्ते में जाकर। कालि इतनी पवित्र है, कालि इतनी उदार है, जैसी गंगा उदार है। तो वहां कालि भी है, गंगा भी है। वो बेचारा ये बात सुनकर वहां आता है। अब कालि का मंदिर बंद है। पहली मुलाकात ठाकुर की हुई। ठाकुर बैठे हैं। वो देहाती आता है। वो किसान खड़ा रहा। ठाकुर की दृष्टि गई और शायद पहचान भी गया कि ये तो मेरे गांव का वो लगता है। ठाकुर ने मुस्कुराकर बुलाया, आओ भैया। ये बेचारा बहुत आश्चर्य में! अरे, निकट आओ, निकट आओ। तीन बार ठाकुर ने कहा और वो आदमी कहता है, मुझे तैरना नहीं आता, मुझे तैरना नहीं आता, मुझे तैरना नहीं आता! ठाकुर, मुझे तैरना नहीं आता! क्योंकि उसको ठाकुर नहीं, बहती गंगा दिखी! मैं डूब जाऊंगा! मैं परिवारवाला हूं! मुझे तैरना नहीं आता! मुझे बड़ा संबल मिलता है, ठाकुर में उसको बहती गंगा दिखाई दी! विवेकानंद को दिखी कि नहीं मुझे खबर नहीं। आत्मानंद को दिखी कि नहीं मुझे खबर नहीं। लेकिन एक अनपढ़ निपट गंवार शुद्धचित्त वो महापुरुष के दर्शन में बहती गंगा का दर्शन करता है।

'संत बिटप सरिता गिरि।' मेरे साथ चलिए अरुणाचल अब। रमण महर्षि की गुफा। बादशाह रमण, जिसने पूरा जीवन Who I am ? Who I am ? Who I am ? के मंत्र में निकाल दिया। कोई गंवार नहीं आया वहां। अपने मुल्क का कोई आदमी नहीं आया न वहां। कोई फ़कीर आया। वहां जर्मनी का एक साधक आया। पिट्स जिसका नाम है वो आया। बहुत नाम सुना था रमण का। सुना था रमण महर्षि के बारे में। ये तो बहुत बड़ा पढ़ा-लिखा विदेशी है। अरुणाचल आप जानते हैं, उसी पहाड़ में ही बाबा रहे। वहां जाता है और थोड़ा वो ही डिस्टन्स। मुझे लगता है कि कुछ आध्यात्मिक एक प्रकार का डिस्टन्स जरूरी है। हमारे गुजराती का एक कवि त्रापजकर कहता है-

समीप संताप छे झाझा,
मजा छे दूर रहेवामां।

थोड़ा डिस्टन्स जरूरी है। महर्षि रमण उसकी चिर परिचित शिला जो कभी-कभी गुफ़ा से बाहर आकर बैठते। वहां बाबा रमण महर्षि बिराजमान है और वो विदेशी आता है। शायद वो ही डिस्टन्स पर रुक जाता है। वो ही अंतर, वोही दूरी। बहुत पढ़ा-लिखा। रुक गया! उसकी आंखों की भी यही हालत हुई! रमण तो बहुत मौन रहा करते थे। ज्यादा मौन रहे। तो जर्मन आदमी वो चकाचौंध हो गया, ऐसे स्तंभित रह गया! महर्षि रमण ने आवकार देते हुए कहा, वहां क्यों खड़े हो? आओ। तो बोले, मुझे लगता है, अब ओर निकट आने से मेरा सर टूट सकता है! मुझे लगता है कि पहाड की चट्टान में मैं टकरा जाऊंगा! उसको रमण नहीं दिखाई दिया, अरुणाचल दिखाई दिया! साधु पर्वत है। वहां पिट्स को रमण में अरुणाचल दिखाई दिया।

चौथे दृष्टांत पर आइए, 'संत बिटप सरिता गिरि धरनी।' साधु धरती है। अकारण जमीन को खोदना साधु को कुदाली मारना है। अकारण खनन न किया जाये भूमि का। पूरी दुनिया जितनी चिंतित है इससे ज्यादा व्यासपीठ चिंतित है पर्यावरण के लिए कि ये सब तत्त्व सुरक्षित रहे। कितना धरती का नुक्सान किये जा रहे हैं! उसका खनन, उसका शोषण भयंकर हो रहा है! साधु धरती है। महाराष्ट्र चलिए। जगद्गुरु तुकाराम बिराजमान है। वारकरी संप्रदाय का एक वैष्णव तुकारामजी के दर्शन के लिए जाता है। वो भी कोई देहाती आदमी ही रहा था। तो 'राम-कृष्ण हरि, राम-कृष्ण हरि।' गाता-गाता यह आदमी एक निश्चित दूरी पर रुक जाता है और जैसे चक्कर आने लगती है आदमी को ऐसा उनको होने लगा! तो ये आदमी को खुद को चक्कर नहीं आई। लेकिन उसको लगा कि मैं कहां खड़ा हूं? मेरे पैर धरती पर नहीं है! उसको लगा कि मेरे पैर है ही नहीं! मैं पृथ्वी से बिलग हो गया हूं! उधर तुकाराम के दर्शन और ये आदमी सोचता है कि मेरे पैर धरती पर नहीं है! मैं अवलंबन से मुक्त हूं बिलकुल। तो वो सोचने लगा कि मैं कहां हूं, कहां हूं? आसमान से मानो लटक रहा हूं, तैर रहा हूं! और जगद्गुरु तुकाराम मुस्कुराकर बोले कि क्या हो रहा है? कहता है कि मुझे आप में पूरी पृथ्वी घूमती दिखती है! मैं धरती से बाहर हूं। याद रखना, सच्चा बुद्धपुरुष का दर्शन आदमी को भूमि भी छुड़ा देता है, भूमिका भी छुड़ा देता है। दोनों से मुक्त कर देता है। सबसे दूर कर देता है। वो कहता है कि मुझे लगता है कि पूरी धरती घूम रही है और आप आप नहीं दिखाई देते! क्या हालत हुई होगी! उस आदमी को तुकाराम नहीं दिखे, पूरी धरती घूमती दिखाई दी! तब मुझे लगता है कि तुलसी की चौपाई कहां-कहां, किन-किन दिशाओं की ओर संकेत करती है!

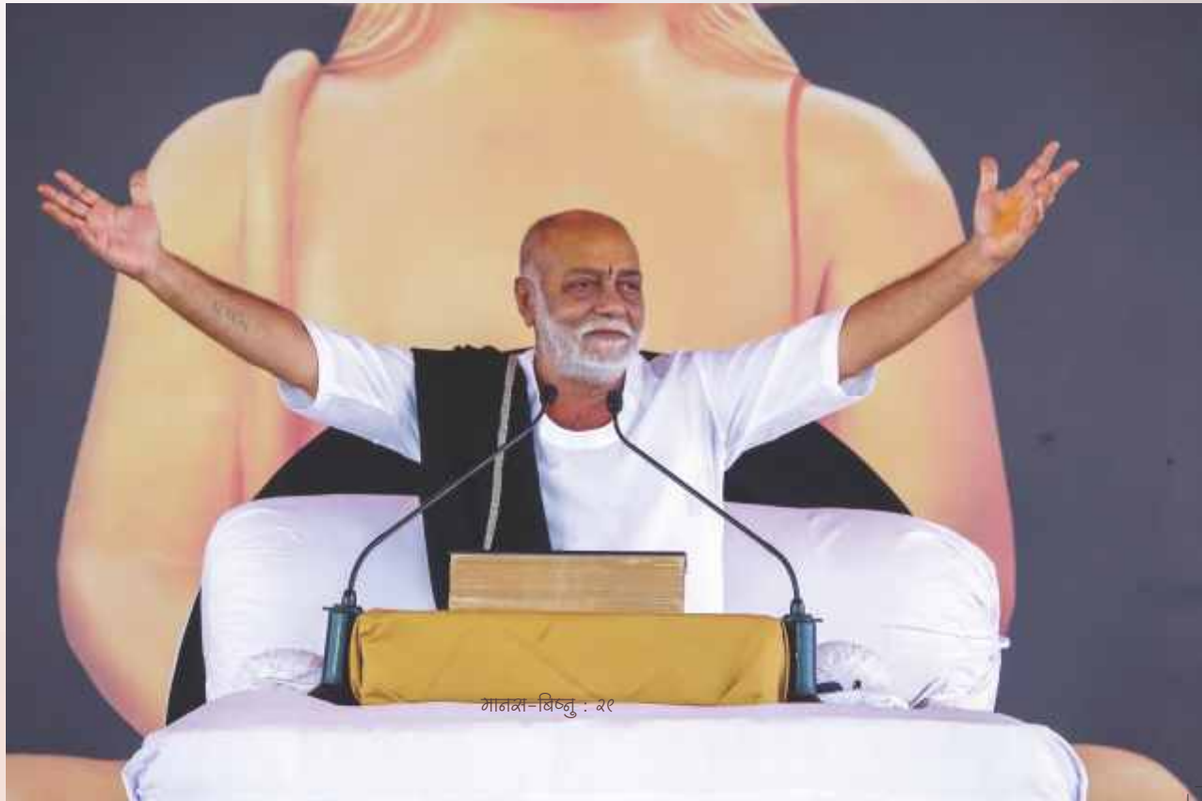

सरिता भी तपस्वी है। सब सहन करती है। कूड़ा-करकट जो भी डालो, चुपचाप ले लेती है। वृक्ष काटे जा रहे हैं, वृक्ष सहन करते हैं। पहाड काटे जा रहे हैं, सहन करते हैं, बोलते नहीं। धरती बोलती नहीं, वैसे साधु जानते हुए भी न बोले ये साधु का तप है। और ये तप जिसके पास होता है उसके पास तप बल है और तप बल जिसके पास होता है वो ही जगत का परित्राण कर सकता है। इसलिए 'मानस' का विष्णु तपस्वी है।

महाप्रभुजी वल्लभ कहते हैं, वैराग्य और सर्वदान। दूसरा बहुत प्यारा सूत्र महाप्रभुजी कहते हैं, विपत्ति काल में वचन निभाना। संपत्ति काल में तो लोग वचन निभा लेते हैं क्योंकि सुविधा है। किसी को कहा कि मैं तुम्हें पचास हजार रुपया दूंगा और संपत्तिकाल है तो दे भी देगा। लेकिन पास कुछ भी न हो उसी समय बचन निभाना ये महाप्रभुजी का एक अद्‌भुत मंत्र है। हमारी तकलीफ़ क्या है कि विपत्तिकाल में हम वचन चुक जाते हैं!

तीसरा इससे भी प्यारा सूत्र युवान भाई-बहन, बहुत मीठा सूत्र; स्थान और ज्ञान मैं विनम्र रहना। दो जगह विनम्र रहना। एक तो कोई स्थान मिल जाये, पद-प्रतिष्ठा मिल जाये उस समय ज्यादा विनम्र रहना। कई लोगों के पास स्थान होता है, ज्ञान नहीं होता। कई लोग के पास पद-प्रतिष्ठा स्थान सब कुछ, ज्ञान झीरो! है सब कुछ। स्थान इतना बड़ा। लोग जयजयकार करे, बाकी समझ कुछ नहीं! कई लोगों के पास ज्ञान बहुत है तो बेचारों को स्थान नहीं मिलता, मंच नहीं मिलता। मेरे महाप्रभुजी कहते हैं, स्थान और ज्ञान में विनम्र रहे, विपत्ति काल में वचन निभाये और वैराग्य और देहाभिमान तक दान देने का संकल्प करे उसको क्या प्राप्ति नहीं होती? उसकी नज़रों से सब दिखाई देने लगता है।

पितामाह विष्णु 'अनेकरूपरूपाय' है और तपस्वी भी है। उसके पास तप बल है और 'तप बल विष्णु सकल जग त्राता।' पूरे जगत का त्राण करता है। तीसरा लक्षण 'मानस' के विष्णु का है परिपालन, परित्राण, संभालना, पालना सत्त्वगुण से ये विष्णु पालक तत्त्व; ये लोकपाल है। 'विष्णुसहस्रनाम' में 'सर्वलोक महेश्वर' कहकर के कहा, ये लोकपाल है। भगवान विष्णु लोकपाल है। परिवार में उसको विष्णु समझना जो पूरे परिवार को सहृदयता से पालता हो। पूरे गांव को जो पाले, गांव का मुखिया हो उसमें भी कुछ अच्छे तत्त्व है, समझना वो ग्रामपाल है, राज्यपाल है, जो राज्य को पालता है। राष्ट्रपाल हो राष्ट्र का। और कोई भूमिपाल हो जो पूरी पृथ्वी को संभालता है। विष्णु भगवान ब्रह्मांडों को संभालता है इसलिए उसको पालक और परित्राण करनेवाले भी बता दिया। और आगे का 'मानस' के विष्णु का एक लक्षण, तुलसी लिखते हैं-

महादेव अवगुन भवन बिष्नु सकल गुन धाम।

जेहि कर मनु रम जाहि सन तेहि तेही सन काम।।

वहां 'मानस' के विष्णु भगवान का एक लक्षण कहा है, विष्णु 'सकल गुन धाम।' विष्णु सकल गुण का धाम है। अब सकल मानी कितना? मुझे तो इतना ही इसका अर्थ करना है सकल मानी नौ गुण। नौ से आगे कोई अंक नहीं। हम जानते हैं, पूर्णांक माना गया है। नौ पूर्ण भी है, शून्य भी है नौ। जिसमें नौ गुण हो वो सकल गुणधाम। हनुमानजी के बारे में भी तुलसी कहते हैं, 'सकल गुण निधान।' तब जाके मुझे इतना ही समझ में आया है, सकल मानी अनंत गुण।

आइए, थोड़ा समय बचा है उसमें आगे बढ़ूं। भगवान याज्ञवल्क्य के चरणों में प्रसन्न और प्रपन्न भरद्वाजऋषि ने कहा कि महाराज, भगवान शिव निरंतर राम-राम जपते हैं और काशी में मरनेवालों को मुक्ति प्रदान करते हैं। रामनाम का इतना अमित प्रभाव और उसकी महिमा संतपुराण उपनिषदों में गाई है। ये रामतत्त्व क्या है? याज्ञवल्क्य मुस्कुराये। भरद्वाजजी को कहा, महाराज, आपको राम की प्रभुता का पूरा परिचय है फिर भी आप मेरे से राम की रहस्यमयी गूढ़ कथा सुनना चाहते हैं इसलिए मूढ़ की तरह पूछ रहे हैं। लेकिन महाराज, आप जैसे श्रोता मिले तो मैं जरूर रामकथा गाऊंगा। ये रामकथा कहने से पहले मैं आपको शिवकथा सुनाऊं। और शिवकथा का आरंभ करते हैं। एक बार के त्रेता युग में भगवान शंकर दक्ष की बेटी सती जो शिव से ब्याही थी उसको संग लेकर कुंभज ऋषि के आश्रम में कथा श्रवण करने के लिए गए। जैसे शिव और सती कुंभज के आश्रम में आये, कुंभज जी बहुत प्रसन्न हुए। शिव और सती की उसने पूजा की, स्वागत किया। शिवजी ने उसका बहुत सुंदर अर्थ लिया कि वक्ता का पूजन करना श्रोता का धर्म है तो मुझे महात्मा की पूजा करनी चाहिए, लेकिन धन्य है महात्मा कि ये मेरी पूजा करने लगा! लेकिन सती ने गलत अर्थ कर दिया कि ये बाबा तो सीधा हमारी पूजा करने लगा! ये क्या खाक कथा सुनायेगा! जिसका जनम घड़े से हुआ हो वो समुद्र जैसी कथा क्या खाक सुनायेगा! शिव-सती दोनों बैठे।

कथा शुरू हुई। वहां तुलसी ने शब्द लिखा, 'सुनि महेस परम सुख मानी।' आये थे तब सती साथ में थी; सुन भी रही है लेकिन सती ने कथा में ध्यान नहीं दिया। इसलिए तुलसीदासजी ने श्रोता के वृंद से उसका नाम हटा दिया।

कथा पूरी हो गई। शिवजी ने पूछा, आपने मुझे कथा का दान दिया है; मैं आपकी क्या सेवा करूं भगवन्? कुंभजऋषि ने कहा, प्रभु, आप मुझे भक्ति के सूत्र सुनाओ। भगवान शिवजी अधिकारी समझ कर कुंभजऋषि को भक्ति की कथा सुनाते हैं। फिर शिव और सती कैलास जाने के लिए लौटे। रास्ते में दंडकारण्य पड़ता था। वर्तमान त्रेतायुग की राम की लीला वर्तमान थी। सीता का अपहरण हो गया। राम-लक्ष्मण पागल की तरह जानकी के वियोग में रोते हुए जानकी की खोज करते हुए सीते-सीते करके घूम रहे हैं। उसी समय शिव और सती निकले। भगवान सोचने लगे कि मेरे भगवान तो लीला कर रहे हैं। अचानक मुख से शब्द निकल जाता है, 'हे सच्चिदानंद, हे जगपावन।' सती ने देखा, ये आदमी पत्नी के विरह में कामी की तरह चिल्ला रहा है, रो रहा है और मेरे पतिदेव ने उसको प्रणाम किया? सती की ये असमंजसता देखकर भगवान शिव कहते हैं, देवी, संदेह न करो। जिसकी कथा कुंभज ने गाई, मैंने भक्ति कही ये मेरे इष्टदेव राम है। कृपालु महादेव ने बारबार कहा फिर भी सती को उपदेश नहीं लगा। सती मानने को तैयार नहीं है। शिवजी ने कहा, देवी, आप जाइए, स्वयं परीक्षा करके निर्णय करे कि ये ब्रह्म है कि मेरा भ्रम है। सती तुरंत तैयार हो गई परीक्षा करने के लिए। जो बुद्धिप्रधान व्यक्ति होते हैं वो परीक्षा करके ही मानते हैं! और ईश्वर प्रतीक्षा का विषय है, परीक्षा का नहीं। शिवजी ने फैसला किया कि जो परमात्मा ने रचा होगा वो ही तो होता होगा। शिवजी बैठकर हरिनाम का जप करने लगे। मेरे भाई-बहन, परिवार में किसी को समझाने के लिए आप पूरे प्रामाणिक प्रयत्न कर ले फिर भी सामनेवाली व्यक्ति यदि माने ना तो फिर उदास भी मत होना। हरिनाम का आश्रय करना। फिर प्रभु पर छोड़ देना।

सती जाती है राम की परीक्षा करने के लिए। बहुत सोचा और सीता का रूप लिया। प्रभु राम सती को देखकर पहचान गये और कहा, मैं दशरथ का आत्मज हूं राम। आपको प्रणाम कर रहा हूं। हमारे पिता शंकर कहां है? रंगे हाथ पकड़ी गई और वापस लौटी। महादेव हरि नाम जप रहे थे। मुस्कुराकर पूछा कि देवी, आप कुशल तो है? निर्णय हो गया कि राम ब्रह्म है कि क्या है? अब सती झूठ बोली कि महाराज, मैंने कोई परीक्षा नहीं ली। आंखें बद कर महादेव ने ध्यान में देखा तो सब पकड़ा गया! हृदय में राम से प्रेरणा प्राप्त की कि सीता तो मेरी माँ लगती है। सती ने सीता का रूप लिया तो आज से सती भी मेरी माँ लगेगी। अब सती के साथ मेरा सांसारिक कोई रिश्ता नहीं रहेगा जब तक सती का ये शरीर रहेगा। शिव ने ये संकल्प लिया। सहज स्वरूप अनुसंधान किया और महादेव समाधि में बैठ गये।

सत्तासी हजार साल बीत गये। शिव स्वाभाविक जागे। 'राम-राम' बोलने लगे। सती सन्मुख गई। शिवजी कुछ रसप्रद कथा सुनाने लगे और इतने में दक्षयज्ञ की कथा आई। सती ने प्रश्न पूछा, ये देवतालोग कहां जा रहे हैं? बोले, आपके पिता के घर यज्ञ है। मुझे, ब्रह्मा, विष्णु तीनों को आमंत्रण नहीं दिया है तुम्हारे पिता ने। सती मानी नहीं। पिता के यज्ञ में गई। भगवान शिव का अपमान सहा नहीं गया। दक्ष यज्ञ में, योग अग्नि में सती अपने जीवन का बलिदान देती है। जलते समय ईश्वर से मांगा कि जनम-जनम मुझे शिव ही पति के रूप में मिले। इसी कारण सती का दूसरा जन्म नगाधिराज हिमालय के घर पार्वती के रूप में होता है। दक्ष की कन्या के रूप में बौद्धिकता नष्ट हो गई और हार्दिकता प्रगट हो गई। बुद्धि समाप्त हुई, श्रद्धा प्रकट हो गई हिमालय की पुत्री के रूप में। फिर नारदजी जाते हैं। नामकरण करते हैं। फिर शंकर के लिए तप करने को कहते हैं और भवानी तप करती है। भगवान शिव को यहां राजी कर दिया जाता है कि आप पार्वती का स्वीकार करो। अब वो सती नहीं है, पार्वती है। और भगवान शिव शंकर विवाह के लिए तैयार होते हैं। और फिर देवतागण ब्रह्मा, विष्णु आदि शिवजी को ब्याह करने के लिए राजी करके शिव की बारात की तैयारियां शुरू होती है। शिव बारात की कथा थोड़ी कल कहकर हम कथा को आगे चलाएंगे।

याद रखना, साधु स्वयं वृक्ष है। साधु स्वयं सरिता है। साधु स्वयं पर्वत है और साधु स्वयं धरती है। ये संत की चार व्याख्या भी हो सकती है। और ये पंच परोपकारी तत्त्व भी हो सकते हैं। 'संत बिटप'; साधु वृक्ष है। मेरे भाई–बहन, जरूरी हो कोई वृक्ष काटा जाये बात ओर है। बाकी अकारण वृक्ष काटना एक अर्थ में किसी साधु की हत्या करना है। क्योंकि वृक्ष साधु है। साधु वृक्ष है। जिन–जिन महापुरुषों को ब्रह्मज्ञान हुआ है, किसी न किसी पेड़ के नीचे हुआ है। वृक्ष की बड़ी महिमा है।

मानस-बिष्नु : ५

धर्मगुरु अपनी एक परंपरा में आते हैं, सद्गुरु को अपनी प्रवाही परंपरा प्रगट करनी पड़ती है

'रामचरितमानस' की रामकथा में भगवान विष्णु का जो दर्शन हैं अनेक रूपरूपाय, उसको केन्द्र में रखते हुए इन दिनों में रामनवमी के पवित्र अवसर पर हम आगे बढ़ रहे हैं तब भगवान विष्णु का हम दर्शन कर रहे हैं। आपकी कुछ जिज्ञासाएं; खास कर के युवकों और उससे भी कम उम्रवाले भाई-बहनों की जिज्ञासाएं हैं।

''मैं बारह साल का हूं। मैं जानना चाहता हूं, आप हमेशा काले और सफेद कपड़ें क्यों पहनते हैं?'' ऐसे ही। बेटा, तू अभी बारह साल का है इसलिए तुमने पुरानी फिल्म नहीं देखी है। पहले तो सब ब्लेक एन्ड व्हाईट ही था। हमारा आदिकाल ब्लेक एन्ड व्हाईट ही है। श्वेत या तो श्याम, इन दो किनारों में बहती है भारतीय सभ्यता। ये रंग रंगनियां कुछ पाश्चात्य है। यद्यपि हम भी रंग के उपासक हैं; उसका कोई अनादर नहीं है। मैं भी पहले कुर्ता-कफ़नी वगैरह पहनता था वो भी कभी केसरी रंग के, पीले रंग के, कभी ग्रे रंग के ऐसा पहनता था। लेकिन मेरी आत्मा को जो छूता है वो रंग श्याम और सफेद है क्योंकि तुलसी ने 'रामचरितमानस' लिखा तो पत्ते श्वेत थे, स्याही श्याम थी। और कहा जाता है कि गाय काली हो, दूध तो श्वेत ही होता है। तो ये तो अपनी अपनी रुचि का ही प्रश्न है; ओर कुछ भी नहीं। दूसरी बात आपने पूछी, आप काले रंग का टीका क्यों लगाते हो यानी बिंदी क्यों करते हो? बेटे, सब की अपनी-अपनी धाराएं होती है। वैसे हम निम्बार्कीय परंपरा में आते हैं। निम्बार्कीय परंपरा कृष्ण उपासकी परंपरा है और उसमें काली बिंदी एक प्रवाही परंपरा का चिह्न है इसलिए हम काली बिंदी करते हैं।

''बापू, जय सियाराम। बुद्धपुरुष विष्णु के दसवें अवतार है। बापू, दसवें अवतार बुद्धपुरुष के नित्य प्यारे बनने के लिए आश्रित को कौन-से अनुशासन का पालन करना होता है ये बताईये।'' एक युवक ने पूछा कि किसी बुद्धपुरुष को प्रिय होने के लिए कौन-से अनुशासन को पालना? कोई अनुशासन नहीं, शासन नहीं। मैं इतना ही कहूंगा बिनती के रूप में कि किसी बुद्धपुरुष को हम प्यारे बन जाये ऐसा हम चाहते हैं तो आप माला जपो, 'रामायण', 'भगवद्गीता' का पाठ करो ऐसा कोई सुझाव मैं देनेवाला नहीं। ये करो तो आपकी मौज; बहुत विशेष मेरी प्रसन्नता होगी। अनुशासन के रूप में नहीं, नियम के रूप में नहीं, व्रत के रूप में नहीं; मैं इतना ही कहूं, तीन वस्तु न करो, बुद्धपुरुष को प्रिय हो जाओगे। एक, किसी की ईर्ष्या न करो। दूसरा, किसी की निंदा न करो और तीसरा, किसी से द्वेष न करो। इस पर मैं बहुत बल देकर इतने सालों से बोल रहा हूं। मेरी व्यासपीठ के जैसे तीन पोझिटिव सूत्र है सत्य, प्रेम, करुणा। इनके सामने ये सूत्र भी है, न किसी की ईर्ष्या, न किसी की निंदा, न किसी से द्वेष। बुद्धपुरुष क्या जिसके भी प्यारा होना चाहोगे, आप हो जाओगे। और यदि ये तीनों न छूटे और तुम लाख चौबीस घंटे नाम जप करो, पाठ पारायण करो, कथा सुनो, ये सब अच्छा है लेकिन जैसे मैं कहता हूं कि बुद्धपुरुष की समता तो रहती है, ममता छूट जाती है।

प्रार्थना के रूप में कहूं कि बेटे, आप युवान हो, भगवद्कथा में रुचि है, बहुत सावधान रहो कि कोई हम से आगे निकल जाये तो उसकी ईर्ष्या मत करना; दुआ देना कि आखिर ये हमारा ही आदमी है, आगे निकल गया वो अच्छी बात है। निंदा नहीं। निंदा और ईर्ष्या में भेद भी है। निंदा जीभ से होती है और ईर्ष्या जीव से होती है। ईर्ष्या करनेवाला दिखता नहीं लेकिन अंदर से जलन होती है! और कई लोग जीवनभर द्वेष करते हैं! पूरी ज़िंदगी द्वेष! तीन ही काम करें। खास कर ये युवानों से मैं प्रार्थना करूं, खूब पढ़ों, खूब आगे बढ़ों। मेरे पास युवा भाई-बहन मिलने आते हैं; कुछ शे'र-शायरी कहते हैं; मैं तुरंत उसको बुलाकर मेरे निकट बुला लेता हूं। क्योंकि मैं इनमें संभावना देख रहा हूं। मैं उनमें आज नहीं देख रहा हूं, कल देख रहा हूं। ये आदमी कुछ करेगा। कल बाबुजी ने वरिष्ठ भाई-बहनों को शाम को मिलवाया। वो पूछ रहे थे कि आजकल युवान लोग सब ऐसा है, उसको सुधारने के लिए क्या करे? कुछ नहीं, उसको स्वीकार करो। किसी को तुम सुधारने के लिए निकलोगे तो किसी को अच्छा नहीं लगेगा। वो जैसा है उसको गले लगाओ; उसका स्वीकार करो। मेरे निरंतर सुननेवाले सब जानते हैं, मेरा एक मात्र मानना है, मैं किसी को सुधारने के लिए आया ही नहीं। मेरा काम है सब को स्वीकारना। और जब हम स्वीकारना सीख लेंगे तो युवानी बहुत कुछ काम कर सकती है।

'रामचरितमानस' में लिखा है, जब कागभुशुंडि को गरुड ने पूछा कि सब से बड़ा पुण्य क्या और सब से बड़ा पाप क्या? सब से बड़ा धर्म क्या और सब से बड़ा अधर्म क्या? तब कागभुशुंडि ने 'उत्तरकांड' में जवाब दिया है वो पंक्ति आप सुनिए-

परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा।

पर निंदा सम अघ न गरिसा।।

तुलसीजी कहते हैं, हिन्दु धर्म नहीं, मुस्लिम धर्म नहीं, बुद्धत्व, कोई धर्म का विशेष नाम नहीं लिया यहां। परमधर्म, श्रेष्ठ धर्म ये है बेटा। भगवान वेद भी जिसको महोर लगाते हैं। यद्यपि फिर मैं एक बार कहूं, हिन्दु सनातन धर्म के होने कारण हमें गौरव होना चाहिए। हमें उसका बहुत आनंद होना चाहिए लेकिन फिर भी भारत के ऋषि-मुनि ने भारत को बहुत विशालता से प्रस्तुत किया। परमधर्म, 'परम' शब्द लगाया वरना कह सकते थे हिन्दु धर्म, इस्लाम धर्म, बौद्ध धर्म, जैन धर्म, इसाई धर्म। कोई भी नाम ले सकते थे धर्म का। सब धर्म अपनी जगह धर्म है लेकिन तुलसी की विशालता देखिये! ओशो की जो-जो अच्छी बातें है उसको बहुत श्रद्धा के साथ, आदर के साथ ऋणमुक्ति के भाव से मैं उसका नाम लेकर कहता हूं। लेकिन ओशो ने भी तुलसी के बारे में कुछ कोमेन्ट किये हैं उसके साथ मैं सहमत नहीं हूं। ओशो कहते हैं कि तुलसी धर्मगुरु और कबीर सद्गुरु है। तो ये आधा सत्य बोल गये! कबीर सद्गुरु नि:शंक है लेकिन तुलसी धर्मगुरु नहीं है। तुलसी परमगुरु है। आप बिना तुलसी के साहित्य को पढ़े तो अन्याय कर रहे हैं! मेरा कोई पक्षपात नहीं कि तुलसी की वकालत करूं। सोलहवीं शताब्दी में हुई एक महान चेतना तुलसी है। कलिपावनावतार जिसको कहा गया। मैं जैसे बुद्धपुरुष को दसवां अवतार कहता हूं। तुलसी को अवतार कहा है। कलिपावनावतार; कल्कि अवतार नहीं, कलि पावन अवतार। ये दसवां अवतार है। अपने कुछ पूर्वग्रह बुद्धपुरुषों पर न लादे जाय। और मैं स्वयं कभी-कभी कहता हूं कि गोस्वामीजी तुलसीदासजी ने कुछ बातें 'मानस' में ऐसी लिखी, जिससे मैं भी सहमत नहीं हो पाता। यस, मैं तुलसी से प्रेम करता हूं। तुलसी का गुलाम नहीं हूं। प्रेम करना गुलामी नहीं है। 'विष्णुसहस्रनाम' में भगवान को कामी कहा।

कामदेव: कामपाल: कामी कान्त: कृतागम:।

विष्णु कौन है? विष्णु को कामी कहा! विष्णु कामी है क्या? कोई भी देह धारण करता है ना उसमें काम होता ही है; थोड़ा-बहुत सब ही कामी होते हैं, दंभ न करे। याद रखना, इस कथा का सूत्र, घमंड अच्छा है, पाखंड अच्छा नहीं। मेरा व्यास, मेरा दादा भीष्म, मेरा वैष्णंपायन 'विष्णुसहस्रनाम' में 'महाभारत' में विष्णु को कामी कहते हैं। और सभी आचार्यों ने उसका भाष्य कुबूल किया कि कामी मानी पूरे जगत को चाहनेवाला; उसी अर्थ में वो कामी है। चाहनेवाला, प्रेम करनेवाला जिसको सभी के प्रति प्रेम है। मेरा राम कौन है?

सब मम प्रिय सब मम उपजाए।

सब ते अधिक मनुज मोहि भाए।।

कामी मानी प्रेमी। शुरूआत का प्रेमी कामी होता है। सीढ़ी पर चढ़ा हुआ प्रेमी विष्णु बन जाता है; परम बन जाता है। और संतों ने कुबूल करने में कोई कमी नहीं छोड़ी। मध्यकालीन संतों ने हस्ताक्षर कर के दुनिया को दिया और गाया भी। 'मो सम कौन कुटिल खल कामी।' धन्य है, भीष्म कहता है, विष्णु का एक नाम है कामी। जीव को कामी कहे तो बुरा लगता है, गाली लगती है और यहां भीष्म विष्णु को कामी कह रहा है। उसकी चर्चा हो रही है, उसकी कथाएं हो रही है, उसकी आरती उतर रही है! क्योंकि कामी मानी चाहनेवाला, कामी मानी प्रेम करनेवाला। आप सत्य ही बोलो तो आपको काम छोड़ना नहीं पड़ेगा, काम छूट जाएगा; मैं वादा करता हूं। आप पूरी दुनिया को प्रेम करो, आपको क्रोध छोड़ना नहीं पड़ेगा, क्रोध छूट जाएगा।आप पूरे अस्तित्व से करुणा करो तो आपको लोभ छोड़ना नहीं पड़ेगा। कभी प्रयोग कर के तो देखो। हमने उलटा कर दिया! सत्य छोड़ दिया, काम न छोड़ा! दंभ और पाखंड के कारण हम दूषित है। कैसे है विष्णु? कामदेव है। जीव के मन में छोटे-बड़े विषयों की जो जो कामना अभिलक्षित है, जो उसकी ईच्छाएं होती है कि मैं ये पाउं, ये पाउं इन सभी छोटी-बड़ी कामनाओं को पूर्ण करनेवाला विष्णु स्वयं कामदेव हैं। 'कामपाल:' हमारी छोटी-बड़ी कामनाओं का ये पालक है; ध्वंसक नहीं, काम पालक है।

मैं ओशो की बात कर रहा था कि आपने कहा, तुलसी धर्मगुरु है। कबीरसाहब तो एक हजार बार सद्गुरु क्या, परमगुरु है। लेकिन तुलसी धर्मगुरु? मैं किसी का विरोध न करूं लेकिन स्वीकारूं भी नहीं। बिना तुलसी को पढ़े इल्जाम मत लगाओ! और मैंने ये भी कहा कि मेरी अपनी निजता हैं। कई बात तुलसी की यदि मैं न समझ पाया हूं, हो सकता है, मैं एग्री नहीं हो सकता; उसमें तुलसी भी नाराज नहीं होंगे। ये सोलह सौ में कही बात है, आज प्रासंगिक न भी हो; तो उसका संशोधन होना

चाहिए। ओशो इतने महान हस्ती है, उसकी बातें मैं जो मुझे अच्छी लगे वो कहता रहता हूं लेकिन मेरी भी तो निजता है ना कि जो मुझे ठीक न लगे, मैं विनय से कहूं कि मैं राजी नहीं हूं इससे। फिर भी मैं राजी हूं कि कम से कम तुलसी को धर्मगुरु तो कहा! वरना कुछ भी कह देते!

'बापू, मैं ग्यारह वर्ष का फ्लावर हूं। आपके जीवन में रामकथा का क्या महत्त्व है?' क्या जवाब दूं यार! महत्त्व को छोड़िए। रामकथा मेरी सांस है। मैं इससे जी रहा हूं। जैसे कोई बीमार हो जाता है चौबीस घंटें ओक्सिजन पर रखना पड़ता है। एक मास्क जैसा लगा देते हैं, मैं चौबीस घंटें इसके आधार पर सांस ले रहा हूं। महत्त्व छोड़िए, ये जीवन है मेरे लिए। दूसरा, छोटे फ्लावर सुन। छोटे-छोटे बच्चें कितने प्यारे प्रश्न पूछते हैं! उसने मुझे पूछा कि 'बापू, क्या इस जन्म से आप खुश है?' अरे बेटा, बहुत खुश हुं यार! हां, मरना तो पड़ेगा बाकी तो मरना भी नहीं है, इतने खुश है। लेकिन मरना तो पड़ेगा। जब मौत आयेगी तो कैसे टाला जाएगा? अब स्वीकार का ही धर्म कुबूल किया है। किसी का सुधार नहीं, स्वीकार। मौत आयेगी तो उसका भी स्वीकार कर लेंगे लेकिन मैं खुश बहुत हूं। और जो जीवन से खुश नहीं वो क्या जीया, क्या जन्मा? इसका जीवन वृथा है। खुश है हम, इस जीवन से आप भी खुश रहो। ये जीवन मौज करने जैसा है, आनंद में जीने जैसा है। मैं बहुत खुश हूं। कई लोग तो खबर नहीं क्या हो गया है! पांच मिनट बात करेंगे ना तो दस बार 'मर गया, मर गया' बोलते हैं! तो तेरा संस्कार ही बाकी है! तू जीता कहां है? हम खुश हैं, आप भी खुश रहना।

'बापू, क्या आप इस जन्म में मुक्ति पाना चाहते हैं?' नहीं, मुक्ति-बुक्ति नहीं। हम को तो बार-बार जन्म लेना है। और हिन्दुस्तान में ही लेना है, भारत में ही जन्म लेना है। और मैं कई बार बोला हूं। प्रांत आदि न समझे प्लीज़! हां, सब को अपना आशियाना प्रिय लगता है। मैं तो बहुत बार एलान कर चुका हूं कि पृथ्वी पर जनम लेना है, पृथ्वी में भी भारत में कहूं ये मेरा, हम सब भारतीयों का आनंद होता है। मैं कल रात बशीर बद्रसाहब की एक ग़ज़ल पढ़ रहा था। उसमें उसने हिन्दुस्तान की तारीफ़ की है। मैं मिलने गया; बूढ़े शायर की खबर पूछने गया कि उस्ताद को जरा खबर तो पूछ लूं! एक शे'र से आदमी पूरे जगत में फेमस हो गया है!

उजाले अपनी यादों के हमारे साथ रहने दो।
न जाने किस गली में ज़िंदगी की शाम हो जाये।

एक शे'र से मशहूर हो गये बशीरसाहब! हिन्दुस्तान का गौरव है साहब! पूरी पृथ्वी को हम माँ कहते हैं, 'वसुधैव कुटुम्बकम्।' कहनेवाले हम लोग; फिर भी भारत की महिमा तो है ही, होनी चाहिए।

ये एक बहुत अच्छा प्रश्न पूछा, ''बापू, जिस रास्ते से आते हैं उस रास्ते में एक बहुत बड़ा राष्ट्रध्वज फहर रहा है। तो बापू, राष्ट्रध्वज किस कपड़े से बनना चाहिए?'' शायद मुझे संविधान की खबर नहीं हैं लेकिन बहुधा राष्ट्रध्वज खादी के ही बनते हैं। खादी के ही होने चाहिए। खादी के ही होंगे। लेकिन कभी-कभी राष्ट्रध्वज मैं देखता हूं तो जिस तरह वो फहरता है वो खादी नहीं लगती, सिल्क लगता है। तो शायद खादी सिल्क है। खादी के ही होंगे जहां तक मुझे खबर हैं। कोई सिल्क कपड़ा हो तो खादी सिल्क होगी। जो हो, लेकिन राष्ट्रध्वज खादी का ही होना चाहिए। मेरा बस चले तो मंत्रीयों को खादी ही पहनी चाहिए। सप्ताह में एक बार पहने और सात दिन ऐसा-ऐसा नहीं! रोज पहननी चाहिए। वैसे भी तो हम आधे-आधे घंटें में कपड़ें बदलते हैं! और मेरे श्रोताओं को भी कहता हूं कि साल में दो-तीन पेर खादी की बनवाईयेगा, कुर्ता-पायजामा। युवान भाई-बहनों को कहूं। गांधीजी ने कहा था, खादी वस्त्र नहीं है, वृत्ति है, विचार है। लोग कहते हैं कि खादी बहुत महंगी पड़ती है! अरे यार! एक पान खाते हो तो सौ रुपये लग जाते हैं। थोड़ी महंगी तो महंगी। कितनी महंगी? आप कितनी महंगी पीते हो, पूछो अपने आप को! और मेरे श्रोता भाई-बहन पहनते हैं, मुझे उसका आनंद हैं। साल में दो-तीन पेर खादी की रखनी चाहिए।

तो भारत में ही जन्म लेने की स्वाभाविक इच्छा रहती है। और फिर प्रांतवाद न समझे प्लीज़! भारत में भी गुजरात में ही जन्म लेने की इच्छा है। और गुजरात में भी सौराष्ट्र में। सौराष्ट्र में भी भावनगर डिस्ट्रिक्ट में। भावनगर डिस्ट्रिक्ट में भी महुवा तहसील में। महुवा तहसील में भी मेरा एक छोटा-सा गांव है तलगाजरडा, वहीं जन्म लेना है। और परमात्मा के दरबार में यदि व्यवस्था हो तो जिस माँ के पेट से पैदा हुआ था वो ही माँ के पेट से आना है। क्योंकि कई घड़े को दूसरा निंभाडा अनुकूल नहीं पड़ता यार! ये तो मनोरथ है साहब! बाकी मुक्तिवादी आदमी मैं नहीं हूं, मैं जीवनवादी हूं। बार-बार जनम लेना चाहिए। जगद्गुरु शंकराचार्य ने क्या मांगा अपने 'देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्' में?

न मोक्षस्याकांक्षा भवविभववाञ्छापि च न मे
न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि सुखेच्छापि न पुनः।

मुझे मोक्ष नहीं चाहिए। मेरे 'रामचरितमानस' का भरत कहता है-

अरथ न धरम न काम रुचि गति न चहउँ निरबान।
जनम जनम रति रामपद यह बरदानु न आन।।

और मेरा नरसिंह मेहता गुजराती में बोल गया-

हरिना जन तो मुक्ति न मांगे
मागे जनम जनम अवतार रे।

और जिसका धर्म ईस्लाम है, जिसकी अदब उर्दू है, ऐसा खुमार बाराबंकवी साहब क्या कहते हैं? वो भी कहते हैं-

मेरे राहबर मुझको गुमराह कर दे।
सुना है कि मंज़िल करीब आ रही है।

मुझे लगता है, मोक्ष, मंज़िल, कयामत सब निकट आ गया है, मेरे राहबर, हे मेरे बुद्धपुरुष, मुझे फिर गुमराह कर दे, मैं बार-बार लौटूं।

न हारा है इश्क न दुनिया थकी है,
दीया जल रहा है हवा चल रही है।

बड़ा दर्द से भरा खुमार साहब का शे'र। एक शायर की पीड़ा जब कभी देश में किसी मज़हब के नाम पर या किसी कारण जब दंगे होते हैं और जब घर जलाये जाते हैं, कुछ भी होता हो दुनिया में, उसी दर्द से निकला खुमार का ये शे'र! बशीर साहब का भी दर्द एक शे'र में आता है कि-

लोग टूट जाते हैं एक घर बनाने में।
तुम तरस नहीं खाते बस्तियां जलाने में।

कोई भी सर्जक की समकालीन पीड़ा होती है साहब! सर्जक सांप्रदायिक नहीं होता। हो तो सर्जक नहीं! वो कायम बिनसांप्रदायिक होता है।

'आपकी नज़र में भगवान को पाने का सब से अच्छा तरीका कौन-सा है?' भगवान को पाना है ही नहीं। ओलरेडी प्राप्त है, केवल पहचान बाकी है। पाने का सवाल ही नहीं उठता। उसको पाने के लिए दिशांतर की जरूरत नहीं, भाषांतर की जरूरत नहीं, पटांतर की जरूरत नहीं, कालांतर की जरूरत नहीं, पहचान बाकी है। केवल पर्दा हटे और हम न हटा पाये तो किसी बुद्धपुरुष का आश्रय करे जो हमारा पर्दा हटा दे। बस, सद्गुरु की इतनी ही जरूरत है जो पर्दा हटा दे। फिर दूर हट जाए। पूजारी बांके बिहारी का पर्दा हटाकर फिर आगे खड़ा रहे तो हम दर्शन नहीं कर पाएंगे। पूजारी का कर्तव्य है, पर्दा हटाने के बाद वो भी साईड में हट जाये। बुद्धपुरुष वो है जो नकाब हटाकर के आमने-सामने कर दे। तो ईश्वर तो प्राप्त है। बहुत बुनियादी भूल हुई है जीव की।

'बापू, क्या आप चाहते हैं कि लोग आपको गुरु माने?' नहीं, बिलकुल नहीं। नहीं बेटा, मैं गुरु हूं ही नहीं। मैं फिर मजबूरसाहब को याद करूं-

ना कोई गुरु ना कोई चेला।
मेले में अकेला अकेले में मेला।

मेरे गुरु जगद्गुरु शंकराचार्य ने यही सिखाया है। उसके मंत्रों को दोहरा दूं। वहां कहा है, 'गुरुर्नैव शिष्यः।' जगद्गुरु आदि शंकर कहते हैं, मैं न गुरु हूं, न शिष्य। आपने पूछा है कि आप गुरु बनना चाहोगे? बहुत खतरा है गुरु बनने में। जो बने हैं वो सब जानते हैं। जो बने हैं, बन बैठे हैं, सब जानते हैं कि कितना खतरा हैं! सत्य के आश्रित बने रहो, प्रेम के आश्रित बने रहो, करुणा के आश्रित बने रहो। तो आपने पूछा है कि आप गुरु बनना चाहेंगे कि नहीं? मैं मेरे त्रिभुवनदास दादा, मेरा सद्गुरु भगवान, उसको वो राजी रहे ऐसा आश्रित बन पाउं तो भी बेडापार है। बुद्धपुरुष बनना, सद्गुरु होना ये कोई सामान्य वस्तु नहीं हैं साहब! हां, ये गुरुजन जो हुए हैं उनके लिए क्या कहूं साहब! धर्मगुरु होना गलत नहीं हैं लेकिन धर्मगुरु से उपर की बात है सद्गुरु, जिसको इस कथा में विष्णु का दसवां अवतार मानता हूं। धर्मगुरु अपनी एक परंपरा में आते हैं, सद्गुरु को अपनी प्रवाही परंपरा प्रगट करनी पड़ती हैं। सद्गुरु की कौन परंपरा होती हैं? उसको तो अ, ब, क से शुरू करना पड़ता है। बुद्ध ने नये सिरे से शुरू करना पड़ा। कबीर को नये सिरे से शुरू करना पड़ा। महावीर नये सिरे से शुरू करते हैं। प्रत्येक बुद्धपुरुष को एक नई प्रवाही रीत प्रगट करनी होगी, वो शृंखला का हिस्सा नहीं होता है। वो कोई बिलग मिट्टी का आदमी होता है।

कई कुलगुरु होते हैं। जो अपने कुल का, परिवार का गुरु होता है, जिसको हम उपुरोहित कहते हैं। जो हमारे घर में सब कुछ वो धर्म क्रिया होती है; उसको बुलाते हैं, कर लेते हैं। बड़ा अच्छा है आदरणीय स्थान कुलगुरु। कई राज्यगुरु होते हैं। राजा के गुरु होते हैं। राज्य के स्टेट के गुरु होते हैं। फिर तो देश-काल बदल गया इसलिए कई राजकीय गुरु भी होते हैं। तो कुलगुरु होते हैं, राजगुरु होते हैं, धर्मगुरु होते हैं, जो अपने-अपने धर्म की महिमा दुनिया को सिखाते हैं। उसके बाद जगद्गुरु होते हैं, जैसे शंकराचार्य आदि को जगद्गुरु कहा। अत्रि ऋषि ने राम को जगद्गुरु कहा। और कृष्ण को तो हमनें जगद्गुरु ओलरेडी कहा। लेकिन उसके आगे आता है सद्गुरु। सद्गुरु के आगे अथवा तो पर्याय, उसको परमगुरु कहते हैं। ऐसी जो परम अवस्थावाले महापुरुष उसको मेरी व्यासपीठ विष्णु का दसवां अवतार मानती हैं।

तो बाप! 'मानस-बिष्नु' का हम दर्शन कर रहे हैं, बिलग-बिलग एन्गल से, बिलग-बिलग दृष्टि से। भगवान विष्णु हमें पांच प्रकार के कर्मों का बोध देते हैं। भगवान विष्णु ने, भगवान नारायण ने पंचकर्म की सूचना दी है। आप वैष्णव न हो, आप ईस्लाम धर्म मानते हो, बौद्ध हो, जैन हो, कोई भी हो लेकिन पूर्वग्रह न हो, कोई कट्टरता और ग्रंथिबंधन न हो तो ये पांच कर्म हमें मानने पड़ते हैं क्योंकि विष्णु कथित है। और विष्णु व्यापक दृष्टि से बोलते हैं, संकीर्ण दृष्टि से नहीं।

मैं युवान भाई-बहनों को खास कहना चाहूंगा कि हमें ये पांच कर्म करने चाहिए। कर्म तो करना ही पड़ेगा; तो क्यों ना हम ये पांच कर्म करें? और इसमें कोई धार्मिक लेबल की जरूरत नहीं है। स्वाभाविक करने चाहिए। वैष्णवी परंपरा में, नारायणी परंपरा में, यानी विशाल परंपरा में पंचकर्मों का उल्लेख मिला। पंचकर्म हम करते हैं लेकिन उसकी समझ आ जाये तो बेटर हैं। एक कर्म होता है हमारा नित्यकर्म। प्रत्येक व्यक्ति का अपना नित्यकर्म होता है। दूसरा कर्म है निमित्त कर्म। तीसरा कर्म है काम्यकर्म। चौथा कर्म है प्रायश्चित्त कर्म। और पांचवां है देश-काल के अनुरूप आवश्यक कर्म। इक्कीसवीं सदी में हम जी रहे हैं। किसी न किसी रूप में हम ये कर्म करते हैं लेकिन कभी-कभी बिना जाने, बिना सोचे करते हैं इसलिए हमें पता नहीं। उसकी थोड़ी समझ आ जाये तो वैष्णवी पंचकर्म एक अनुष्ठान बन जाएगा।

नित्यकर्म; हम सब का अपना अपना नित्यकर्म होता है। दंतमंजन, स्नान, शौच फिर हिन्दु परंपरा में है तो कोई पूजापाठ, स्तोत्र, ठाकुरजी की पूजा, धूपदीप जो-जो करते हैं, नित्यकर्म में आता है। ईस्लाम धर्म के नित्यकर्म प्रात:काल की नमाज, बंदगी, वजु करे। ईसाई लोग के अपने नित्यकर्म। प्रत्येक व्यक्ति के कुछ न कुछ नित्यकर्म। कोई ध्यान करते हैं सुबह-सबुह ये नित्यकर्म में आता हैं। कोई योगा करे ये नित्यकर्म है। सुबह-सुबह आप वोक करे वो भी नित्यकर्म है। मोर्निंग वोक कई लोगों का ये नित्यकर्म है और इसमें कोई बुरी बात नहीं। और ये नित्यकर्म पूजा हो जाएगी कि आप वोक लेते-लेते इष्ट का स्मरण करे। कोई सुबह-सुबह में किताब पढ़े, कोई भी नित्यकर्म है। केवल माला जपे इतना ही नित्यकर्म नहीं, स्वाभाविक रूप से हम जो करते हैं, रोज क्रम में चलता है, नित्यकर्म है वो हम करते हैं किसी न किसी रूप में।

दूसरा है निमित्त कर्म। जैसे आपके घर कोई विशिष्ट मेहमान आये हैं, फिर आप सोचते हैं कि चलो, उसके आने की खुशी में हम आज सत्यनारायण भगवान की पूजा करवायें। चलो, हम 'हनुमानचालीसा' का पाठ करवायें। चलो, हम 'सुन्दरकांड' का पाठ करें। चलो, हम दो-चार व्यक्तियों को बुलाकर काव्यपाठ करायें। मैं सब इसको अनुष्ठान के रूप में जोड़ रहा हूं। धर्म का अर्थ सब लोगों ने बहुत संकुचित कर दिया कि 'रामायण' पढ़ते हैं वो ही धर्म हो। वो तो है, है और है लेकिन अच्छी गज़ल पढ़ो वो भी धर्म है। इसको मज़हब से दूर न रखो। किसी का जन्मदिन है और आप उसके जन्मदिन के अवसर पर किसी को भोजन कराओ या तो कोई संगीत का कार्यक्रम करो या तो केक काटो या तो शुभ प्रवृत्ति जन्मदिन के निमित्त करो तो ये निमित्त कर्म हुए। होली का त्योहार है और आप रिश्तेदारों को बुलाओ, और किसी की आंख न बिगड़े, किसी की चमड़ी में विकार न हो जाए ऐसे सरल तत्त्वों से होली खेलो तो येभी एक निमित्त कर्म हो गया। रामनवमी है, शोभायात्रा निकाली गई। शिवरात्रि है, लंगर लगाये गये, सब को शरबत पिला रहे हैं, लस्सी पिला रहे हैं। सब निमित्त कर्म में आते हैं। कोई घटना विशिष्ट हो रही है उसको अनुरूप हम करते हैं ये निमित्त कर्म है।

तीसरा कर्म है काम्यकर्म। किसी कामना की पूर्ति के लिए हम विशेष कर्म करते हैं कि भाई, घर में जो बीमारियां हैं, जो कुछ ये है, ये सब निकल जाये इसलिए चंडीपाठ करवाये। किसी ब्राह्मण को बुला के रुद्रीपाठ करवाये, रुद्राभिषेक करवाये। ये सब काम्यकर्म है। फलप्राप्ति के लिए, सुखप्राप्ति के लिए और दु:खों की निवृत्ति के लिए जो कुछ छोटे-बड़े कर्म हम करवाते हैं उसको काम्यकर्म कहते हैं।

चौथा है प्रायश्चित्त कर्म। हमनें कोई भूल कर दी है और फिर हम प्रायश्चित्त कर्म करते हैं। नारद ने भूल की। 'रामचरितमानस' में विष्णु भगवान को श्राप दिया था और फिर जब भान आया तब लगा कि मैंने बहुत भूल की, अब मैं इस पाप से कैसे मुक्त होउं? तो प्रायश्चित्त कर्म बताया। नारद, शंकर भगवान के सौ नाम का जप करो तो आपने जो भूल की उसका प्रायश्चित्त हो जाएगा। प्रायश्चित्त कर्म। श्राद्ध आदि प्रायश्चित्त कर्म में आते हैं कि भाई, हम वो कर ले; हमारे उपर ऋण न रहे कि ये सब हम निपटा दे। भूल की कागभुशुंडि ने और प्रायश्चित्त कर्म किया उनके गुरु ने 'रुद्राष्टक' गा कर। 'रुद्राष्टक' का महाकाल के मंदिर में गायन ये प्रायश्चित्त कर्म है क्योंकि अपने शिष्य ने भूल की है। कोई आश्रित कोई भूल कर दे, अपराध कर ले, तो प्रायश्चित्त बुद्धपुरूष उसका गुरु करता है। ये नियम है। और ये प्रायश्चित्त की कथा 'मानस' के 'उत्तरकांड' में है।

कोई किसी का गुरु बने तो बहुत जिम्मेवारी होती है और कोई सही में गुरु का आश्रित बने तो उसकी भी ये जिम्मेवारी होती है कि मैं कुछ भी गलत नहीं करूंगा; मेरे गुरु को दंड भोगना पड़ेगा। और जिससे प्रेम करते हैं वो कभी दु:खी हो ऐसा हम नहीं सोचते। मेरा मानना है कि प्रेमी दूसरे को तो दु:खी नहीं देख पाता लेकिन दूसरे के सामने खुद को भी दु:खी नहीं पेश करता क्योंकि खुद को दु:खी पेश करे तो प्रेम करनेवाला सह नहीं सकेगा। इसलिए समझदार बुद्धपुरुषों की बहुत जिम्मेवारी होती हैं। दूसरे को तो दु:खी नहीं करे लेकिन जो प्यार करता है जो आश्रित है जिन्होंने जीवन अर्पण कर दिया है उसके सामने वो दु:खी भी नहीं हो सकता क्योंकि वो दु:ख सहन नहीं कर सकता। प्रेममार्ग में खुद को भी दु:ख मत देना क्योंकि सामनेवाला सह नहीं पायेगा।

तो पंचकर्मा विष्णु ने जो बताया है वो कुछ नित्यकर्म है, कुछ निमित्त कर्म है, कुछ काम्यकर्म है, कुछ प्रायश्चित्त कर्म है। शिष्य अपराध करे तो गुरु प्रायश्चित्त करता है। स्त्री अपराध करे तो पति को प्रायश्चित्त करना पड़ता है। प्रजा अपराध करती है तो राजा को प्रायश्चित्त करना पड़ता है। इसलिए भुशुंडि के गुरु ने महाकाल के मंदिर में 'रुद्राष्टक' का गायन किया था ये प्रमाण है। तो कुछ होते हैं प्रायश्चित्त कर्म। और पांचवां कर्म है आवश्यक कर्म। आवश्यक कर्म देश-काल के अनुसार करना होता है। कभी आप जाते हैं और किसी गरीब को भूखा देखा और ये सही में भूखा है तो आपने गाडी रोककर के उसको रोटी खाने के पैसे दे दिये तो ये आवश्यक कर्म माना जाता है। प्लीज़, इस समय ऐसा मत सोचना कि ये पात्र है कि कुपात्र? ये भूखा है वो ही उसकी पात्रता है। लोग कहते हैं ना कि दान करो तो पात्र-कुपात्र देखो। लेकिन कुछ जगह पर पात्र-कुपात्र मत देखना। कोई बीमार है, तडप रहा है, उसको प्राथमिक सारवार की जरूरत है तो उस समय उसके कर्म न देखो कि उसने कुछ गुनाह किया होगा, कुछ ये होगा। उसकी बीमारी ही उसकी पात्रता हैं। कोई ठंडी में ठिठुर रहा है। कोई तेजस्वी छात्र बिना फिस अपनी उच्च विद्या के लिए वंचित रह जाता है। माँ विधवा है। पढ़ाई के पैसे नहीं है। युवान बहुत तेजस्वी है लेकिन अकिंचन है; ऐसे समय में चाहे किसी भी जाति के हो उस समय पात्र-कुपात्र मत देखो। उस समय उसकी अंकिचनता ही उसकी पात्रता है। ये सब आवश्यक कर्म है, जिसको प्रसंगोचित हमें करना होता हैं।

शास्त्र में लिखा हो या न लिखा हो, आत्मशास्त्र बोले ऐसा कर लेना। एक शास्त्र कायम हमारे संग-संग चलता है वो आत्मशास्त्र है। उसके मुताबिक करना है। ये सब आवश्यक कर्म है। उसमें जाति, धर्म, मज़हब, देश-काल कुछ नहीं देखा जाता। मानव, पशु कुछ नहीं देखा जाता। आवश्यक कर्म। आप कार में जा रहे हैं, कोई बूढ़ी माता, कोई दूर ग्राम प्रदेश में सडक पर खडी है; पैर में स्लीपर तक नहीं है, बूढ़ी है, सत्तर-अस्सी साल की है; तुम गाडी में अकेले हो और उसी समय तुम उसको देख लो और आप ये सोचे कि गाडी खाली है, इस माताजी को अंदर बिठा दूं; आपने बिठा दिया, जहां छोड़ना है वहां छोड़ दिया, आपने आवश्यक कर्म किया है। ये जरूरी है। पूरा देश ऐसा करना सीख जाये तो कितना प्यारा काम हो जाये! हम खाली गाडी लेकर जाते हैं। हां, खतरा रहता है। लोग क्या तर्क करते हैं? वो ऐसा आदमी निकले, क्या पता! लिफ्ट दे और गन निकाले तो? खतरे तो हैं लेकिन कुछ खतरे मोलने चाहिए। ये ज़िंदगी ही पूरा खतरा है। आवश्यक कर्म करने चाहिए। आवश्यक कर्म करो बाप! केवल कथा ही न सुनो; कथा के बाद एक्शन लो। मुझे और आप सब को ये करना है। मैं एक सूत्र के रूप में बात कहता रहता हूं, सुनो और इनमें से कुछ चुनो। सब सुनो इनमें से तुम्हारे स्वभाव के अनुकूल कुछ चुन लो। तो नित्यकर्म, निमित्त कर्म, काम्यकर्म, प्रायश्चित्त कर्म और आवश्यक कर्म। आज की कथा यहां विराम ले रही हैं।

आपने पूछा है कि आप गुरु बनना चाहोगे? बहुत खतरा है गुरु बनने में। जो बने हैं वो सब जानते हैं। जो बने हैं, बन बैठे हैं, सब जानते हैं कि कितना खतरा हैं! सत्य के आश्रित बने रहो, प्रेम के आश्रित बने रहो, करुणा के आश्रित बने रहो। बुद्धपुरुष बनना, सद्गुरु होना ये कोई सामान्य वस्तु नहीं हैं साहब! धर्मगुरु होना गलत नहीं हैं लेकिन धर्मगुरु से उपर की बात है सद्गुरु, जिसको इस कथा में विष्णु का दसवां अवतार मानता हूं। धर्मगुरु अपनी एक परंपरा में आते हैं, सद्गुरु को अपनी प्रवाही परंपरा प्रगट करनी पड़ती हैं।

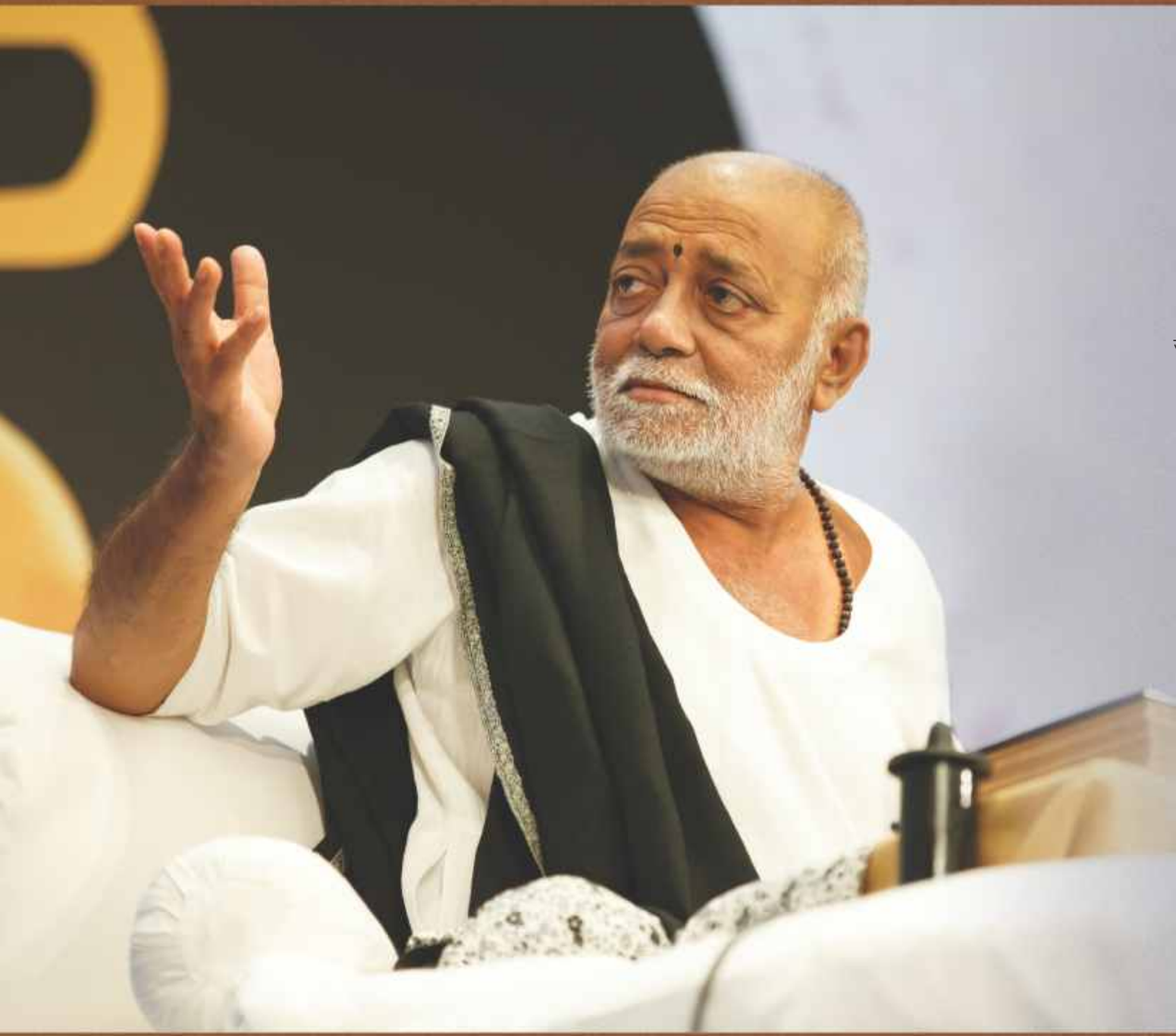

कथा-दर्शन

ईश्वर की सृष्टि में परिवर्तन है, पुनरावर्तन नहीं है।
ईश्वर भी पवित्र नहीं होता इतना पवित्र बुद्धपुरुष होता है।
बुद्धपुरुष वो है जो नकाब हटाकर के आमने-सामने कर दे।
कोमल और कराल दोनों का मिश्रण होता है बुद्धपुरुष।
उसको बुद्धपुरुष समझना, जिसको हमारे पास या किसी के पास कोई भी अपेक्षा नहीं है।
गुरु व्यक्ति नहीं है, गुरु अस्तित्व है।
सद्गुरु ये मेरी समझ में विष्णु का दसवां अवतार है।
वृक्ष काटना एक अर्थ में किसी साधु की हत्या करना है।
साधक अवस्था में साधना करना एक बहुत बड़ा उद्यम है।
व्यासपीठ राजपीठ नहीं है कि संकीर्ण हो।
सच्चा अध्यात्म कभी कर्तव्यच्यूत नहीं करता।
आप प्रसन्नता से जीओ ये भी एक बंदगी है।
पूजा के बदले प्रेम करना सीखो तो गाय नहीं कटेगी।
दुनिया में बुद्धि तो सबको मिली है लेकिन निर्मल बुद्धि नहीं है।
अपने स्वभाव में जीना ही स्वधर्मपालन है।
प्रेम पिघलता है तब भक्ति का जल बहता है।
घमंड अच्छा है, पाखंड अच्छा नहीं।
जो दूसरे को अज्ञानी समझे उसके समान जगत में कोई अज्ञानी नहीं है।
सर्जक सांप्रदायिक नहीं होता। वो कायम बिनसांप्रदायिक होता है।
कभी-कभी शास्त्रज्ञ जवाब नहीं देते ऐसा जवाब ग्रामीण लोग देते हैं!
मृत्यु एक ऐसी महिमावंत अवस्था है, होते ही आदमी को पूज्य बना देती है।

प्रसन्नता से जीना भी एक बंदगी है

'रामचरितमानस' की सती सोचती है कि विष्णु ने अगर नर शरीर धारण किया है तो विष्णु तो मेरे पति की भांति, मेरे शिव की भांति सर्वज्ञ है। ये अज्ञानी की तरह अपनी सीता को इधर-उधर खोजेगा नहीं। उधर दूसरी पंक्ति में कहा गया, आप अपनी भुजा के बल से जहां विश्व को जितोगे वहां विष्णु मनुज शरीर धारण करके अवतार लेंगे और समाज की समस्त समस्या का हल करेंगे। श्रीपति, श्रीनिवास, वैकुंठपति, वासुदेव, रमापति, रमानिकेत, रमानिवास ऐसे भगवान नारायण विष्णु का इन वैष्णवी दिनों में हम दर्शन कर रहे हैं।

चतुर्मूर्तिश्चतुर्बाहुश्चतुर्व्यूहश्चतुर्गतिः।
चतुरात्मा चतुर्भावश्चतुर्वेदविदेकपात्।।
- 'विष्णुसहस्रनाम'

और 'विष्णुसहस्रनाम' के इस मंत्र का भाव 'मानस' में देखिये। 'महाभारत' का मंत्र 'मानस' में किस रूप में हमें दर्शित होता है, उसका थोड़ा हम दर्शन गुरुकृपा से करें। 'चतुर्मूर्तिश्चतुर्बाहु'; एक-एक टुकड़ा यदि रखूं इस मंत्र का। भगवान विष्णु की ये बोली है, भीष्म की वाणी से निकला ये मंत्र है। भीष्म की दृष्टि में विष्णु कैसा है? 'चतुर्मूर्ति।' भाष्यों में कई अर्थ मिलेंगे और ऐसे मिलेंगे कि जिसको स्वीकारना पड़ता है। लेकिन 'मानस' के विष्णु का दर्शन हम कर रहे हैं तब 'महाभारत' के विष्णु की जो चतुर्मूर्ति है वो 'मानस' में किस रूप में दिखती है, उसका थोड़ा खयाल करे। 'बिष्नु जो सुर हित नरतनु धारी।' विष्णु देवताओं के लिए मनुष्य का रूप लेकर राम बनकर आये। यद्यपि मैं बार-बार कहता रहूंगा, राम वो परम तत्त्व है जिससे कई विष्णु पैदा होते हैं। तो विष्णु चतुर्मूर्ति है और वो चतुर्मूर्ति विष्णु देवहित के लिए मनुज रूप में आये हैं, ऐसा 'मानस' डीम-डीम घोष करता है तब 'मानस' में विष्णु की चतुर्मूर्ति कौन है?

आप सीधा-सादा भाष्य में देखोगे तो कहा गया है कि चतुर्मूर्ति विष्णु मानी राम। एक तो मूल राम। दूसरे लक्ष्मण। तीसरे भरत। चौथे शत्रुघ्न। ये चतुर्मूर्ति है। भाष्यकारों ने बताया है और परम वंदनीय लोगों के भाष्य को नतमस्तक स्वीकार करना पड़ता है। लेकिन 'मानस' के गायक के नाते मुझे भी कुछ कहना है। जो बोलूं वो गुरुकृपा से बोलूं। 'रामचरितमानस' में एक मूर्ति तो राम है। राम एक स्वयं मूर्ति है। प्रमाण 'लंकाकांड।' सुमेरु के शिखर पर मेरे राघवेन्द्र ने डेरा डाला है लंका में। सायं काल है और भगवान थोड़ा रिलेक्स, थोड़ा विश्राम में लेटे हैं। पैर दबा रहे हैं अंगद-हनुमान। अपना मस्तक कपीश की गोद में हैं। विभीषण से चर्चा चल रही है। इतने में पूर्व दिशा में चंद्रोदय होता है। और भगवान अपने मित्रों से पूछते हैं कि चंद्रमाँ में जो काला दाग है वो क्या है, आप अपनी-अपनी राय दीजिए। किसीने कहा, महाराज, मुझे तो लगता है कि चंद्रमाँ में ही एक छिद्र है; और छिद्र से आकाश दिखता है इसीलिए चांद में काला दाग दिखता है। दूसरे ने कहा, नहीं, मुझे ऐसा लगता है कि चंद्र ने गुरु पत्नी का अपराध किया है। बृहस्पति की पत्नी के उपर चंद्र ने खराब दृष्टि से एक बार देखा इसलिए उसको कलंक लग गया और कलंक का काला दाग उसके दिल में है। तीसरा थोड़ा वैज्ञानिक रहा होगा, उसने कहा, महाराज, मुझे लगता है कि चांद में पृथ्वी की छाया दिखती है तो थोड़ा काला दिखता है। सब ने अपने-अपने अभिप्राय दिये। हनुमानजी पैर दबा रहे थे। बिलकुल चुप। आख़िर में भगवान ने पूछा, सब ने तो कहा कि चांद में काला दाग क्या है, तू भी तो बता, हनुमान। हनुमान ने कहा, महाराज, मेरा अभिप्राय बिलकुल बिलग है। चंद्र आप का भक्त है। भक्त के हृदय में आप निवास करते हैं और महाराज, आप चंद्र के हृदय में बैठे हैं। और माफ़ करियेगा, आप का रंग गोरा नहीं है, काला है इसलिए मुझे आप की काली मूर्ति दिखती है। 'तव मूर्ति बिधि उर बासी।' आप की राममूर्ति चंद्रमाँ के दिल में मैंने देखी। एक मूर्ति, राममूर्ति।

दूसरी मूर्ति, 'मानस' का विष्णु जो रामरूप लेता है। 'जनु मुनि बेस किन्ह रति कामा।' चित्रकूट की वेदिका पर बैठे हुए भगवान राम को भरतजी ने दूर से कामरूप में देखा। ये है परमात्मा की काममूर्ति। याद रखना, राम का वर्ण भी

श्याम है और काम का वर्ण भी सांवला है, दोनों सांवले हैं। 'वाल्मीकि रामायण' के मूल में भी काम है और 'रामचरितमानस' के सर्जक भले देर से हुए लेकिन दोनों की भूमिका काम है। आदि कवि वाल्मीकि का 'रामायण' निकला काम से क्योंकि आप पूर्व कथा जानते होंगे कि नदी के तट पर वो क्रौंच पक्षी विहारवेला में थे, कामवेला में थे, रस में डूबे थे एक-दूसरे के। उसी में एक पारधी पक्षी को बींध देता है फिर एकदम उद्गार निकल जाता है और इसी शोक में उद्गार से वाल्मीकि 'रामायण' का जन्म हुआ। मूल में कामतत्त्व पड़ा हैं। तुलसी का 'रामचरितमानस।' कथा ऐसी है कि तुलसी पूर्व समय में, अत्यंत आकर्षित रहा रत्नावली में। और कथा ऐसी भी आती है कि ससुराल में पत्नी चली गई और तुलसी उसका विरह सहन नहीं पर पाते। रत्नावली के वियोग में तुलसी जमुना की बाढ़ में कूद पड़े और एक शब बहा जाता था उसको नौका समझकर बैठ गये। फिर मध्यरात्रि के बाद ससुराल पहुंचते हैं। दरवाजें बंद है। पीछे से उपर चढ़े। एक सांप लटकता था उसको रस्सी समझकर तुलसी दीवार के पीछे से उपर गये। अपनी पत्नी को मिलने के लिए गये और उसी समय पत्नी ने उसको डांटते हुए कहा कि हाड-चाम के देह में आपकी इतनी कामना है, इससे थोड़ी भी कामना राम में होती तो तुम धन्य हो जाते! और इसी काम आवेग के कारण तुलसी फिर एक वचन से लौटे।

'भास्कर-परिवार' का एक युवक कल मुझे पूछ रहा था, बापू, हम जुवानी में कितना पढ़ते हैं, ये करते हैं! फिर कुछ ठीक नहीं होता तो फिर थोड़े थक जाते हैं। मैंने कहा, बेटा, पढ़ना चाहिए। मैं उसके पक्ष में हूं। लेकिन मेरे युवान भाई-बहनों को मैं कहना चाहूंगा कि पढ़ना ही जीवन का लक्ष्य नहीं है। जीवन का लक्ष्य रस है, आनंद है, प्रसन्नता है। पूरी जिंदगी पढ़ने में निकाल दो ये कोई ज़िंदगी हैं! और पढ़ने में भी इतना बोझ, ये पढ़ो, ये पढ़ो! थोड़ा उसको क्रिकेट खेलने दो; थोड़ा उसको आनंद करने दो। थोड़ा समय दो बच्चों को। माँ-बाप को चाहिए थोड़ा समय दे। मेरे पास लोग आते हैं, बच्चे बिगड़ गये! तो मैंने बिगाड़े! समय दो उसको। कहो कभी बेटा, एक दिन, दो दिन तुझे समझ में आये न आये, हमें कथा में छोड़ने के लिए भी तू एक घंटे आ जा। मेरा एक वादा है पूरी दुनिया के युवानों के लिए कि साल में, दो साल में, तीन साल में, जब आपको समय मिले आप मुझे नौ दिन दो, मैं तुम्हें नवजीवन दूंगा।

तो मुझे युवक भाई-बहन अच्छा पूछते हैं। कमाने में व्यर्थ न हो जाये। कमाओ खूब। मैंने आप से ओलरेडी कहा, दो हाथ से कमाओ, चार हाथ से बांटो। जीवन केवल आहार-विहार में न बीतें। उसके आगे भी कोई लक्ष्य है कि जीवन की प्रसन्नता; क्षण-क्षण प्रसन्नता। केवल नौकरी ही करते रहो! करो, करनी चाहिए लेकिन जीवन का लक्ष्य कम से कम उसको न समझो। ये राजमार्ग नहीं है। सब डायवर्झन है। राजमार्ग है प्रेम, सत्य, करुणा। पूरी ज़िंदगी खतम कर दी हम लोगों ने! मूल बात ये थी कि जीवन में प्रसन्नता होनी चाहिए। पढ़ने में ही इतनी सालें चली जाये! कुछ और बातों में ही ज़िंदगी चली जाये! जरूर पढ़ना चाहिए और काम करना चाहिए। लेकिन जीवन का रस छूट न जाये। गुजराती के बहुत बुज़ुर्ग शायर जिसको आदर से गुजराती गज़ल के गालिब कहा करते थे, मरहूम मरीज़साहब, उसका एक गुजराती शे'र है-

जिंदगीना रसने पीवामां करो जलदी मरीज़,
एक तो ओछी मदिरा छे ने गळतुं जाम छे।

जीवन के रस को पीने में जल्दी करो, देर मत करो। रात बीती जा रही है और मदिरा थोड़ी है। जल्दी पी लो। जीवन आनंद से गुज़रना चाहिए; रस से गुज़रना चाहिए। और ये मूल जो हमारी आत्मा की खोराक है वो हमें नहीं मिलती और हम ऐसी प्रवृत्ति में इतने व्यस्त हो जाते हैं इसलिए बच्चें-जुवान लोग आखिर में डिप्रेशन की ओर जाते हैं। जीवन का एक रस है। मैं कथा इसलिए नहीं कर रहा हूं कि आप सब माला फेरने बैठ जाओ; आप भजन गाने बैठ जाओ। आप प्रसन्नता से जीओ ये भी एक बंदगी है। मूल में रस हो और धीरे-धीरे वो रस हमें महारस की ओर ले जाये।

तुलसी को रत्नावली ने कहा, हाड-मांस का देह यह, इसमें आपकी इतनी प्रीति है? यदि राम में ये रस लग जाता तो तुम्हें कहां भव प्रीति रहती! और इसी कामपीड़ा से ही 'रामचरितमानस' की ओर तुलसी चल दिये। और वो ही क्रौंच पक्षी जो विहार दशा में ज़ख्मी किये गये। ये एक ज़ख्मी परिंदा है। अंदाज़ देहलवी साहब कहते हैं-

ये एक ज़ख्मी परिंदा है वार मत करना।
पनाह मांग रहा है शिकार मत करना।
इरादा सामनेवाला बदल भी सकता है।
मुकाबला ही सही पहले वार मत करना।

क्रौंच पक्षी विहार अवस्था में थे और इसी जोड़ी को तोड़ी गई। तब वाल्मीकि के मुख से एक आह निकली और ये शोक श्लोक बनकर रामकथा का गर्भ बन गया। रामकथा वहीं से प्रगट हुई।

तो मैं आपके सामने राम की मूर्ति रख रहा हूं। हनुमानजी ने कहा, चांद में राममूर्ति है। भरतजी की आंखों

ने देखा, चित्रकूट में राम काममूर्ति है। एक राममूर्ति। दूसरा काममूर्ति। तीसरा मंगलमूर्ति। 'मंगलमूरति नयन भरी भरी।' जो लोग दर्शन करते हैं चित्रकूट में प्रभु के। राम की एक मूर्ति है 'मानस' में मंगलमूर्ति। और चौथी मूर्ति है प्रभुमूर्ति कृपामय है। तुलसी के साहित्य में परमात्मा की मूर्ति कृपामय है; कृपामूर्ति है। भगवान का विग्रह, भगवान का शरीर कृपा से बना है, कर्मों से नहीं बना।

तो राममूर्ति, काममूर्ति, मंगलमूर्ति और कृपामूर्ति ये 'मानस' की चार मूर्ति है। 'चतुर्मूतिश्चतुर्बाहु।' 'रामचरितमानस' में विष्णु जो राम बनकर आये; यद्यपि राम से कई विष्णु पैदा हुए; उसकी चार बाहु कौन? पहली बाहु राम की है जानकी, जो वाम बाहु है। सुभाषितकारों ने कहा है, पत्नी पुरुष की भुजा है, बगल में खड़ी रहती है। पत्नी हाथ है क्योंकि हमारी भारतीय परंपरा में और सभी परंपरा में हस्तमिलाप होता है तब एक-दूसरे के हाथ को पकड़ा जाता है। इसका एक संकल्प है, आज से तू उसका हाथ है, तू उसका हाथ है। पत्नी हाथ है। एक भुजा हमारी ये है जिस भुजावाले आदमी को किसी का साथ लेना न पड़े ऐसी आत्मभुजा होती है आदमी की। और आत्मा पार्वती है। आत्मा पत्नी है, आत्मा जानकी है, जो पृथ्वी की कन्या है। स्त्री एक भुजा है तो राम की, विष्णु की चतुर्बाहु में एक बाहु माँ जानकी है। 'वाम अंग जो बिराजे।' पत्नी भुजा है। दूसरा, हमारे यहां भाई को भी भुजा कहते हैं। मेरा भाई मेरा हाथ है। मेरा भाई भुजा बनकर मेरे साथ खड़ा रहता है जब जरूरत पड़ती है। मेरा बड़ा भाई, मेरा छोटा भाई मेरी भुजा है।

तो एक भुजा पत्नी, दूसरी भुजा भाई। चार भुजा गिनते हैं तो लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, जानकी चार राम की भुजा है। ग्रंथकार कहते हैं शास्त्रों में, मित्र भी मित्र की भुजा माना जाता है। साथी भुजा माना जाता है। राम की भुजा है विभीषण। राम की भुजा है सुग्रीव। राम की भुजा है गुहराज। मित्र भुजा बनकर खड़ा है जब जरूरत पड़े तब। उसको भी भुजा माना है। और शालीन सेवक को भी भुजा माना है। शालीन, खानदान, विवेकी; शठ सेवक नहीं, श्रेष्ठ सेवक, ये भुजा मानी जाती है। तो भगवान राम 'मानस' में जानकी, भाई, मित्र और सेवक के रूप में चतुर्बाहु है।

'चतुर्मूति, चतुर्बाहु, चतुर्व्यूह।' चतुर्व्यूह जैसे कि वासुदेव, अनिरुद्ध, प्रद्युम्न, संकर्षण 'भागवत' की कथा में ये चतुर्व्यूह है। भगवान कृष्ण का चतुर्व्यूह ये माना जाता है। 'रामचरितमानस' का चतुर्व्यूह क्या है? राम स्वयं वासुदेव, स्वयं ब्रह्म। संकर्षण है लक्ष्मण; प्रद्युम्न है श्री भरतजी; अनिरुद्ध है शत्रुघ्नजी। ये चतुर्व्यूह है 'मानस' के। तो चतुर्मूर्ति, चतुर्बाहु, चतुर्व्यूह, चतुर्गति। चार प्रकार की गति, चार प्रकार का मोक्ष। सारूप्य, सालोक्य, सामीप्य, सायुज्य। मुक्ति चार प्रकार की। गति मानी मुक्ति। जैसे हम कहते हैं कि उसकी परम गति हो गई। 'विष्णुसहस्रनाम' में भगवान विष्णु चतुर्गति के नामों से पुकारे गये। 'मानस' में चार गति मानी चार मुक्ति। सारूप्य मुक्ति उसको कहते हैं कि कोई व्यक्ति भगवान को भजता-भजता स्वयं भगवान रूप हो जाये; उसको सारूप्य गति कहते हैं। जीव शिवरूप हो जाये। जैसे परमात्मा का रूप ऐसा उसका रूप बन जाये, उसको सारूप्य कहते हैं। सालोक्य मुक्ति; भगवान जिस लोक में रहते हो; वैकुंठ, शिवलोक, ब्रह्मलोक, जैसे हमने जो ये सब विभाजन किये हैं। भगवान रहते हैं उस लोक में जिसको जीने का मिले, वहां उसको जगह मिले उसको सालोक्य मुक्ति कहते हैं। सायुज्य मुक्ति; भगवान की आयु जिसको मिल जाये। उसे सायुज्य मुक्ति कहते हैं। और सामीप्य मुक्ति; निरंतर भगवान के पास रहने को मिल जाये ये सामीप्य मुक्ति। 'मानस' में विष्णु की चार मुक्ति; राम की चार मुक्ति। राम की सालोक्य मुक्ति मिली विभीषण को। सारूप्य मुक्ति दी जटायु को। गीध हरिरूप बन गया। सायुज्य मुक्ति मिली हनुमान को। जब तक ब्रह्म तत्त्व अखंड अनंत है, ऐसे हनुमानजी अजर-अमर है; ये सायुज्य मुक्ति प्राप्त कर गये। चौदह साल के वनवास में सामीप्य मुक्ति मिली लक्ष्मण को, जानकी को नहीं मिली। लक्ष्मण निरंतर साथ है ये सामीप्य मुक्ति है। दूसरे अर्थ में हनुमानजी को चारों मुक्ति मिली। सालोक्य भी; जहां राम रहते हैं वहां वो रहते हैं। कोई भी राम मंदिर हो, हनुमान होगा। सालोक्य भी है, सायुज्य भी है, अजर-अमर है। सारूप्य; हनुमान रामरूप है। और सामीप्य; नित्य चरण सेवा, नित्य समीप।

'विष्णुसहस्रनाम' की चतुर्गति 'मानस' में तलगाजरडी आंखों को इस रूप में गुरुकृपा से दिखती है। और फिर आगे कहते हैं, चतुरात्मा; विष्णु चतुरात्मा है। चतुरात्मा एक अर्थ में चित्त की अवस्था मानी जाती है। और फिर कई भाष्यों में ऐसा भी मिला मुझे मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार ये चतुरात्मा माना गया। जो हो। हनुमानजी राम का मन है। राम की बुद्धि माँ जानकी है, परम बुद्धि है; विशुद्ध बुद्धि की दाता है। राम का चित्त अखंड चित्त राम का उनके संत, उनके भक्त, जिसको वो चित्त अर्पण करते रहते हैं। निरंतर उसका चित्त उसके संतों में, उसके भक्तों में ग्राह्य रहता है, ये वो है। और राम शिवरूप में, अहंकाररूप में निवास करते हैं। तो ये चतुरात्मा ये भी हो जाता है। चतुर्भाव; कई-कई भाष्यों में चतुर्भाव में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष भी पाया गया। लेकिन व्यासपीठ कुछ और कहना चाहती है। भाव चार प्रकार के। एक भाव; दूसरा सद्भाव; तीसरा महाभाव और चौथा परमभाव। एक है भाव जो परस्पर एक-दूसरों को हम भाव रखते हैं; एक शिष्टाचार भी। आप किसी को पूछोगे कि खाना खाया? तो भाववाले शिष्टाचारवाले तुरंत कहेंगे, आपने खाया? ये भाव है शिष्टाचार।

दूसरा है सद्भाव। सद्भाव है सत्यता से जुड़ा हुआ। भाव तो कभी-कभी क्या हम प्रसन्न न हो तो भी कोई पूछे, कैसे हो तो बोले, मजे में! झूठ भी बोलना पड़ता है! सद्भाव नहीं है, वहां सत्य नहीं। एक व्यवहार में बोलना पड़ता है। तीसरा है महाभाव। कृष्ण और गोपीजनों के बीच में जो महाभाव की चर्चा की है। महाभाव मधुरा, राजेन्द्र शुक्ल ने लिखा है-

हजो हाथ करताल ने चित चानक।
तळेटी समीपे हजो क्यांक थानक।
नयनथी नीतरती महाभाव मधुरा,
बहो धौत धारा बहो गौड गानक।

चैतन्य महाप्रभुवाला महाभाव, मीरांवाला महाभाव। चैतन्य को याद कर के राजेन्द्र शुक्ल की शे'र शृंखला चलती है। महाभाव; और पांचवां है परमभाव जिसको तुलसी 'मानस' में परमप्रेम कहते हैं। भाव में मन की प्रधानता रहती है। मन सोचेगा कि ऐसे बोलना चाहिए। सद्भाव में बुद्धि विवेक से निर्णय करती है कि सच या झूठ क्या है? इसलिए सद्भाव में बुद्धि की प्रधानता है। महाभाव में चित्त की प्रधानता है, चैतन्य की प्रधानता है। और परम भाव, जहां अहंकार भी छूट जाये उसको परम भाव कहते हैं। 'चर्तुभाव, चतुर्वेद।' विष्णु चार वेद है। राम क्या है?

धरे नाम गुर हृदयँ बिचारी।
बेद तत्व नृप तव सुत चारी।।

तो बाप! 'मानस-बिष्नु' के दर्शन में 'विष्णुसहस्रनाम' के आधार से 'मानस' में किस-किस रूप में विष्णु प्रस्तुत हुए हैं उसकी थोड़ी गुरुकृपा से आपके सामने मैंने बात रखी। एक लड़के ने पूछा है कि 'बापू, मैं आप से जानने की ईच्छा करता हूं कि एक अधिकारी वक्ता बनने के लिए क्या-क्या होना जरूरी है ताकि मैं भगवान से प्रार्थना कर सकूं और इस जनम में तो नहीं, अगले जनम में मैं भी मोरारिबापू बन सकूं।' मेरे प्यारे, पहले तो ये बात, मोरारिबापू बनने की कामना छोड़ दो। कोई किसी के समान होने की बात करे वो अपना मूल्य घटाता है। तुम तुम हो। तुम्हारी प्रतिष्ठा मत गंवाओ। लोग मुझे कभी-कभी कहते हैं तुलसी के अवतार। मैं नाराज होता हूं। मुझे तुलसी नहीं होना है। मैं मोरारिबापू बना रहूं इसीमें ही मेरी महत्ता है। मैं क्यों तुलसी बनूं? मैं उधार किसी का नाम क्यों लूं? बेटा, तू तू बनकर कथा कर। मोरारिबापू बनने की जरूरत नहीं। ओलरेडी कई घूम रहे हैं! अब ज्यादा भर्ती मत करो! कई मोरारिबापू के नाम से! तो ये भी अच्छा है, स्वागत है, कम से कम कथा तो गाते, हरि गुणगान गाते, भले नाम यूझ करे! कई हैं!

मुझे एक भाई ने पूछा, 'बापू, आप असली मोरारिबापू हो? मैं समझ गया, कई नकली आ गये हैं इसलिए मुझे पूछा जाता है! कोई कहता है, आप बड़े मोरारिबापू? मोरारिबापू मत बनना साहब! आदमी आदमी है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आईडेन्टी होनी चाहिए। दूसरे हम क्यों बने? बेटे, ईश्वर की सृष्टि में परिवर्तन है, पुनरावर्तन नहीं है। एक के समान दूसरा हो ही नहीं सकता। तुम कथाकार जरूर बनो बेटे, मोरारिबापू बनने की जरूरत नहीं। तुम अपने ढ़ंग से करो कथा क्योंकि मोरारिबापू बनकर तुम बैठोगे तो आधी प्रतिष्ठा तो ओलरेडी मुझे ऐसे ही मिल जाएगी! तुम्हारे नाम से मुझे मिलेगी, तुम्हें घाटा होगा! तुम अपने नाम से आओ मैदान में; खुद को लेकर आओ। तुम में क्षमता है। प्रत्येक व्यक्ति में अपनी भरपूर क्षमता है, उसको कमज़ोर मत समझो। तो आप अधिकारी कथाकार होने के लिए अगले जनम में क्यों, इसी जनम में बनना। थोड़ा स्वाध्याय करो अपने ढ़ंग से जिस ग्रंथ का कथाकार होना हो। थोड़े कथाकारों को सुन लो, थोड़ा स्वाध्याय करो। होना जरूर कथाकार। दो-तीन साल में तो तैयार हो जा फिर मुझे लिखना कि मेरी कथा यहां है; अगर अवसर मिला तो मैं कहीं तुझे सुनुंगा अथवा तू तलगाजरडा आकर एक घंटा मुझे सुना देना जरूर, स्वागत है। मेरे देश की युवानी को पुकार रही है मेरी व्यासपीठ। किसी भी कला लेकर आओ।

तो मैं स्वागत करता हूं बेटा, लेकिन तूने पूछा है कि क्या-क्या होना जरूरी है? बेटा, एक तो पोथीपरायण होना। जिसको कथाकार होना है, शास्त्र का वक्ता पोथीपरायण हो। आप 'भागवत' के वक्ता बनना चाहे, 'रामायण' के, 'गीता' के कोई भी पुराण अथवा तो कोई धार्मिक प्रवचन। तो जिस सब्जेक्ट आप लो उसके परायण होना चाहिए, पोथीपरायण होना। दूसरा सूत्र है, प्रेमपरायण होना। कथा प्रेम से गाना। दुनिया समझे न समझे; दाद दे ना दे; तुम प्रभु के प्रेम के लिए गाना। तो प्रेमपरायण होना। तीसरा, परमार्थपरायण होना। कथा करके अपना जीवन भी धन्य हो। और कथा करो और तुम्हें कोई दक्षिणा दे तो ले लेना। यस, दुनिया में कोई माय का लाल पैदा नहीं हुआ कि कथा की दक्षिणा दे सके! फिर भी श्रोता का कर्तव्य है कि कुछ पत्र-पुष्प दे। पैसा मत समझना कि ना ले, लेना और परमार्थ करना। कथाकार परमार्थपरायण होना चाहिए, केवल स्वार्थपरायण नहीं। पोथीपरायण, परमार्थपरायण, प्रेमपरायण; ये मैं पहले ऐसा कहता था। ऐसे कुछ बेटा जरूर बनना। मैं राजी होउंगा कि मेरा एक फूल खिल रहा है।

तो वक्ता बनना है बेटा, तो श्रोता को कभी छोटा मत समझना। हम जानकार है और श्रोता नहीं जानते इसलिए समझा रहे हैं? नहीं। सब श्रोता में वो ही परमतत्त्व बैठा है। श्रोता से मोहब्बत करना। श्रोता को अज्ञानी मत समझना। तुलसी ने लिखा, 'श्रोता वक्ता ग्यान निधि।' श्रोता और वक्ता दोनों ज्ञान के भंडार है। इसमें वक्ता का नाम पहले नहीं लिखा, श्रोता का लिखा। तो श्रोताओं की महिमा है। श्रोता अज्ञानी नहीं है। जो दूसरे को अज्ञानी समझे उसके समान जगत में कोई अज्ञानी नहीं है।

एक श्रोता बहनजी ने पूछा है, 'बापू, आत्मबल और मनोबल में क्या अंतर है, जरा स्पष्ट करें।' मेरे श्रोता को मैं कहना चाहूंगा, आत्मबल और मनोबल में थोड़ा अंतर है। मनोबल बढ़ता भी है, कम भी होता है। आपका मनोबल कभी गिरता है तो जिस पर आपकी श्रद्धा होगी वो तुम्हारे कंधे पर हाथ रखकर कहे, बेटा, मन को कमजोर मत करो, कोई चिंता नहीं। आगे बढ़। तो मनोबल फिर उपर उठ जाएगा। मन चंद्रमाँ है शास्त्रों में। मन मानी चंद्र। और हम सब जानते हैं, चांद बढ़-घट होता है। दूज का, तीज का, चौथ का फिर पूर्णिमा का पूरा हो गया। मनोबल बढ़ता है, घटता है। अच्छा संग मनोबल बढ़ायेगा। बुरा संग मनोबल गिरायेगा। लेकिन आत्मबल उसको कहते हैं, जिसमें बढ़-घट नहीं होती। आत्मबल अखंड होता है। आत्मबल कभी कमजोर नहीं। आत्मा के समान कोई बलवान नहीं। आत्मबल जिसका है वो अखंड रहता है, मेरी समझ ऐसी है।

'बापू, नाम तथा मंत्र में क्या अंतर है? हमें किसका जप करना चाहिए?' मैं बहुत बार बोला हूं, वेदोक्त अथवा तो शास्त्रीय मंत्र जो होता है उसके लिए कुछ विधि-विधान होते हैं। जैसे कि मंत्र का जप करना है तो स्नान करना, स्वच्छ कपड़ें पहनना, एक जगह बैठना आदि-आदि; हिस्सा यज्ञ में होमना पड़ता है, जिसको दशांश कहते हैं। मंत्र में विधि-विधान लगते हैं। नाम में कोई विधि-विधान नहीं। 'बोले सो निहाल।' बैठे-बैठे, लेटे-लेटे, पैर फैलाकर, सिकुड़कर, चाय पीते-पीते, किसी भी अवस्था में आप नाम लो। स्नान किया हो, ना किया हो, कोई प्रतिबंध नहीं। इसलिए कलियुग में नाम जपना बहुत अधिक माना गया। शास्त्रों में उल्लेखित मंत्रों का या गुरु द्वारा प्रदान किये मंत्रों का या फिर नाम जैसे राम-कृष्ण आदि का। मैंने कहा कि गुरु या शास्त्र से भी आपने नाम ले लिया, जैसे 'रामायण' कहती है, 'एहि रघुपति नाम उदारा।' इसमें रामनाम है। और आपने रामनाम ले लिया, कोई नियम की जरूरत नहीं है। आप कभी भी लो। मैं तो ये भी कहूंगा, आजकल कलियुग में ये जो विधि-विधान हैं वो भी निकाल देने चाहिए। मंत्र भी बोलो। यद्यपि ये शास्त्र का निर्णय है। लेकिन मुझे सत्ता दी जाये तो मैं कहूंगा कि मंत्र भी बोलो। कलियुग में सब छूट देनी चाहिए। कम से कम लोग बोले तो सही! प्रतिबंध क्यों?

'बापू, जप करने की कोई विधा है?' मंत्र के जप की विधाएं होती है। मंत्र में जोर से बोलना करीब-करीब स्वीकारा नहीं गया है। मंत्र तुम्हारे कान भी न सुने ऐसे जपना पड़ता है और आखिर में मानसी जप। जप के प्रकार है। आखिर में धीरे-धीरे मानसी जप हो जाते हैं। तो मंत्र चिल्ला-चिल्लाकर नहीं बोला जाता। मैं सब छूट दिये जाता हूं, कोई प्रतिबंध नहीं। 'मंत्रजप मौन रहकर करने चाहिए?' मौन में मंत्र का जप हुआ, अच्छी बात है। और लिखा है कि मौन रहकर मंत्र जपते हैं तो मन भटकता बहुत हैं! वो तो होगा ही! मन भटके, भटकने दो; तुम मत भटको! जब मंत्र जपते हो तब मन भटकता है इसका मतलब ये है कि मन डर गया है कि तूने मंत्र जपना क्यों शुरू किया? अब मेरा तेरे में रहना बड़ा मुश्किल हो जाएगा! ये घबरा रहा है; ये भागे जा रहा है। उसको बल मत दो, जपते जाओ।

''कोई व्यक्ति देवीजी का व्रत करता है, अनुष्ठान करता है और अनुष्ठान के बीच में परिवार में किसी का देहांत हो जाये तो ऐसे समय में क्या करना चाहिए? अनुष्ठान जारी रखे या बंद?'' जारी रखना चाहिए। जो अनुष्ठान आप करते थे और कुछ ऐसी घटना घट गई तो बंद मत कर देना। हां, किसी का देहांत हो गया तो उसमें आपको शरीक होना पड़े, अपना कर्तव्य निभाना लेकिन अनुष्ठान बंद मत करना; मृतक की श्रद्धांजली में समर्पित कर देना। लोग कहते हैं, मर गया, अब जप न हो; अब तप न हो! ये सब गलत धारणाएं फ़ेंक दो अब। इक्कीसवीं सदी में नहीं चले ये। सूतक लग रहा हैं! कई लोग तो ठाकुरजी को दूसरे के घर छोड़ आये! हमारे घर में सूतक है बारह दिन! सूतक तो ठाकुरजी को बाहर रखने गये तब शुरू हो जाता है, इससे पहले नहीं था! कृष्णनाम न लो वो दिन सूतक है। और जिस दिन जुबां से हरिनाम निकले ये शगुन है, बाकी सूतक ही सूतक है। तो आप कर सकते हैं। अनुष्ठान जारी रखो।

''मैं सरकारी गेज़ेटेड ओफिसर रहा और आपकी कथा सुनकर करप्शन-रिश्वत नहीं लेता था। मेरी बेटी सरकारी नौकरी करती है और वो भी रिश्वत कभी नहीं लेती। वो कहती है कि बापू की कथा सुनती हूं तो रिश्वत कैसे ले सकती हूं?'' मैं आपको प्रणाम करूं बाप-बेटी

जीवन आनंद से गुज़रना चाहिए; रस से गुज़रना चाहिए। और ये मूल जो हमारी आत्मा की खोराक है वो हमें नहीं मिलती और हम ऐसी प्रवृत्ति में इतने व्यस्त हो जाते हैं इसलिए बच्चें–जुवान लोग आखिर में डिप्रेशन की ओर जाते हैं। जीवन का एक रस है। मैं कथा इसलिए नहीं कर रहा हूं कि आप सब माला फेरने बैठ जाओ; आप भजन गाने बैठ जाओ। आप प्रसन्नता से जीओ ये भी एक बंदगी है। मूल में रस हो और धीरे–धीरे वो रस हमें महारस की ओर ले जाये।

दोनों को कि चलो, आधा ही सही, मेरी तरफ़ जाम तो आया! थोड़ा तो थोड़ा परिणाम तो आया! ये कितना प्यारा निर्णय है कि कथा सुनकर एक ओफिसर रिश्वत न ले! वरना कौन बचा है भ्रष्टाचार में, कल्पना तो करो! एक सामान्य आदमी से लेकर जहां तक जाओ बड़ी संख्या में लोग करप्ट है। और पावर के बारे में तो अंग्रेजी में कहते हैं, 'पावर ओलवेईज़ करप्ट' ऐसा माना जाता है। इनमें जो बच जाये वो साधुचरित है साहब! और कथा सुनकर यदि आप ऐसे निर्णय करते हैं तो मैं आपको बधाई दूं कि आपने कर के दिखाया।

''बापू, जैसे शिव ने पार्वती को बताया, 'राम राम रामेति रामेति', एक बार रामनाम लेने से सब सहस्र नाम का फल मिलता है, इस तरह 'विष्णुसहस्रनाममंत्र' में सारभूत मंत्र कोई है जो करने से पूरा पाठ का फल मिले?'' तो मुझे पूछा है कि भगवान का कोई ऐसा मंत्र 'विष्णुसहस्रनाम' से एक मंत्र? यद्यपि वो सहस्रनाम जहां से शुरू होता है वहां नहीं लिखा लेकिन यदि आप एक मंत्र लो 'यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसारबंधनात्। विमुच्यते नमस्तस्मै विष्णवे प्रभ विष्णवे।' एक मंत्र उठा लो। बाकी छोड़ो ना यार ये झंझट! एक बार राम बोले।

''बापू, कल 'विष्णुसहस्रनाम' के अंतर्गत काम की उपयोगिता के बारे में बात चल रही थी तब बापू, 'अरण्यकांड' की चौपाई 'काम आदि मद दंभ न जाके। तात निरंतर बस मैं ताकें।' किस रूप में हैं?'' अच्छा प्रश्न है। मैं कल काम के बारे में बोल रहा था, 'कामदेव कामपालः कामी कान्तः' आदि-आदि जो 'विष्णुसहस्रनाम' का मंत्र है। तो आपने पूछा है कि 'अरण्यकांड' में तो लिखा है, 'काम आदि मद दंभ न जाकें।' जिसके हृदय में काम आदि दोष न हो, दंभ न हो, मद न हो, भगवान कहते हैं, उसके हृदय में मैं निवास करता हूं। यहां तो काम को निकालने की बात की और वहां तो भगवान को कामी कहा? ये समझो, चौपाई स्पष्ट है। क्या कहती है? 'काम आदि मद दंभ', काम आदि दोषों को छिपाने का दंभ न करो। काम आदि का दंभ छोड़ दो। कामी है तो है। 'मो सम कौन कुटिल खल कामी।' हम दंभ करते हैं। ये दंभ छोड़ने की बात तुलसी ने कही। काम आदि विकारों का दंभ छोड़ो। तलगाजरडी अर्थ ये है कि काम आदि का जिसमें दंभ नहीं और मद नहीं। मैंने क्रोध किया और सौ लोगों को भगा दिया ये घमंड न होना चाहिए। मेरी कामना कोई पकड़ नहीं पाया ये दंभ नहीं होना चाहिए।

''बापू, क्या समालोचना करना भी निंदा में आता हैं?' समालोचना जरा खूबसूरत शब्द है, अंदर तो निंदा ही है। समालोचना करते समय तुम्हें मिठास मिलती हो तो समझना तुम अच्छे कपड़ों में निंदा को शृंगार सजकर आये हो! आलोचना आलोचना ही है। हां, व्यासपीठ ने कहा, निंदा नहीं, निदान होना चाहिए। एक बच्चा दौड़ा, पैर थोड़ा फिसल गया, थोडा मूड़ गया, उसकी निंदा न करो। माँ निंदा नहीं करती, निदान करती है, पट्टी बांधती है। माँ के दिल में पीड़ा होती है। दूसरे के कल्याण के लिए तुम्हारे में पीड़ा है और तुम निदान करो तो ठीक है, बाकी 'समालोचना' बड़ा प्यारा शब्द है अपने को फुसलाने का!

''आपने कल पांच कर्मों की बात कही। रामकथा का गाना कोई कर्म है?'' नहीं, रामकथा गाना कर्म नहीं है, कर्ममुक्ति है। ये मैं बोलूं तो कर्म माना जाएगा, आप सुनो तो कर्म माना जाएगा। तत्त्वतः ये कर्म नहीं है। ये कर्म से मुक्ति है। ज़िंदगीभर गाते जाओ और मुक्त होओ; ज़िंदगीभर सुनो और मुक्ति महसूस करो। ये कर्म नहीं है, कर्मबंधन दूर करता है। कर्म बांधता है। यदि रामकथा गाना कर्म है तो हम बंध जायेंगे। और कर्म का फल लगता है अच्छा-बुरा। रामकथा के साधक को कोई फल की पड़ी नहीं है। अच्छा-बुरा कुछ नहीं है फल। 'न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दुःखम्।' कुछ नहीं चाहिए। बस, जैसे सांस चलती है वैसे रामकथा होती है। ये कर्म है ही नहीं। ये कर्ममुक्ति है।

''आप 'मानस' की चौपाईयां-दोहे-छंद आदि विभिन्न रागों में गाते हैं। जब आप अपना नित्य का पाठ करते हैं तो वह किस राग में गाते हैं?'' मैं नित्य पाठ करता हूं तो गाता नहीं हूं क्योंकि जल्दी पूरा करना है। ये चैत्र नवरात्र चलता है तो मैं नौ दिन में पूरा नवाह्न करूंगा। और फिर कथा में आना है। और सब नित्यकर्म करना है। तो उसमें मैं जैसे 'बंदउ गुरु पद पदुम परागा।' मेरा कान सुने इतनी आवाज़ से मैं पाठ करता हूं क्योंकि कान की इन्द्रियां मुझे फरियाद करती है कि तू जिह्वा को लाभ दे और कान को न दे! बेवफ़ाई मत कर! लेकिन इसमें भी मुझे गाने का मूड आ जाये तो गाता भी हूं कभी-कभी। जब गाने का मूड आये तो ऐसे और जितने दो- चार-पांच राग थोड़ा समझ पाते हैं तो कभी-कभी गा भी लेते हैं। लेकिन पाठ तो मैं ऐसे ही कर लेता हूं। गाने में बहुत देर लगती है। गाने की, पाठ की महिमा बिलग है, यस। 'गावत संतत संभु भवानी।' शंभु 'रामायण' का पाठ करे तो गाते ही हैं। गाने की महिमा है। ये गाने का शास्त्र है। कल कोशिश करूंगा मैं आपको कहने की। आज बस यहां पूरा करें। कथा भी यहां पूरी करें।

मानस-बिष्नु : ७

प्रेम है पुरुष और भक्ति है स्त्री

जिस निर्गुण, निराकार, व्यापक परम ब्रह्म राम, जो परमतत्त्व है, उससे कई विष्णु प्रगट होते हैं और फिर अवतार की परंपरा में उसी विष्णु जो निराकार राम है वो साकार बनकर धरती पर आते हैं, ऐसे विष्णु को केन्द्र में रखते हुए हम और आप ये चैत्र नवरात्र के पावन दिनों में भगवान विष्णु की परिक्रमा कर रहे हैं। थोड़ा आगे बढ़ें। रोज की तरह आपकी बहुत जिज्ञासाएं आती हैं। पूरा पढ़ भी नहीं पाता इतनी संख्या में आ रही है! जो मैं रख पाया उसके बारे में कुछ कहूंगा। हम अपने से शुरू करें मानवदेह से; जैसे हम जीव है। हमारी जीवन की जो क्रियाएं है उनमें स्थूल रूप में, लौकिक रूप में, इससे हम आगे बढ़ें।

मुख्यतः ऐसे हम विभाग कर सकते हैं। एक होता है हमारा निवास, जहां हम निवास करते हैं; जो परमेनेन्ट हमारा निवास होता है। दूसरा होता है, हम कार्य के लिए कई जगह जाते हैं, घूमते रहते हैं। कभी यहां गए, कभी यहां गए, कभी उधर; कार्य के मुताबिक हम घूमते रहते हैं। तीसरी कोई जगह ऐसी होती है जहां हम खड़े रह जाते हैं। और कोई जगह ऐसी होती है कि जहां हम बहुत आराम के साथ 'हाश' कहकर, 'हे हरि' कहकर बैठ जाते हैं। और पांचवां स्थान है कि जहां हम सो जाते हैं। मैं इस तरह विभाजित कर के आप से संवादी सूर में कुछ बातें करना चाहता हूं। आपका कायमी निवास, कार्य के अनुकूल घूमना, प्रवास-यात्रा आदि; कहीं खड़े रहना; कहीं रुक जाना ये भी एक कला है। आदमी को कोई ऐसी जगह मिले जहां आदमी को रुक जाना चाहिए। और कोई ऐसी जगह मिले जहां आदमी बहुत तसल्ली के साथ बैठ जाता है। और शरीर को विश्राम भी चाहिए, निद्रा भी चाहिए। फिर वो सो जाता है। भगवान विष्णु जो परम विष्णु परमात्मा राम है उससे तीन उर्जा में जो बंटी हुई एक उर्जा सब को पैदा करे; एक उर्जा सब का पालन करे; एक उर्जा समय पर फिर निर्वाण कर के समाप्त कर दे। उसी विष्णु से अवतार परंपरा में राम, कृष्ण, मत्स्य, कूर्म, वराह आदि सब आते हैं। मूल में ये परमतत्त्व राम है।

तो विष्णु को केन्द्र में रखकर हम बातें कर रहे हैं तब विष्णु का निवास, विष्णु का घूमना, विष्णु का कहीं रुक जाना, खड़े रहना, विष्णु का कहीं बैठ जाना और विष्णु का सोना। पांच भाग में, पांच एन्गल से हम विष्णु को देखें। मैं आपसे पूछुं, आप मुझे जवाब दे सकते हैं। मुझे यकीन है, आप दे पाएंगे क्योंकि ये मेरा सवाल बिलकुल सरल है। तो मैं आप से पूछुं कि विष्णु का निवास कहां हैं? 'हृदय में।' हां, वो तो ठीक है। मैं आपके सामने के विष्णु को पेश कर रहा हूं जिसको हम नारायण कहते हैं, लक्ष्मीनारायण कहते हैं, नरनारायण कहते हैं, विष्णुनारायण कहते हैं, वो विष्णु कहां रहता हैं? 'दीनदुःखियों में।' ये भी अच्छा है। भाव के रूप में दीनदुःखियों में विष्णु रहता है, ठीक है। 'वैकुंठ'; ये जवाब सही है। वैकुंठ में रहता है। विष्णु का वास वैकुंठ। भगवान शंकर का कैलास हुआ तो शिवलोक; ब्रह्माजी का ब्रह्मलोक; इन्द्र का इन्द्रलोक, वैसे विष्णु का कायमी एड्रेस जो है वो है वैकुंठ। ये आपका जवाब बिलकुल ठीक है।

अब मैं आपसे पूछना चाहूंगा कि ये खड़ा कहां रहता है? 'जहां भक्त गायन करते हैं वहां भगवान खड़े रहे हैं।' बहुत अच्छा जवाब है। और बलि के द्वार पर भी खड़े हैं। वो भी ठीक है। लेकिन भगवान स्वयं कहते हैं नारदजी को जहां मेरे भक्त संकीर्तन करते हैं वहां मैं खड़ा रहता हूं। भगवान बैठते कहां है? मेरा प्रश्न समझिएगा, मैं स्थूल रूप में कह रहा हूं। सात्त्विक वृष्टि-दृष्टि होती है वहां तो ऐसे सूक्ष्म अणु-परमाणु के रूप में विष्णुभाव लेकिन जैसे दादाजी ने कहा कि जहां भक्त कीर्तन करते हैं वहां वो खड़े रहते हैं। जैसे कहा कि क्षीर समुद्र में वो स्थूलरूप में लेटे रहते हैं। वैकुंठ उसका निवास है तो वहां भी जाते रहते हैं, मूल अपना एड्रेस, केपिटल वो जो अपना मुख्य गांव है तो वहां वो निवास करते हैं। घूमते रहते हैं अत्र-तत्र-सर्वत्र ये सब जैसे घूमते रहते हैं। मैं बहुत खुश हूं कि आप सब इतना अच्छा सोचते हैं।

'विनयपत्रिका' में कुछ स्तुतियां है इसमें रामस्तुति है, सीतास्तुति है, लक्ष्मणस्तुति है, भैरवस्तुति है, शिवस्तुति है, गणेशस्तुति है; बहुत-सी स्तुतियां है उसमें एक नारायण की स्तुति है। इसमें एक श्रीरंग की भी स्तुति है 'विनयपत्रिका' में। मुझे इस मुद्दे पर मेरी कथा को ले चलना था इसलिए मैंने ये सात्त्विक व्यायाम किया और थोड़ा करवाया। आप सही में

सुनने के लिए ही आते हैं, ये पक्का हो गया। वरना लोग देखने के लिए आते हैं! कई कारणों से आते हैं! लेकिन ये तो पक्की बात है कि लोग सुनने के लिए ही आ रहे हैं। इतने व्यस्त संसार में भी आप समय निकालकर सुन रहे हैं। और आप सब ने अच्छी जगह बताई।

कल कुछ जिज्ञासाएं बाकी रह गई थी उसमें बड़ी प्यारी एक जिज्ञासा है कि 'रामायण' में इतने प्रकार का प्रेम है; इतने प्रकार की भक्ति है; लेकिन प्रेम और भक्ति इनमें अंतर क्या है? मूलत: एक अंतर है। प्रेम है पुरुष, भक्ति है स्त्री, ये याद रखना। तत्त्वत: दोनों एक है। भाषा में भी प्रेम कैसा? प्रेम पुरुषवाचक है। भक्ति कैसी? सीता को भक्ति कहा। प्रेम पुरुष है। 'मानस' में भरत को प्रेम कहा है; वो पुरुष है। यद्यपि जातिभेद नहीं है। प्रेम और भक्ति एक है। नारद ने भी स्वीकारा है कि भक्ति प्रेमस्वरूप है। कभी शांडिल्य कहते हैं, प्रेम ही भक्ति है; कभी अंगीरा कुछ कहते हैं। लेकिन 'मानस' जो प्रेम और भक्ति की व्याख्या देता है, मुझे नहीं लगता कि इसके बाद किसी को व्याख्या करने की जरूरत पड़े। ये अंतिम व्याख्या है, प्रेम और भक्ति।

पहला भेद समझिये, प्रेम है पुरुष। लेकिन कोई भी पुरुष में अहंकार होता है। प्रेम एक ऐसा निरहंकारी पुरुष है, जैसे कि भरत; अहंकार नहीं है। मैं क्या सर्टिफिकेट दूं?

लखन तुम्हार सपथ पितु आना।
सुचि सुबंधु नहिं भरत समाना।
भरतहि होइ न राजमदु बिधि हरि हर पद पाइ।

तू कहता है लक्ष्मण कि भरत को राजमद आ गया है। बाप! भूल मत करिये। प्रेम है; प्रेम को कभी मद नहीं आता। चित्रकूट में जो भगवान लक्ष्मण को समझाते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश का पद यदि भरत को मिल जाये तो भी भरत को राजमद नहीं होता। मैंने आज तक लक्ष्मण, तेरी कसम नहीं खाई बाप! मैं सोता हूं, तू जागता है। लखन, मैंने तेरी कसम जीवन में कभी नहीं खाई। तू मुझे बहुत प्यारा है लखन। जागता हुआ भाई किसको प्रिय न हो? जागता हुआ बाप किसको प्रिय न हो? जागती हुई माँ किसको प्रिय न हो? जागता पति किसको प्रिय न हो? जागता मीन्स होश में, सावधान, अपने उत्तरदायित्व के प्रति सजगा किसको प्रिय न हो? यदि परिवार में प्रिय होना है तो एक-दूसरे के लिए जागो। जागो मीन्स एक-दूसरे के लिए तत्पर रहो; जागो। नींद तो लेनी चाहिए। जागो। आप समझ गये, मेरा जागने का मतलब क्या है। समस्त बुद्धपुरुषों जो हो गये ऐसे परिपक्व बुद्धपुरुषों के लिए हमारे नीतिनभाई ने एक कविता लिखी है-

साहिब जगने खातर जागे।
छेक भांगती राते जाते ऊंडुं तळियुं तागे।

ओसमान ने गाया है। साहिब जगने खातर जागे। लक्ष्मण जैसा कौन? कबीर जैसे कौन? नानक जैसे कौन? निझाम जैसा कौन? एकनाथ, ज्ञानेश्वर, तुकाराम जैसा कौन? मीरां और तुलसी जैसा कौन? जो जग के लिए जागे। दुनिया में फिर क्यों न हो? हम अपने लिए कभी नहीं जागे कि मेरा कल्याण किस में है! उसके बारे में भी हम सावधान नहीं है कि मेरा कल्याण किस में है! मैं जिसस क्राईस्ट को फिर एक बार प्रणाम कर के क्वोट करूं ये आदमी ने कहा कि ये लोग क्या कर रहे हैं, उसको पता ही नहीं! बुद्धपुरुषों का दर्द, इनकी चीख तो सुनो जब खिले ठोके जा रहे हैं! उसको माफ़ कर देना। जो जागे। गुजराती में है लेकिन समस्त बुद्धपुरुषों के चरणों में एक वाङ्मयी पुष्प समर्पित किया गया। कवियों के पास ये संपदा है, वो ये देगा। हमारे अतुल अजनबी साहब जो ग्वालियर से आये हैं, वो कविता सुना रहे थे, उसने मुझे दी है।

हरेक बात पे बस एक ही बहाना है।
झुका के नज़रे उन्हें सिर्फ़ मुस्कुराना है।
गमों की धूप वहां तक कभी नहीं आती,
जहां जहां तेरे रहमत का शामियाना है।

हरि तेरी रहमत का जहां-जहां शामियाना है वहां कोई गम की धूप नहीं आती। क्या हकीकत पेश करता है सर्जक!

इसी हवस में हवा रात-दिन भटकती है,
कहां चराग जलाना, कहां बुझाना है।

देखिये, कहां से शे'र लाया है शायर! ये हवा भटकती रहती है; उसने जो हवा के अंदर की छबी जो पकड़ी है कि क्यों भटकती है? हवा चलती रहती है। इसी हवस में ये भटकती है। कौन-सी हवस? बड़ा प्यारा शब्द युझ किया साहब आपने। जहां जो शब्द होना चाहिए ये सर्जक को पता होना चाहिए। आदमी को जगाता भी है शब्द, आदमी को सुला भी देता है। तो मुझे ये प्रसंगोचित लगा। तो बहुत-से सुंदर शे'र आपने दिये। मैं आग्रह करूंगा कि एक बार आप खड़े होइए, आपको देखे। एक बार तालियां इस शायर के लिए। शुक्रिया। और अब जो मैं बातें कहना चाहता हूं, निष्काम भाव से दूसरों के परम हित के लिए कोई शुभचिंतक जागे ये किसको प्रिय नहीं होगा? लेकिन हमें पता नहीं कि हम क्या किये जा रहे हैं? सौराष्ट्र युनिवर्सिटी राजकोट के

गुजराती विभाग के अध्यक्ष, मेरे आत्मीय नीतिनभाई वडगामा की ये रचना है, 'साहिब जगने खातर जागे।' कितनी बड़ी अंजलि बुद्धपुरुषों को आपने दी! वो जग के लिए जागता है। नीतिनभाई को अच्छा न लेगे लेकिन मैं आग्रह करूं, एक बार खड़े हो। उसने गुजराती में लिखा है उसका मतलब ये है कि साहिब है वो जगत के लिए जागता रहता है।

मैं आप से यही कहना चाहता हूं कि प्रेम और भक्ति ये दो नहीं है, एक ही है। फिर भी क्यों तुलसी इतने प्रकार के प्रेम की बात 'मानस' में करते हैं? तुलसी इतने प्रकार की भक्ति की बातें 'मानस' में करते हैं? कोई सर्जक, कोई पहुंचा हुआ संत जब कोई बात करता है तो उसके पीछे कोई न कोई अद्‌भुत कारण है। प्रेम है पुरुष लेकिन याद रखें मेरे श्रोता भाई-बहन, प्रेम एक ऐसा पुरुष है जिसको कभी अहंकार नहीं आता। आप किसी से प्रेम करते हो और आप में प्रेम का अहंकार आया तो आप प्रेम नहीं कर रहे। आपका ये वहम है, ये प्रेम नहीं है। भरत के बारे में 'मानस' में कहा, राम के प्रेम ने मनुष्य का शरीर धारण किया उसका नाम भरत है। तो प्रेम है पुरुष लेकिन अहंकारमुक्त पुरुष।

प्रेम का दूसरा लक्षण मैं कहना चाहता हूं 'मानस' के आधार पर कि प्रेम निरहंकारी होता है। और प्रेम मुखर नहीं होता; शत्रुघ्न की तरह चुप रहता है। पूरी ज़िंदगी में ये आदमी नहीं बोला! शत्रुघ्न मौन प्रेमपुरुष है। भरत निरहंकार प्रेमपुरुष है। प्रेम का एक लक्षण है अचलता; जहां होगा, स्थिर होगा। उपस्थितिमात्र कह देगी कि प्रेम बह रहा है। कभी-कभी कोई बुद्धपुरुष चुपचाप बैठा और उसके इर्द-गिर्द में आते ही हमारी आंखें क्यों नम होने लगती है? ये हमारी अवस्था का परिचय नहीं है। ये जो बैठा है ना उसी की अवस्था का परिचय है। प्रेम अचल होता है। ये 'प्रेम-प्रेम' बोल रहा हूं ये केवल धरतीवाला जो हम लोग 'प्रेम' शब्द को बदनाम किये जा रहे हैं उसकी बात नहीं है। साल में एक बार चौदह फरवरी को वेलेन्टाईन-डे! प्रेम कोई एक दिन मनाने की चीज है? प्रेम तो प्रतिपल जीने की चीज है। जिसके लिए नारद 'भक्तिसूत्र' में कहते हैं, 'प्रतिक्षण वर्धमानम्।' मेरा सूत्र नहीं, 'भक्तिसूत्र' में नारद बोले, जो मेरे तुलसी तो कहते हैं, 'छन छन नव अनुराग।' अनुराग मानी प्रेम। जो क्षणेक्षण बढ़ें। अच्छा है पूरे साल में न मनाये, एक दिन तो मनाये! चलो, ये भी हम क्यों नकारात्मक बोलें? बाकी प्रेम तो निरंतर होता है। प्रेम अचल होता है। उसको कोई खंड़ित नहीं कर सकता। ये प्रेम का लक्षण है। ये पुरुष है; निरहंकारी पुरुष है; मौन पुरुष है; अविचलित पुरुष है; अविचल पुरुष है।

प्रेम का आगे का लक्षण, प्रेम दानी है। चीज़-वस्तु नहीं देता। चीज़-वस्तु देनेवाले वंदनीय है; देना चाहिए; जिसके पास जो हो, देना चाहिए। प्रेम दानी है लेकिन सामान्य दानी नहीं, 'महादानी भुरिदा जनाः।' खलिल जिब्रान ने कभी कहा था, प्रेम दानी है लेकिन चीज़-वस्तु नहीं देता, खुद को दे देता है। प्रेम है महादानी। छोटी-बड़ी चीज़ नहीं देता। हम और आप प्रेम में कुछ चीज़-वस्तु दे देते हैं; फूल देते हैं; प्यारे-प्यारे शब्द देते हैं; अपने को बचाये रखते हैं! ये अच्छा तरीका है अपने को बचाने का! राम ने सिर दे दिया सुग्रीव को। राम ने चरण दे दिया अंगद और हनुमान को। राम ने आंख दे दी चंद्रमाँ को। मेरे राम ने अपनी आंखें निम्न को नहीं दी, उच्च को दी। देखना है तो निम्न को नहीं, उच्च को देखो। चांद उपर है। 'देखा उदित मयंक।' निकल ही रहा है चंद्र और धीरे-धीरे ठाकुर की आंख उपर उठती है। और मेरे भाई-बहन, दृष्टि की उच्चतर अवस्था एकदम नहीं होती, होले-होले होती है।

तो हम चर्चा कर रहे थे, भगवान राम ने आंखें दी चांद को। आंखें निम्न को न दी जाये। निम्न के लिए प्रार्थना की जाये आंखें नम करके, 'अल्लाह, उसका भला करो।' उच्च को आंख दी जाये। तो राम ने सिर दिया सुग्रीव को; चरण का दान किया अंगद-हनुमान को; चक्षुदान किया चांद को। भगवान ने हाथ दिया धनुष और बाण को। हाथ दिया धनुष-बाण को मतलब धनुष है ज्ञान। व्याख्या में नहीं, ज्ञान मुठ्ठी में है। हाथ दिया ज्ञान को और हाथ दिया संयम को। जीभ दी विभीषण को। तो कहीं होठ दिया, कहीं जीभ दी, कहीं चरण दिया, कहीं आंखें दी, कहीं सिर दिया। प्रभु अपना अंगदान कर रहे हैं।

भगवान कहां वास करते हैं, कहां खड़े रहते हैं, कहां बैठते हैं, कहां घूमते हैं, कहां सोते हैं उसको भूमिका बनाकर के मुझे आप सबको लिये चलना था 'विनयपत्रिका' की श्री रंग की स्तुति में, जहां विष्णु भगवान शिव और ब्रह्मा को कहते हैं, भागो, चलो, हम विदुर के घर जाए। इतने लक्षणवाला कोई साधु हो तो विष्णु दौड़ता है; श्रीरंग दौड़ता है; कमलापति दौड़ता है; कमलानिवास दौड़ता है कि चलो, कोई ऐसा बुद्धपुरुष है; हम सब उनके दर्शन के लिए जाएंगे। ऐसा 'विनयपत्रिका' में पद है। आप कथा जानते हैं कि विदुर के घर ठाकुरजी जाते हैं। जिसमें ऊंचाई होती है उसमें भेद होता नहीं साहब! वो तो सच्ची पुकार सुनते हैं। दुर्योधन और पूरी सभा

ने और पूरे समाज ने कहा कि इतना इंतजाम किया और कृष्ण कैसा आदमी है, उसके घर चला गया! जगतभर की आलोचना सहन करके वो वहां गया, जहां कोई नहीं जा रहा था। इसलिए मेरी कथा जा रही है गणिका की ओर जिसके पास कोई नहीं जाता। इसलिए मैं एक कथा करनेवाला हूं, 'मानस-गणिका।' मेरे गुरु की कृपा से मैंने 'मानस-किन्नर' किया ठाणे में, किन्नर समाज के लिए। अयोध्या में कथा कहनी है 'मानस-गणिका।' क्योंकि तुलसी ने गणिका का जिक्र किया है।

अपतु अजामिलु गजु गनिकाऊ।
भए मुकुत हरि नाम प्रभाऊ।।

मेरे ठाकुर के नाम की महिमा तो देखो! गणिका पावन हो गई। चौबीस गुरु किये हैं दत्तात्रेय ने; उसमें एक गुरु गणिका है, हां, साहब! शताब्दियों से ये कथा रह गई। और तुलसी के समय में भी एक गणिका थी, जिसका नाम था वासंती और जिसका उद्धार तुलसी ने किया। मेरे भाई-बहन, भरोसा कीजिए; कैसे भी हो, हरिनाम तारेगा। कोई बुद्धपुरुष की एक नज़र बेडा पार कर देगी; हमें खोजती आयेगी; तारेगी। तो भगवान विदुर को खोजते-खोजते जा रहे हैं; उसके घर जाते हैं। अपने-पराये का भेद, धनी और निम्न का भेद साधु की आंख में कैसे हो सकता है? तो ऐसा साधु जो 'विनयपत्रिका' में नारायणस्तुति-श्रीरंग स्तुति अंतर्गत है उसके पास जाने के लिए विष्णु कहते हैं ब्रह्मा को, अवसर चुक जाओगे; बूढ़े बाबा शंकरजी से कहते हैं, महाराज, कब तक योगी का ध्यान करते रहोगे? एक बार देख लो। वो पंक्तिया मैं लिखकर लाया। कैसा बुद्धपुरुष, जिसको इस कथा में मैने बार-बार शुरू कर दिया कि बुद्धपुरुष ईश्वर का दसवां अवतार है। कल्कि-बल्कि की हमें खबर नहीं; कोई बुद्धपुरुष दसवां अवतार है। बेशक, मेरी व्यक्तिगत धारणा में दसवां अवतार प्रत्येक व्यक्ति का अपना गुरु है, जिसको तुम मानते हो। व्यक्ति के रूप में नहीं, विष्णु के रूप में, वैश्विक चेतना के रूप में। यही तो हमारा दसवां अवतार है। लेकिन उसके कुछ लक्षण है। उस बुद्धपुरुष के पास चलो, जिसमें इतने लक्षण है।

शांत, निरपेक्ष, निर्मम, निरामय,
अगुण, शब्दब्रह्मौकपर, ब्रह्मज्ञानी।
दक्ष, समदृक, स्वदृक, विगत अति स्वपरमति,
परमरतिविरति तव चक्रपानी।।
विश्व- उपकारहित व्यग्रचित सर्वदा,
त्यक्तमदमन्यु, कृत पुण्यरासी।
यत्र तिष्ठन्ति, तत्रैव अज शर्व हरि सहित
गच्छन्ति क्षीराब्धिवासी।।

- 'विनय-पत्रिका।'

जहां ऐसा कोई बुद्धपुरुष रहता है, चलो, हम वहां जाये। अब इनके लक्षण। जब मैं दसवां अवतार कहता हूं बुद्धपुरुष को लेकिन हम जसे संसारी जीवों को असमंजसता होती है कि कौन है ये बुद्धपुरुष, जिसको हम बुद्धपुरुष कहें? तो उनके कुछ लक्षण, कुछ विशेष चर्चा 'विनय-पत्रिका' से। ये शांत है। कोई भी परिस्थिति जिसको अशांत न कर सके। व्याख्या करनी तो बहुत आसान है। दूसरा विचलित हो जाये तो कहे, अरे, शांति रखो, शांति रखो! खुद पर आये तब शांति रखना बड़ा मुश्किल है। अग्नि दिखाई नहीं देता, धुआं भी नहीं होता और इंधन में अग्नि जैसे शांत होता है, वैसे कोई बुद्धपुरुष शांत होता है। विष्णु तो ऐसे ही हैं; विष्णु का दसवां अवतार भी ऐसा। 'निरपेक्ष'; उसको बुद्धपुरुष समझना, जिसको हमारे पास या किसी के पास कोई भी अपेक्षा नहीं है; किसी से जिसको कुछ नहीं चाहिए। 'निर्मम'; ममतामुक्त। ममता है भी तो 'मानस' की ममता है। निर्मम का अर्थ ममतारहित भी होता है। निर्मम का अर्थ है, मेरा कुछ नहीं; सब तेरा। व्याधिमुक्त, चिंतामुक्त, उपाधिमुक्त जो महापुरुष है वो बुद्धपुरुष है। 'अगुण'; तीनों गुणों से परे ऐसे कई व्यक्ति जीवन की यात्रा में मिल जाते हैं उसमें आप रजोगुण भी न देख सको, सत्त्वगुण भी न हो, तमोगुण तो हो ही नहीं सकता। अगुण है। गुण का अर्थ होता है संस्कृत में रस्सी, धागा। रस्सी का काम है बांधना। सत्त्वगुण भी आदमी को बांधता तो है ही। साधु गुणातीत होता है।

'शब्दब्रह्मौकपर'; शब्दब्रह्म जिसको कहते हैं, इन सबसे परे है। शब्द बोलता है, शब्दब्रह्म उच्चारण करता है लेकिन शब्दों में बंधता नहीं, उससे पर है। खुद के शब्दों का साक्षी है। इससे परे है, शब्द से बंधता नहीं। 'ब्रह्मज्ञानी'; ब्रह्मवेत्ता है, जो ब्रह्मज्ञानी है। 'दक्ष'; जीवन का लक्ष्य क्या है उसकी समझ जिसको है वो दक्ष है। जीवन का लक्ष्य; उद्देश्य क्या है वो जिसको पता है वो दक्ष, वो बुद्धपुरुष है। 'समदृक'; समान दृष्टि जिसकी है। न कोई अपना, न कोई पराया; समबुद्धि जिसकी। 'स्वदृक'; जिसने आत्मअनुभव किया है, खुद को देखा है, खुद को जाना है। 'विगत अति स्वपरमति'; अपना-पराया ऐसी जो भेदवृत्ति है उससे जो मुक्त है; ये मेरा और ये उसका ये भेदबुद्धि जिसकी छूट गई। बुद्धपुरुष वो है जो स्वपरमति से बाहर है। इसमें भेदबुद्धि नहीं। 'परमरतिविरति तव चक्रपानी'; परम रति हो अथवा तो परम विरति हो वो

केवल तेरे में हो। परम रति मानी परम आसक्ति और विरति मानी वैराग जो भी हो, चक्रपाणि विष्णु, तेरे चरणों में हो, हरि में हो। फिर आगे का लक्षण, 'विश्व- उपकारहित व्यग्रचित सर्वदा'; विश्व के मंगल के लिए जिसका चित्त कायम व्यग्र रहे। साधु का चित्त उग्र नहीं होता; व्यग्र जरूर कि ये लोग क्या किये जा रहे हैं? जिसको पता नहीं कि वो क्या करने जा रहे हैं? ये 'व्यक्तमदमन्यु कृत पुण्यरासी'; मद मानी अभिमान, मन्यु मानी क्रोध। मद और क्रोध से जो दूर है। 'कृत पुण्यरासी'; जो पुण्यराशि है जिसके जीवन में उसने शुभ के सिवा कुछ किया ही नहीं। हुआ होता, चला होता। कर्ताभाव से मुक्त। 'यत्र तिष्ठन्ति'; ऐसा कोई साधु जहां निवास करता है वहां चलो। 'तत्रैव अज शर्व हरि सहित गच्छन्ति क्षीराब्धिवासी।' ऐसे क्षीर समुद्र में निवास करनेवाले विष्णु इन सब को लेकर चलते हैं। तो विष्णु की एक परिभाषा ये है; ऐसा कोई बुद्धपुरुष जगत में आता है तो महादेव को लेकर, ब्रह्मा को लेकर, उसके दर्शन कराने के लिए विष्णु बुलाता है कि बाबा, इसका दर्शन करो।

प्रेम और भक्ति की बात चल रही थी तो प्रेम क्या है, भक्ति क्या है? प्रेम है पुरुष, भक्ति है नारी। थोड़ा कल कहूंगा। आज मुझे रामजनम गाना है। भगवान राम ने शिवजी को मनाया कि आप शादी करो क्योंकि तारकासुर नामक एक राक्षस समाज को परेशान कर रहा है। और तारकासुर की मृत्यु तभी हो सकती है जब शिव ब्याहे और उनके घर पुत्र का जन्म हो तो शिव का पुत्र ही तारकासुर को मार सके। तो भगवान की शादी के लिए तैयारियां चली। अब भोलेबाबा स्मशानवासी भूत-प्रेत उनके जो निकटवाले सब जो थे गण वगैरह शिवजी को कहने लगे, बाबा, शादी की आपने हां कह दी लेकिन सोचा नहीं कि शादी में मुकुट चाहिए, मोड चाहिए, सवारी चाहिए! भगवान शंकर ने कहा कि मेरी जटा जो बिखर चुकी है उसका मुकुट बना दो। जटा का मुकुट बनाया। सांप को मोड बनाया। गले में सांप का हार पहनाया। यज्ञोपवित-जनेउ भी सांप की। हाथ में कंगन, कान में कुंडल, सब सांप के शृंगार हुए।

विष्णु, विरंचि आदि सब बाराती है। सब देवता आये हैं और सब देवता तो सुंदर पीताम्बर-गहने पहने हैं और ये बाबा अवधूत भभूत! सब हंस रहे हैं, विनोद कर रहे हैं! व्यवस्था के नाम पर ये स्वार्थी और चतुर देवताओं ने सबको बिलग कर दिया। भगवान शंकर समझ गये। विष्णु के सामने मुस्कुरा कर भोलेबाबा ने कहा, आप देव है, मैं महादेव हूं ये मत भूलो। तुरंत अपने गणों को बुलाया। बोले, इस दुनिया में जितने स्मशान हो और स्मशान में जितने अपने भूत-प्रेत रहते हो इन सबको सहपरिवार निमंत्रण दो कि बाबा का ब्याह हो रहा है, शीघ्र ही आओ। और तत्क्षण पूरी दुनिया से भूत-प्रेत आ गये क्योंकि मृत्यु तो सब जगह है। स्मशान सब जगह है, तो भूत-प्रेत भी होंगे।

दूल्हे महाराज की सवारी राजभवन का हिमाचल का भवन है वहां द्वार पर पहुंची। महारानी मैना अपनी सखियों के संग स्वर्ण थाली में दीप जलाकर लाई है। और भगवान शिव का ये रूप और ये सांप ये सब देखते ही महारानी मैना के हाथ से मंगल दीप सहित आरती फर्श पर गिर गई! मूर्छित हो गई! सब भवन के गर्भ में गये जहां महारानी मूर्छित अवस्था से थोड़ी बाहर आई। अपनी बेटी को गोद में बिठाकर महारानी मैना रोने लगी कि हे बेटा, तुझे इतनी सुंदर बनाई ब्रह्मा ने और तेरे पति को ऐसा बावरा और पागल क्यों बनाया? बेटी माँ को समझा रही है इतने में हिमाचल महाराज, सप्तऋषि, देवर्षि नारद सब अंदर आ गये। नारदजी ने आते ही मैना को कहा कि महारानी, मैं जानता हूं, आप मुझ पर नाराज है लेकिन आपको पता नहीं हैं; आप मानती है कि ये पार्वती आपकी बेटी है लेकिन ये तुम्हारी बेटी है ये तो तेरा सद्भाग्य है बाकी ये पूरे जगत की माँ जगदम्बा भवानी है। और आपने जिस महादेव का अपमान किया वो परमात्मा शिव है।

मेरे भाई-बहन, मेरी व्यासपीठ कहती रहती है कि हमारे द्वार पर ही शिवतत्त्व कभी-कभी आता है और हमारे भीतर ही शक्तितत्त्व होता है लेकिन नारद जैसे कोई

प्रेम है पुरुष, भक्ति है स्त्री। तत्त्वत: दोनों एक है। प्रेम कैसा? प्रेम पुरुषवाचक है। भक्ति कैसी? सीता को भक्ति कहा। 'मानस' में भरत को प्रेम कहा है; वो पुरुष है। यद्यपि जातिभेद नहीं है। प्रेम और भक्ति एक है। प्रेम है पुरुष लेकिन याद रखें मेरे श्रोता भाई-बहन, प्रेम एक ऐसा पुरुष है जिसको कभी अहंकार नहीं आता। आप किसी से प्रेम करते हो और आप में प्रेम का अहंकार आया तो आप प्रेम नहीं कर रहे। आपका ये वहम है, ये प्रेम नहीं है। तो प्रेम है पुरुष लेकिन अहंकारमुक्त पुरुष।

सद्गुरु हमें परिचय नहीं कराता तब तक हम परिचय नहीं पा सकते। कोई चाहिए जो हमें परिचय करवा दे। सब भवानी को प्रणाम करने लगे कि ये तो जगदम्बा है। शिव के प्रति नया आदर प्रकट हो गया। फिर निमंत्रण गया महादेव को। अब दूल्हे की सवारी निकली और जब ब्याह मंडप में जाते समय उसके बाद भगवान शिव ने जो रूप धारण किया है! महादेव जैसा कौन सुंदर! मंडप के द्वार पर मेरे महादेव पधारे हैं। लोक और वेदमत्र उच्चारित हो रहे हैं। शिव मंडप में जाकर स्वर्ण सिंहासन पर विराजमान हुए। मर्यादा से जगत की माँ आज दूल्हन के रूप में बिराजमान है। चरण प्रक्षालन हुआ महादेव का। कन्यादान। नगाधिराज हिमालय यानी स्थिरता का प्रतीक। बाप कितना ही बड़ा क्यों न हो साहब! लेकिन बेटी का हाथ लेकर जब दूसरे पुरुष के हाथ में देता है तब कोई भी बाप कांप जाता है। बस, अब मेरी बेटी पराई हो जाएगी! हिमालय का हाथ कांपने लगा। आंखें पानी से भर गई। महारानी मैना की आंखें नम हो चुकी। अपने माँ-बाप की ये स्थिति देखकर भवानी भी थोड़ी नम आंखों से देख रही है। अपनी बेटी का हाथ महादेव के हाथ में समर्पित किया है। लोकरीति और वेदविधि से विवाहविधि संपन्न हुई। कन्याविदाय की बेला आई। हिमालय, मैना और ये पहाडी प्रदेश के गरीब और भोले लोग सब नैन डबडबा चुके हैं। हमारी बेटी आज जा रही है! और भारतीय परंपरा में बेटी की विदाय किस बाप को व्यथित नहीं करती? विदा के सुर छेड़ दिये गए। डोली सजाई गई। पार्वती डोली में बिराजित! कन्या विदाय हुई। माता-पिता परिवारजन थोड़े दूर पीछे गये। हमारे गुजराती में एक कवि है कवि दादल, उसने गुजराती में कन्याविदाय का गीत लिखा-

काळजां केरो कटको मारो, गांठथी छूटी गयो,
ममता रडे जेम वेळुमां वीरडो फूटी गयो।

कवि कहता है, बाप को लगता है कि कलेजे का एक टुकड़ा आज मेरे हाथ से निकल गया। बेटी है कलेजे का टुकड़ा। बेटी तो सांस है। सांस अंदर इसलिए लेते हैं कि कभी न कभी बाहर निकालनी पड़ती है। बेटी तो बाप की सांस है; उसको बाहर विदा करनी ही करनी है। एक समय था, जहां कन्या के लिए लड़का साध्य था, साधन नहीं था। और हर लड़के के लिए कन्या उसका साध्य थी कि इसके साथ हमें पूरा जनम और साथ-साथ हम निभाएंगे। आज कोई साध्य नहीं रहा, सब साधन हो गया! लड़के के लिए कन्या साधन! कन्या के लिए लड़का साधन! और साधन तो पुराना हो जाता है, साधन तो टूट जाता है। इसलिए दाम्पत्य बिगड़ता जा रहा है। बेटियों, बच्चों, पढ़ों; आज की टेक्नोलोजी का पूरा उपयोग करो; इसकी मना नहीं लेकिन खानदानी मत भूलो। अपने मूल और जड़ें को मत भूलो। यही पर हिन्दुस्तान टीका हुआ है, यही हमारी धरोहर है। हिमालय, पहाडी महिलायें बेटी की विदाय पर आशीर्वाद दे रहे हैं, हे पार्वती, तुझे सीताजी का आशीर्वाद मिले। तुझे तेरा पति बहुत आशीर्वाद दे। 'तने साचवे तारो पति अखंड सौभाग्यवती।' आज माँ की ममता का प्रतीक ऐसा आंगन तू छोड़ रही है। पिता का मन तेरा दरवाजा था, आज तू बाहर जा रही है।

समाज को प्रार्थना करूं कि बेटा जन्मे घर में तो उत्सव जरूर मनाओ लेकिन बेटी जन्मे तो सवाया उत्सव मनाओ। बेटा केवल बाप के कुल को तारता है, बेटी तीन कुल को तारती है। बाप का कुल, ससुर का कुल और अपने नाना-नानी का कुल। तीन कुल को तारनेवाली बेटी है। इसलिए त्रिवेणी पवित्र तीन प्रकार की धारा को पवित्र कर देती है ऐसी कन्याओं का सन्मान होना चाहिए। आज बेटी जा रही हैं। पर्वतों की गिरिमाला में डोली दिखती बंद हुई तब माता-पिता एक बहुत बड़ा निसासा डालकर निकल गये वापस। कैलास पहुचे। सभी देवताओं ने बड़े-बड़े स्तोत्रों का गान किया शिव-पार्वती का और सब देव अपने-अपने लोक की और विदा लेकर चले। शिव और भवानी का दिव्य संसार। तुलसी लखिते हैं, पार्वती और शंकर का विहार चला। जगत के माता-पिता है उसके शृंगार का वर्णन मैं कैसे करूं? समयमर्यादा पूरी हुई। पार्वती ने पुत्र को जन्म दिया। कार्तिकेय जो पुरुषार्थ का प्रतीक है। षड्मुख है, छः मुख है। और इस कार्तिकेय ने तारकासुर नामक राक्षस को निर्वाण दिया और देव समाज को सुख दिया।

मेरे भोलेनाथ एक दिन कैलास के शिखर पर सदाबहार विश्वास के वट की छाया में प्रसन्न चित्त बैठे हैं। पार्वती अवसर पाकर शिव के समीप गई और भगवान शिव से पूछती है, गत जन्म में मैं दक्ष की कन्या सती थी। राम का चरित्र देखकर मुझे संदेह हो गया। आपने मुझे समझाया। मैं मानी नहीं। सीता का रूप लेकर मैं परीक्षा लेने गई। मैं खुद फंस गई। मेरे पिता के यज्ञ में मैं जल गई। दूसरा जन्म हिमालय की पुत्री के रूप में लिया। लेकिन हे प्रभु, फिर भी मेरे मन से एक जनम के बाद भी संदेह नहीं गया कि राम ब्रह्म है कि केवल मनुष्य है? मुझे अब रामकथा सुनाओ, मेरे मन का संदेह मिटे। भगवान शिव प्रसन्न हुए और कैलास के ज्ञानघाट पर बैठकर भगवान महादेव पार्वती को रामकथा गायन शुरू करते हैं।

मेरी रामकथा नौ दिन का स्वयंवर है

हम अपने मूल विषय में प्रवेश करें उससे पूर्व दो-तीन बात मैं आपसे करना चाहूंगा। एक तो अभी-अभी जो रामकथा की एक सार संग्रहित पुस्तिका व्यासपीठ को अर्पण की गई। जो प्रत्येक रामकथा के बाद संपादित की जाती है और प्रसाद के रूप में वितरित की जाती है, बांटी जाती है; केवल हेतु कि रामकथा के विचार जो कथा में न आ सके उन तक पहुंचे। और हमारे आत्मीय आदरणीय नीतिनभाई ने उसकी पूरी रूपरेखा आपके सामने प्रस्तुत की। आप और आप की टीम केवल अहेतु भाव से ये यज्ञकर्म करते हैं। और सब बता दिया, निःशुल्क प्रसाद के रूप में सबको बांटी जाती है। तो ये रामकथा की सारभूत बातें; जिसको मैं भी पढ़ता हूं। इतने समय पहले जो कथा हो गई उसमें मैं क्या बोला हूं, वो मैं देख लेता हूं जब मुझे बताते हैं। तो नीतिनभाई और उसकी पूरी टीम को मैं साधुवाद देता हूं कि हर वक्त आपकी सेवा एक व्यासपीठ के प्रेमयज्ञ में आहुति है। इस आहुति की मुझे बहुत प्रसन्नता है।

एक ये बात और दूसरी बात, मैंने जो वृक्ष बोने के लिए कहा था आदरणीय गृहमंत्री साहब को भी कि मैं भोपाल छोड़ूंगा इससे पहले ये सत्कर्म करके जाऊंगा। मैंने हमारे आदरणीय बाबुजी को भी कहा था कि हम अपने घर में, आसपास जहां आप कहेंगे वहां वृक्ष बो देंगे। लेकिन मुख्यमंत्री साहब का आग्रह था कि बापू, यहां शौर्य स्मारक है वहां वृक्षारोपण करें। वहां हमने ओलरेडी आदरणीय मुख्यमंत्री साहब के साथ पीपल का वृक्ष मैंने बोया क्योंकि विष्णु की बात कर रहा हूं तो पीपल विष्णु का वृक्ष है तो ये वहां बोया गया। मुख्यमंत्री ने भी वृक्षारोपण किया। वहां जिस रचना की गई है; ये वीर भारत के सपूत जो युद्ध के मैदान में हमारे देश की महिमा को जो बहुत ऊंचाई तक पहुंचाते उसको जिस प्रकार से हर पहलू से दर्शाया गया है वो मुझे बहुत अच्छा लगा। तो मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

मैं भारत को तीन दृष्टि से देख रहा हूं। हमारे देश को सेव्यरूप दिया है; साधु-संत-ऋषिमुनियों ने शास्त्रों में सेव्यरूप दिया है। ये भारत पूज्य बना, सेवित बना इसमें सबसे बड़ा योगदान संत, फ़कीर, साधक, ऋषि, मुनि और हमारे महिमावंत शास्त्र; उसने हमारे देश को सेव्य बनाया, पूज्य बनाया। उसके बाद महात्मा गांधीबापू और उससे पहले, उसके बाद जो-जो आये, बिध-बिध क्षेत्र से राष्ट्रभक्त आये इन सभी ने हमारे राष्ट्र को भव्य बनाया; भव्यता प्रदान की। हमारा काम अब बाकी है भारत की जनता का, हरेक प्रांत की सरकारों का और केन्द्र में जो सरकार हो उसका, भारत को हम दिव्य बनाये। सेव्य बनाया ऋषिमुनियों ने। भव्य बनाया गांधी आदि विविध क्षेत्र के बलिदानी पुरुषों ने और शहीदों ने। मैं इन शहीदों को अष्टमी के दिन मेरी श्रद्धांजलि समर्पित करता हूं उसके परिवार को और पूरे देश को, उसके गांवों को मैं वंदन करूं। अब हमारा काम है कि हम सब मिलकर दिव्यता की ओर गति करें। तो ये सेव्य, भव्य और दिव्य भारत का जो मेरा विचार है आपके सामने मैंने प्रस्तुत किया।

कुछ बातें कल की रह गई वो भी मैं उठा लूं। एक युवक ने मुझे चिठ्ठी लिखी है, ''बापू, मैं एन्जिनियरिंग का छात्र हूं। मैं जबसे कथा में आया हूं, बस यहीं रुक गया हूं। अब तो सोता भी हूं तो सपने में भी रामकथा चल रही है! मुझे बहुत शांति मिलती है कथा के कारण। बापू, मेरा एक सवाल है, क्या माफ़ी गलती के आधार पर निर्धारित होनी चाहिए? जैसे किसी ने बड़ी गलती कर दी थी पर अब अपनी गलती पर पस्तावा हो अगर सच में दिल से क्षमा मांगे तो क्या उसे माफ़ी का हक है?'' यद्यपि गलती बड़ी भी है लेकिन वो दिल से माफ़ी मांग ले। मैं तो क्षमा के पक्ष का आदमी हूं। मेरे विचार प्रासंगिक न भी लगे, लेकिन गलती करनेवाला माफ़ी मांग ले तो उसको देनी ही चाहिए। यद्यपि बड़ी गलती है तो भी उसको क्षमा देनी चाहिए। लेकिन मैं जरा हटके बोलूं तो वो क्षमा न मांगे तो भी मैं होता, क्षमा दे देता। क्षमा व्यापार नहीं है। क्षमा लेन-देन नहीं है। क्षमा दान है। मैं तो क्षमाधर्मी हूं। न मांगे कोई ओर क्षमा देने के बाद भी गलती करे तो भी क्षमा किये जाओ, क्षमा किये जाओ। यद्यपि साधुकुल में मेरा जनम हुआ है इसका मुझे गौरव है; साधु होने के लिए बहुत प्रयत्न कर रहा हूं। हम है ऐसा मैं नहीं कहता लेकिन संत का एक लक्षण तुलसी ने बताया कि वो क्षमाशील है वो साधु है। क्षमा को प्लीज़, कमजोर मत समझना।

''मेरी माँ कहती है कि 'महाभारत' ग्रंथ घर में ना तो लाना चाहिए और ना ही पढ़ना चाहिए क्योंकि इससे अपने ही घर में 'महाभारत' होने लगती है! और मुझे 'महाभारत' का ज्ञान नहीं है। इस विषय में आप कुछ कहे।'' ये बहुत से लोग डरे-डरे हैं! किसी ने ये बना दिया है कि 'महाभारत' न पढ़ो, घर में न रखो! पढ़ो तो भी पूरा न पढ़ो वरना घर में 'महाभारत' हो जाएगा! कितने घर में है 'महाभारत'? देश में कितने लोग 'महाभारत' पढ़ते हैं? कई घर होंगे कि जहां 'महाभारत' नहीं होगा। नहीं पढ़ते उसके घर में क्या 'महाभारत' नहीं हो रहा है? वहां भी तो तकरारें होती है! 'महाभारत' घर में रखो; पढ़ो न पढ़ो कोई चिंता नहीं; पढ़ो, अधूरा पढ़ो तो भी कोई चिंता नहीं। 'महाभारत' पढ़ने से 'महाभारत' हो जाये ये धारणा ठीक नहीं है। 'महाभारत' पढ़ने से हमारा जो महान भारत है उसकी महिमा समझ में आयेगी। 'महाभारत' पढ़नी चाहिए, घर में रखनी चाहिए।

'मैं सत्रह साल का फ्लावर हूं। दया और करुणा में बापू, क्या अंतर है?' इसका जवाब भी मेरी मति अनुसार मैंने कई बार कहा। दया घटना पर आधारित है, प्रसंग पर आधारित है। करुणा स्वभाव है। करुणा प्रकृति है। आप रास्ते में जा रहे हैं, कोई गिर गया, किसी का खून निकल रहा है, थोड़ी चोट लगी है तो ये दृश्य देखकर आपको जो भाव जगता है ये दया है। कोई भूखे को देखा और आपको लगे, अरे! बेचारा भूखा है; तो आपको रोटी देने की इच्छा ये दया है। घटना और प्रसंग पर जो एक भाव प्रकट होता है उसको दया कहते हैं। करुणा प्रगट नहीं करनी पड़ती। करुणा एक स्वभाव है। दया करीब-करीब गरीब पर हुआ करती है। करुणा तो श्रीमंत पर भी हुआ करती है कि परमात्मा ने इतना सबकुछ दिया तो भी आदमी कुछ नहीं कर रहा, उस पर करुणा आती है। करुणा इन्सान का स्वभाव है।

''व्यासपीठ को व्यासपीठ क्यों कहते हैं? इस पर बैठे हुए क्या-क्या करना वर्जित है?'' व्यासपीठ को इसलिए व्यासपीठ कहते हैं कि सब व्यास का जूठा बोलते हैं। दुनिया में जो भी बोला है ओलरेडी व्यास ने बोल दिया है। और व्यास ने जो विचार दुनिया को दिया है; व्यास मानी विशाल। तो व्यास की कथाएं चलती है। मूल में वाल्मीकि है। व्यास एक सबके लिए यूझ हुआ नाम है इसलिए इस भारत की सनातन पीठ को व्यासपीठ कहा जाता है। व्यासपीठ की तीन चीज़ें मुझे और आप सबको रखनी होती है, जितनी मात्रा में हो सके- सत्य, प्रेम, करुणा। और वर्जित इर्ष्या, निंदा, द्वेष बस। व्यासपीठ पर बैठनेवाला निंदा न करे, इर्ष्या न करे; सुननेवाले भी। सबके लिए फायदा है; और मैं व्यासपीठ नहीं मानता; मैं तो व्यास की गोद मानता हूं। उसको गादी नहीं मानता, ये गोद है। और गोद में ज्यादा वात्सल्य मिलता है। गादी का तो अहंकार भी आ जाता है। इसलिए मैं उसको गोद मानता हूं कि व्यासपीठ की गोद है, व्यास का अंक है।

तो बाप! निराकार निर्गुण परमतत्त्व जो है वो निराकार से जब नारायण बनते हैं तब उसको विष्णु कहते हैं। जो परम मूल तत्त्व है जो एक ही स्थिति में रहता है; न बढ़ता है, न घटता है; उस निराकार परमतत्त्व उसके अंश से एक नारायण रूप प्रगट होता है उसका नाम विष्णु है। जो नर नहीं है, नारायण है। मैं भगवान नारायण समझकर, मेरा आदि राम समझकर, मेरा आदि कृष्ण समझकर मैं जिस शालिग्राम की पूजा करता हूं उसका नाम आज रामनवमी के दिन रखना चाहता हूं 'विष्णुनारायण।' ये मेरे इष्ट का नामकरण कर रहा हूं। मेरे शिव तो भुवनेश्वर है लेकिन मैं मेरा आदि-अनादि तत्त्व राघव, माधव, राम, कृष्ण जो कहो, सबकुछ वो शालिग्राम के रूप में ये मेरा सेव्य है, मैं उसको पूजता हूं, उसका नाम विष्णु की कथा चल रही है इसलिए आज मैं मेरे ठाकुरजी का नाम 'विष्णुनारायण' रखता हूं ताकि मेरे विष्णु देवानंदगिरि का भी मेरा स्मरण बन जाये। जैसे एक त्रिभुवन का भी मेरा स्मरण बना रहे। ज्ञानेश्वर महादेव में ध्यानस्वामी बाबा का जो सेंजल में है। और कल मैंने जीवनेश्वर भी कहा; रामजी मंदिर में, तलगाजरडा में जो शिवलिंग है वो मेरा जीवनेश्वर महादेव है। तो ये विष्णुनारायण।

देखो, मेरी जिम्मेवारी से मैं कहता हूं, मेरी रामकथा एक अर्थ में स्वयंवर है; नौ दिन का स्वयंवर है। याद रखना, स्वयंवर में कन्या जब जाती है तो फूलमाला लेकर निकलती है; जो राजा का कुंअर उसको पसंद आ जाय उसके गले में माला डालती है। स्वयंवर का अर्थ है, कन्या स्वयं उसको अपनी फ्रीडम दी जाये कि सौ युवक खड़े है इनमें से तुम्हें कौन पसंद है? मोरारिबापू की रामकथा क्या है? स्वयंवर है। इनमें से तुम्हें जो सूत्र पसंद हो जाये, जयमाला पहना दो। ये नौ दिन का बिलग-बिलग जगह पर स्वयंवर होता है रामकथा। इसमें मेरे श्रोता बिलकुल फ्री है, इसमें से जो नामरूपी कुंअर प्रिय हो जाये; रामनाम माला पहना दो; कृष्णनाम माला पहना दो; शिवनाम चुन लो; अपने पियु को, अपने प्रीतम को पहना दो। ये स्वयंवर है खुल्ला। और इतने खुल्ले स्वयंवर में भी जिसकी बुद्धिरूपी कन्या इतने श्रेष्ठ सूत्ररूपी बर मिलते हैं फिर भी चुन न पाये तो उसके समान अभागा कौन हो सकता है? मौका है,

चुनो। राम, कृष्ण, शिव, अल्लाह, बुद्ध, जिसस जो नाम आपके मन में आये। हां, एक वस्तु है; हजार युवक खड़े हैं, और एक हजार में सब बहुत सुंदर है; आप असमंजस में पड़ जाये कि ये तो सब सुंदर है, किसका चुनाव करूं? और पूरा दिन आपने कई चक्कर काटे फिर भी आप पसंद न कर पाये तो माँ को मत पूछना, बाप को मत पूछना। पूछने की जरूरत पड़े तो अपने गुरु को पूछना कि मैं इनमें से कौन नाम ले लूं? मैं खुद निर्णय नहीं कर पा रहा हूं। मेरे बुद्धपुरुष, अब तू बता, मैं किसके गले में बरमाला डालूं? मेरे तुलसी ने कहा, 'जासु नाम भव मोह भज।' हजार में से कोई भी नाम चुन लो। प्रत्येक नाम संजीवनी है। फिर धीरे से कह दिया, 'राम सदा अनुकूल।' ऐसा कहके नाम पकड़वा दिया, राम से शादी कर ले; रामनाम ले ले। तो साहब! कोई भी नाम की छूट है लेकिन वरण आप करो। कोई भी सूत्र आप लो। 'शिव-शिव' जपो, 'ॐ नमः शिवाय' जपो तो भी ये 'विष्णुसहस्रनाम' का पाठ हो जाएगा। और 'नारायण-नारायण' जपोगे तो भी रुद्र हो जाएगा। इतना समन्वय कौन करेगा सिवाय भारत के ऋषिमुनियों की दृष्टि?

कल एक प्रश्न था कि ''बापू, इतने-इतने नाम का आप कहते हैं 'विष्णुसहस्रनाम' की बात इतनी बड़ी, तो हमारे लिए मुश्किल ये है कि अब कौन-सा नाम लें? आज तक 'राम-राम' पढ़ते थे, आपने कहां बीमारी डाल दी बीच में! अब हजार नाम की इतनी बड़ी महिमा!'' नहीं, आप पर छोड़ा जा रहा है। सहस्र नाम में कोई भी नाम लो। भक्तिमार्ग का नियम है, पहले दर्शन करो, फिर वो सामनेवाला परमतत्त्व यदि चरणप्रक्षालन करने दे तो चरणप्रक्षालन करो। पहले दर्शन, फिर प्रणाम। आया; ऐसे ही खड़ा है; दर्शन दिया, प्रणाम कर लिया, चरण धो लिया फिर आसन। फिर नैवैध; तब वैष्णवी भक्ति पूरी होती है। लेकिन यदि हम ऐसे गंवार है कि दर्शन तो करते हैं, नमन करते हैं, गंगाजल न हो और वो चरणस्पर्श करने दे तो नेत्रों से- आंसू से चरण प्रक्षालन भी कर ले। जैसा हमारे घर में होगा वो भोग लगा देंगे। आसन दे देंगे, जैसा है लेकिन फिर कुछ बोलना न भी आये तो क्या? तुलसी कहते हैं, ये आख़िर प्रार्थना-स्तवन-स्तोत्र न आता हो तो कोई चिंता नहीं; केवल, केवल, केवल प्रभुनाम याद रहे, पूरी वैष्णवी भक्ति सफल। ऐसा 'मानस' का क्रम है। आज न गाऊं तो कब गाऊं? अभी रामनवमी बैठ गई यार! पोने बारह होने को है। रामनवमी हो गई है। बधाई हो! बधाई हो! बधाई हो! रामनवमी लग गई। अष्टमी गई। अष्टमी का होम होता है, यज्ञ पूरा हुआ, प्रगट हो गया।

ताहि देइ गति राम उदारा।
सबरी कें आश्रम पगु धारा।
सबरी देखि राम गृहं आए।
मुनि के बचान समुझि जियं भाए।।

शबरी को पूछो, रामनवमी तुम्हारे कब थी? तो जिस दिन मेरा राम मेरी कुटिया में आया वो मेरी रामनवमी। शबरी की रामनवमी वो है। हमारी भी रामनवमी तिथि के मुताबिल आज है, कल भी है। हमारी रामनवमी जब राम का सिमरन करते आंख जरा नम हो जाये वो ही रामनवमी है। जिसमें आंख नम हो वो ही नवमी। पहले आये। शबरी ने देखा, झांकी की। अब वंदन कर रही है। फिर प्रक्षालन। क्रम पूरा देखिए। आगमन, दर्शन, प्रणाम, चरणप्रक्षालन। फिर आसन। अब देखो, कोई आसन का नाम नहीं बताया। क्योंकि शबरी है यहां आसन की गुंजाईश नहीं है। कह दिया, आसन पर बिठाये। कौन-सा आसन? जिसके मन में कोई भी आशा नहीं है, आसन। तू आया; तेरे चरण धोया; तुझसे कुछ लेना नहीं है; केवल महोब्बत। कोई आश नहीं है। आशमुक्त स्थिति ही आसन है। उसने फल दिये; सुरस, अति रसमय और प्रभु बार-बार स्वाद लेते-लेते कहते हैं, शबरी, तेरे फल बहुत स्वादु है। फिर भगवान ने फल खाये। स्वागत किया, प्रणाम किया, चरण पकड़े, धो डाले, आसन दिया, नैवेद्य किया। स्तुति नहीं आ रही है। मैं स्तुति कैसे करूं? मेरे पास शब्द नहीं, मैं कैसे तुम्हें गाऊं? कोई द्वार पर आया, दर्शन हुआ, आत्मा झुक गई, चरण पकड़ लिये, आंसू से धो लिये, सुंदर आसन दिया, भोजन दे दिया। फिर स्तुति न आती हो तो कोई चिंता नहीं। फिर स्तुति हमें करने की जरूरत नहीं, वो करेगा। नहीं आती शबरी को स्तुति तो अब राम स्तुति कर रहे हैं। नौ प्रकार की भक्ति से स्तुति कर रहे हैं।

शबरी प्रसंग; शबरी स्वयंवर है। वो कहती हैं, मुझे स्तुति तक नहीं आती! नौ प्रकार की भक्ति भले आप मुझे स्तुति कर रहे हैं लेकिन इशारा तो कर रहे हैं कि ये भक्ति करो। मैं कैसे करूं? बोले, मैं नौ की नौ कहां कह रहा हूं? एक पसंद कर। तो शबरी ने कहा, भगवन्, मैं नहीं पसंद कर सकती। मैं कौन एक भक्ति करूं? तू बता। तलगाजरडा को लगता है, तब राम ने कहा, ये भक्ति ले ले। ये पसंद कर 'मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा।' हे भामिनी, राम महामंत्र का विश्वास से जप कर। ये 'पंचम भजन सो बेद प्रकासा।' और पंचम है मध्य। जो रंगभूमि के मध्य में एक मंच था जो सीता के स्वयंवर में मध्य जो साधन है ये

हरिनाम मध्य है। ये दुल्हा जो मध्य में बैठा है। उसीको तू पकड़ ले।

आज मैं एक ओर श्रद्धांजलि दे रहा हूं किशोरी आमोनकर; स्वर की इतनी बड़ी साधिका किशोरीजी आमोनकर जो तलगाजरडा में गा गई; हनुमंत अवोर्ड भी मिला। वो हमारे बीच नहीं रही। कई लोगों ने गाया होगा लेकिन 'हमारो प्रणाम, बांके बिहारी को।' उसकी मूल गायिकाओं में किशोरीजी है। कौशिकी वरदान प्राप्त करके हर वक्त नया गाती जा रही है। लेकिन शायद ये किशोरी से कौशिकी तक की यात्रा है साहब! वो किशोरीजी आज नहीं रही। इस स्वर साम्राज्ञी को भी मेरी व्यासपीठ से मैं श्रद्धांजलि समर्पित करता हूं।

बाप! अवसर है। ये पवित्र चैत्र नवरात्र, भास्कर-परिवार के मनोरथ और हम सब भोपाल में नौ दिन; आज रामनवमी और आज 'रामचरितमानस' का भी जनमदिन है। विक्रम संवत् सोलह सौ इकतीस की साल आज के दिन तुलसी ने इस अनादि कवि भगवान महादेव द्वारा रचित 'मानस' जो अपने मानस में रखा था वो आज के दिन पांच शताब्दी हो गई; इतने साल पहले अयोध्या में रामनवमी के दिन प्रकाशित हुआ था। तो आज 'रामचरितमानस' का प्रागट्य दिन है। उसकी ज्यादा प्रसन्नता। तो एक भक्ति स्वयंवर है। पकड़ लो। और निर्णय न करो तो कोई बुद्धपुरुष से करवा लो। राम ने कह दिया, तू मध्यवाली भक्ति पकड़ ले। प्रेम है निरहंकारी, प्रेम है अचल, प्रेम है मौन। और प्रेम और भक्ति में अंतर है। यहां भक्ति की चर्चा चल रही है इसमें फ़र्क इतना ही कि प्रेम जब गाने लगे तब समझना, भक्ति शुरू हो गई। प्रेम जब नृत्य करने लगे तब समझना, भक्ति शुरू हो गई। प्रेम जब सुनने लगे तब समझना, भक्ति शुरू हो गई। प्रेम जब रोने लगे तब समझना, भक्ति शुरू हो गई। तुम किसी को प्रेम करते हो लेकिन उसकी स्मृति में तुम्हारी आंख में आंसू आने लगे तो फिर तुम्हारा प्रेम भक्ति में कन्वर्ट हो गया। प्रेम हो गई भक्ति। तुम प्रेम करते हो और तुम गुनगुनाने लगो। और फिर फिल्म का गीत तो गा ही रहे हैं। प्रेम करेगा वो गायेगा ही। मीरां ने गाया; नानक ने गाया; सूर ने गाया; तुलसी ने गाया। तो प्रेम जब गाता है तो भक्तिरूपा हो जाता है। प्रेम जब सुनने बैठ जाता है, भक्तिरूपा। प्रेम जब नाचने लगता है तब भक्ति का रूप पकड़ लेता है। प्रेम श्रवण करने लगता है तब भक्ति का रूप बन जाता है। प्रेम संकीर्तन करने लगता है, भक्ति का रूप बन जाता है। तलगाजरडा को यही समझ में आया है। प्रेम पिघलता है तब भक्ति का जल बहता है। प्रेम है घन बर्फ़। हिमालय में जाते हैं तो लगता है कि ये बर्फ़ नहीं है, चट्टान है, लेकिन शताब्दियों से जमा हुआ बर्फ़ है। वो जब पिघलता है तो गंगा बहने लगती है। और गंगा क्या है?

राम भगति जहं सुरसरी धारा।

सरसई ब्रह्म बिचार प्रचारा।

तो भगवान विष्णु के सहस्र नाम से इस स्वयंवर से यह हजार श्रेष्ठों में से कोई एक नाम उठा लिया जाये। भगवान शिव के ब्याह के बाद कल जो हमने कथा का क्रम उठाया। शिव और पार्वती का संसार चला और कार्तिकेय का जन्म हुआ। षड्मुख कार्तिकेय ने तारकासुर नामक राक्षस को निर्वाण दिया। भगवान शिव एक बार कैलास के वेदविदित वट की छांव में बैठे हैं। तो कथा कहने से पहले अपने सहज आसन पर बैठे हुए भगवान शिव जो एक परम आदि-अनादि वक्ता है, वो जिस रूप में दर्शाया गया। आज भी एक श्रोता ने पूछा कि व्यासपीठ पर बैठकर कहने के लिए कितनी चीज वर्जित है? क्या करना चाहिए, क्या नहीं? ये जो पूछा गया उसके जवाब इस प्रकरण में है। एक तो भगवान की कथा का वक्ता वो माना जाये जो सहज आसन में बैठे, मतलब उसकी सहजता बनी रहे। कोई नकल नहीं, कोई प्लास्टिकी हावभाव नहीं। सहज बिलकुल। कोई कृत्रिमता न हो, सब प्राकृतिक हो; सब प्रासादिक हो। तो वक्ता सरल हो, सहज हो। 'कुंद इंदु दर गौर सरीरा।' शारीरिक वर्णन नहीं है केवल। 'कुंद इंदु' कहने का मतलब ये वक्ता दर्शनीय हो। इसका मतलब ये नहीं कि दर्शनीय होना भी आवश्यक है। एक वक्ता हमारे अध्यात्मजगत में है अष्टावक्र; कोई दर्शनीय नहीं है। लेकिन फिर भी वक्ता दर्शनीय हो ये आवश्यक है। तन-मन श्वेत हो बस, इतना ही। तन न भी हो, मन श्वेत हो, उज्ज्वल हो। 'भुज प्रलंब', मुझे बड़ा प्यारा लगता है। वक्ता के हाथ विशाल हो। वक्ता उदार हो, आजानबाहु, सबको समेट लेता हो। 'भुज प्रलंब परिधन मुनिचीरा।' मुनि वस्त्र; मुनि वस्त्र मानी वो जो वल्कल वस्त्र पहनते होंगे। कुल मिलाकर वक्ता का पोशाक सादा होना चाहिए। मुनि वस्त्र सादा होना चाहिए। कोई टीपटोप होकर कथा करे उसकी भी मैं आलोचना नहीं करता। सबको अधिकार है। यहां कैलासी परंपरा जो वक्ता की है उसमें सीधेसादे वस्त्र। 'तरुन अरुन अंबुज सम चरना।' तो कमल की तरह पद-चरण। वक्ता का चरण मानी वक्ता के पास पदलालित्य बहुत सुंदर होना चाहिए। पद मानी चरण। उसकी पद रचना, ये बोले गद्य में लेकिन लगे पद्य; करता हो भाषण लेकिन लगे कि कविता चल रही है। ये पदलालित्य। और असंगता हो। निजता से डूबी बातें हो असंग कमल की तरह। 'नख दुति भगत हृदय तम हरना।' भगवान की नख द्युति ऐसी है कि भक्त के हृदय के अंधेरे को मिटा दे।

वक्ता की ये महिमा है। फिर 'जटा मुकुट।' दुनिया में कौन होगा कि जिसको कोई चिंता-जंजाल न हो? लेकिन कैलासी वक्ता उसको माना गया जो अपनी जंजाल आधि-व्याधि को मुकुट बना दे। चिंता को शृंगार बना दे; जहां-तहां गाये ना कि मैं चिंतित हूं, मैं विक्षिप्त हूं। चिंता को शृंगार बना दे। 'जटा मुकुट सुरसरित' और बुद्धि अति प्रज्ञा हो लेकिन इस प्रज्ञा से भक्ति की भाव की करुणा की गंगा बहा दे। करुणासिक्त बुद्धि हो। 'जटा मुकुट सुरसरित सिर लोचन नलिन बिसाल।' जैसे भुजाओं विशाल ऐसे दृष्टि भी विशाल मानी वक्ता का दृष्टिकोण विशाल। नीलकंठ भगवान शंकर ने विष पीया है इसलिए तुलसी ने देखा कि उसका कंठ नीलवर्ण है। वक्ता को विष पीना पड़ेगा लेकिन वक्ता पी जाये तो खुद मरेगा, वमन करेगा तो सामनेवाले को मुश्किल होगी। इसलिए जिसको कैलासी वक्ता बनना है उसको तो समाज के अपवाद, निंदा इसका विष कंठ में रखना पड़ेगा। उसको भी अपनी शोभा बनाना पड़ेगा। 'नीलकंठ लावन्यनिधि सोह सोह बालबिधु भाल।' ये लक्षण तो कोई भी वक्ता को समझने जैसा है कि वक्ता के भाल में वो वक्र चंद्र है। वक्ता कभी भी ये न समझ ले कि मैं

पूर्णिमा का चंद्र हो गया। वक्ता को दूज का चांद रहना है कि अभी ओर बढ़ूं, अभी ओर बढ़ूं। मैं पूरा हो गया, ऐसा अभिमान नहीं होना चाहिए। सभानता होनी चाहिए कि अभी मुझे बहुत सुनना है, बहुत शास्त्रों से सीखना है; जिससे भी कुछ मिले ले लेना है। ये है चंद्र छटा।

ऐसे महादेव बैठे हैं। जगत माता पार्वती योग्य अवसर देखकर शिव के पास आई। वाम भाग में उसको आसन दिया। पार्वती ने कहा, महाराज, गत जन्म में मैं दक्षकन्या थी। रामचरित्र पर मुझे संदेह हुआ। आपने मेरा त्याग किया। मैं दक्षयज्ञ में जल गई। दूसरा जन्म मैंने हिमालय के घर लिया। मैंने खूब तपस्या की और मैं आपको पा सकी। एक जनम बीत चुका फिर भी मन से वो बात गई नहीं कि राम ब्रह्म है कि मनुष्य? अब रामकथा सुनाकर मेरे संदेह को निवारो। रामतत्त्व है क्या? शिव प्रसन्न हुए। शिवजी फिर पहला वाक्य जो कैलास से बोले वो था, 'धन्य धन्य गिरिराज कुमारी।' हे हिमालय की पुत्री, आपको बहुत धन्यवाद, बहुत धन्यवाद। आपने ऐसी कथा पूछी जो समस्त लोक को पवित्र करनेवाली गंगा है। आपने जगत पर बहुत बड़ा उपकार किया है। देवी, निराकार ब्रह्म राम है, बिना पैर चलता है, बिना हाथ काम करता है, बिना मुख भोगता है, वक्ता है। बिना नेत्र देखता है, बिना कान सुनता है, बिना शरीर सबको छूता है। हे देवी, राम का अवतार किस कारण हुआ इसका कोई एक इदमित्थ कारण नहीं है क्योंकि ईश्वरतत्त्व कार्य-कारण के सिद्धांत से पर है। फिर भी शिवजी ने पांच कारण पार्वती को बताये रामजनम के। पहला कारण, जय-विजय वैकुंठ के द्वारपाल सनतकुमारों को रोकते हैं। संघर्ष हो गया और ये सनतकुमारों ने शाप दिया। दूसरा कारण सतीवृंदा, जिसने भगवान विष्णु को शाप दिया था। तीसरा कारण नारद ने एक बार विष्णु को शाप दिया कि आपने मुझे बंदर बना दिया, आपको मनुष्य अवतार लेना पड़ेगा और बंदर-भालूओं की सेवा लेनी पड़ेगी। विश्वमोहिनी से मेरा ब्याह नहीं होने दिया आपने; नारी के विरह में मैं तड़पा हूं, राम अवतार लेकर आपको भी आपकी शक्ति सीता के विरह में तड़पना पड़ेगा। इसलिए राम अवतार हुआ। चौथा कारण मनु-शतरूपा की तपस्या। नैमिषारण्य में गोमती नदी के तट पर तप पूरा हुआ; मांगा गया कि हमारे अगले जनम में हमारे घर आपके समान पुत्र का जन्म हो। आकाशवाणी से प्रभु ने कहा, मेरे समान तो दुनिया में कोई है ही नहीं। मैं स्वयं अयोध्या में आपके यहां पुत्र के रूप में आऊंगा। पांचवां कारण; राजा प्रतापभानु अच्छा राजा था। कुसंग के कारण समझ नहीं पाया और फिर ब्राह्मणों को कोई ऐसा भोजन करवाया; ब्राह्मण तो बच गये, लेकिन शाप दे दिया कि प्रतापभानु, अगले जनम में तू रावण बनेगा, तेरा भाई कुंभकर्ण बनेगा। तेरा एक तीसरा भाई दूसरी माँ से वो विभीषण होगा।

रामकथा में ये उल्लेख है कि राम का जन्म हुआ इससे पहले रावण का जन्म हुआ है। पहले रात्रि होती है, फिर दिन होता है। तो पहले निशिचर वंश का वर्णन किया, फिर सूर्यवंश का वर्णन किया। रावण, कुंभकर्ण, विभीषण बहुत तप करते हैं। तप का फल वरदान प्राप्त किया। धरती अकुला गई। गाय का रूप लेकर धरती ऋषिमुनि के पास जाकर रोने लगी कि इन असुरों का भार मेरे से सहन नहीं हो रहा। ऋषिमुनियों ने कहा, हम भी दु:खी है। सब देवताओं के पास गये। देवताओं ने कहा, हमारे बस बात की नहीं रही। गाय के रूप में पृथ्वी, ऋषिमुनि, देवगण सब पितामह ब्रह्मा के पास गये और ब्रह्मा से प्रार्थना की कि पितामह, कुछ करो। फिर ब्रह्मा की अगवानी में तमाम ऋषिमुनि, देवगण और पूरी धरती गाय के रूप में इस परमतत्त्व को पुकार करते हैं। आकाशवाणी हुई, थोड़ा धैर्य धारण करो। वैसे मेरे प्रगट होने में कोई कारण जरूरी नहीं, फिर भी कुछ कारण भी है। मैं धरती पर अयोध्या में दशरथ-कौशल्या के घर प्रगट होऊंगा। आप थोड़ी प्रतीक्षा करें।

मेरी व्यासपीठ हर वक्त कहती है मेरे युवान भाई-बहन, ईश्वर की प्राप्ति के लिए तीनसूत्रीय फोर्म्यूला है। हमारे हृदय की अयोध्या में यदि राम को प्रगट कराना हम चाहते हैं तो पहला सूत्र है, पुरुषार्थ करें। जब पुरुषार्थ की सीमा पूरी हो तब पुकारो कि हे हरि, हमसे जितना हो पाता हम कर गये; अब तू उबार। लेकिन स्तुति भी हम कितनी कर पायेंगे? इसकी भी सीमा है। पुकार के बाद है प्रतीक्षा; और प्रतीक्षा बहुत कठिन वस्तु है। पुरुषार्थ, प्रार्थना और प्रतीक्षा तीनों का मिलन हरि प्रागट्य में परिणित हो जाता है, फिर कभी जाकर रामप्रागट्य होता है।

अब तुलसीजी हमको लिये चलते हैं श्रीधाम अयोध्या, जहां प्रभु का प्रागट्य हो रहा है। त्रेतायुग; रघुवंश का पवित्र कुल। इस शृंखला में वर्तमान राजाधिराज दशरथजी का शासन। कैसे है दशरथ? कर्मयोगी, ज्ञानयोगी और भक्तियोगी तीनों योग उसमें समन्वित है। धर्मधुरंधर है, गुणनिधि है, ज्ञानी है, भक्त है। दशरथजी का दाम्पत्य कैसा है? कौशल्या आदि प्रिय रानियां। सब पवित्र आचरण करते हैं। पति को अनुकूल हो ऐसा आचरण अपनी रानियां करती है। पति को आदर देते हैं। पति रानी को प्यार देता है और दोनों मिलकर परम को भजते हैं। हमारे घर में, हमारे दाम्पत्य में, हमारे परिवार में राम जैसी संतान प्राप्त करनी है तो ये तीन फोर्म्यूला का सूत्र कबूल करो। पुरुष को चाहिए अपनी पत्नी को प्रेम दे। स्त्री सदैव प्रेम की भूखी है। स्त्री को प्यार मिले। और पुरुष जरा घमंडी होते हैं। स्त्री उसको आदर दे। और दोनों हरि भजे जब थोड़ा समय मिले। ये तीन हो जाये तो उसके घर राम जैसी संतान प्रगट हो जाएगी। बस इतना ही करना है। लेकिन इतना नहीं होता! पूरे संसार का दाम्पत्य बिगड़ता जा रहा है! बड़ी क्राइसिस है दाम्पत्य की!

गोस्वामीजी कहते हैं, प्रिय रानियां, आदर प्राप्त होता है दशरथ को। सब प्रकार से संपन्न दाम्पत्य लेकिन एक पीड़ा है, पुत्र नहीं है। संतान नहीं है, पुत्र नहीं है। ग्लानि हुई। महाराज दशरथजी वशिष्ठजी के द्वार गये। दशरथजी ने अपना सुख-दु:ख बताया; आपकी कृपा से प्रभु, सबकुछ धन्यता है, लेकिन पुत्रसुख नहीं। क्या मेरे से रघुवंश समाप्त हो जाएगा? वशिष्ठजी ने कहा, महाराज, मैं तो कबसे चाहता था कि एक बार आकर आप ब्रह्म की जिज्ञासा करे तो ब्रह्म को आपके आंगन में खेलता कर दूं बालक के रूप में! फिर भी कोई चिंता नहीं। थोड़ी ओर धीरज रखो। आपके घर चार पुत्रों की प्राप्ति होगी। एक पुत्रकामेष्टि यज्ञ कराओ। शृंगी को बुलाया। पुत्रकामेष्टि यज्ञ शुरू हुआ। भक्ति सहित आहुतियां डाली गई। आखिर में यज्ञपुरुष हाथ में प्रसाद का चरु लेकर यज्ञकुंड से बाहर आए। यज्ञ का प्रसाद, यज्ञ की खीर, ये चरु बशिष्ठ को यज्ञपुरुष ने दिया; कहा, राजा को दे दीजिएगा और कहियों अपनी रानियों को योग्यता के अनुसार ये खीर बांट दे। यज्ञपुरुष अदृश्य हुए। तीन रानियों को बुलाकर महाराज प्रसाद बांटते हैं। तीनों रानियां प्रसाद प्राप्त करते ही सगर्भा स्थिति का अनुभव करने लगी।

'मानस'कार कहते हैं, स्वयं हरि, ये निराकार परमब्रह्म परमात्मा नारायण, जो मूलतत्त्व है, जो महाविष्णु है, जो परमहरि है, वो कौशल्या के उदर में आये हैं। जोग, लगन, ग्रह, वार, तिथि अनुकूल हुई है। त्रेता युग, चैत्र मास, शुक्लपक्ष, नवमी तिथि, मध्याह्न का भास्कर। लोगों को भोजन करके विश्राम करने की बेला है। धीरे-धीरे सुगंधी वायु बहने लगी। माँ कौशल्या को अपने प्रासाद में सगुन होने लगे। पाताल के नागदेवता, धरती के ऋषि, ब्राह्मण और आकाश के सुरदेवता भगवान की गर्भस्तुति कर रहे हैं। परब्रह्म परमात्मा, भगवान कहो, ईश्वर कहो, नारायण कहो, जो नाम देना चाहो वो परमतत्त्व माँ कौशल्या के भवन में चतुर्भुज विग्रह धारण करके नारायण रूप लेकर माँ कौशल्या के सन्मुख प्रगट हुए। माँ को ज्ञान हुआ। परमात्मा बालक रूप में कौशल्या की गोद में रोने लगे और रामजनम का उत्सव का आरंभ हुआ।

बालक रोने लगा और बालक के रूदन की आवाज़ सुनकर भ्रम के साथ ओर रानियां दौड़ आई कि कौशल्याजी ने प्रसूति की पीड़ा की कोई शिकायत तक नहीं की और ये सीधा बच्चा रो रहा है! सब आये। दास-दासियां दौड़े, महाराज दशरथ को कहने लगे, महिपति, बधाई हो, बधाई। आपके घर हमारी कौशल्याजी ने पुत्र को जन्म दिया है। और पूरी अयोध्या में बधाईयां शुरू होती है। पहली अनुभूति दशरथजी की ब्रह्मानंद का अनुभव। सोचने लगे, जिसका नाम सुनने से शुभ होता है वो परमतत्त्व मेरे घर आ गया? कौन मानेगा? गुरु वशिष्ठजी आये। निर्णय हुआ कि ब्रह्मतत्त्व आज मानवरूप लेकर आये तब परमानंद की अनुभूति हुई है। रामजनम का उत्सव पूरी अयोध्या में शुरू हुआ है। भोपाल की व्यासपीठ से चैत्र नवरात्र के पावन दिनों में आज नौमी तिथि के मध्याह्न पर आप सबको और से पूरे विश्व को रामजनम की बधाई हो, बधाई हो, बधाई हो।

मेरी रामकथा एक अर्थ में स्वयंवर है; नौ दिन का स्वयंवर है। याद रखना, स्वयंवर में कन्या जब जाती है तो फूलमाला लेकर निकलती है; जो राजा का कुंअर उसको पसंद आ जाय उसके गले में माला डालती है। मोरारिबापू की रामकथा क्या है? स्वयंवर है। इनमें से तुम्हें जो सूत्र पसंद हो जाये, जयमाला पहना दो। ये नौ दिन का बिलग-बिलग जगह पर स्वयंवर होता है रामकथा। इसमें से जो नामरूपी कुंअर प्रिय हो जाये; रामनाम माला पहना दो; कृष्णनाम माला पहना दो; शिवनाम चुन लो; अपने पियु को, अपने प्रीतम को पहना दो।

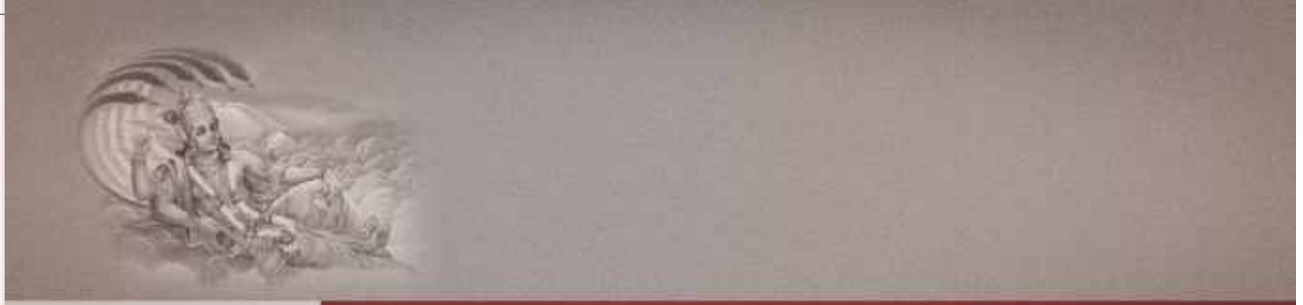

मानस-बिष्नु : ९

प्रेम में दिशायें होती है, भक्ति में दशा होती है

भोपाल नगरी में हमारे वडील मुरब्बी श्री बाबुजी और उसका पूरा परिवार, भास्कर-परिवार की ओर से केवल और केवल स्वान्त:सुखाय आयोजित इस रामकथा के नौवें दिन जब हम विराम की ओर जा रहे हैं तब पुन: एक बार व्यासपीठ से आप सबको मेरा प्रणाम। साथ-साथ रामनवमी का परमपावन वैश्विक दिन है। हमारी श्रद्धा के मुताबिक उस रामनवमी के इस वैश्विक दिन के पावन अवसर पर आप सभी को, पूरे संसार को भोपाल की व्यासपीठ से बहुत-बहुत बधाई, बहुत-बहुत शुभकामनाएं। तीसरी बात, आज 'रामचरितमानस' का प्रागट्यदिन है, आज के दिन 'रामचरितमानस' का प्रकाशन अथवा तो प्रगटीकरण हुआ। मैं इसको वैश्विक ग्रंथ समझता हूं। ये मेरी व्यक्तिगत आस्था है। तो इस वैश्विक ग्रंथ के प्रागट्य के अवसर पर भी पूरे संसार को बहुत-बहुत बधाई, शुभकामना।

कल हम सब ने मिलकर रामजन्म का संक्षिप्त गायन और श्रवण किया। 'मानस' में लिखा है कि परमात्मा का अवतार चार कारणों से हुआ। 'बिप्र धेनु सुर संत हित लिन्ह मनुज अवतार।' राम अवतार चार के लिए हुआ। चार में सब आ गये। एक है विप्र। भगवान राम ने मानवरूप धारण किया विप्रों के लिए। विप्र मानी यहां पृथ्वी के देवता, ऋषिमुनि और शास्त्रवेत्ता, कवि कोविद, कवि मनीषी, तपस्वी ये सब। उसके लिए परमात्मा ने अवतार लिया। दूसरा हेतु है, धेनु। गायों के लिए अवतार लिया। और गाय पृथ्वी का रूप लेकर आई थी ब्रह्मलोक में। तो गाय के लिए भगवान का अवतार होना मानी समग्र पृथ्वी के लिए परमात्मा का अवतार हुआ। पृथ्वी में वायु, अग्नि, जल, तेज, वृक्ष पेड़-पौधे ये पूरी पृथ्वी के लिए परमात्मा ने अवतार लिया। तीसरा सुर; देवता लोग, संपन्न लोग। जिसके पास परमात्मा ने खूब दिया है, हर प्रकार की सुविधा दी है फिर भी ये सुविधा के कारण जो परिवार, जो समाज बिगड़ा नहीं लेकिन अपनी खानदानी को बरकरार रखते हुए दिव्य जीवन जीते हो ये सब देव श्रेणी में आते हैं; ऐसे देवताओं के लिए परमात्मा ने अवतार लिया। और चौथा है संत; साधु-संत के लिए परमात्मा ने अवतार लिया।

चार के लिए अवतार लिया। दूसरे अर्थ में इसको देखें तो विप्र मानी धर्म; ऋषि-मुनि मानी धर्म। चलते-फिरते धर्म की पहचान है ऋषि-मुनि। तो भगवान ने धर्म के लिए अवतार लिया। अर्थ के लिए परमात्मा ने अवतार लिया। अर्थ मानी पैसा संसार चलाने के लिए चाहिए। समृद्धि चाहिए। राष्ट्र समृद्ध होना चाहिए। परिवार समृद्ध होना चाहिए। इसको स्वीकारा गया है। गाय यानी समृद्धि। हमारे देश में गाय ही समृद्धि का प्रतीक माना गया। गाय को केन्द्र में रखकर हमारे देश की पूरी अर्थव्यवस्था चलती थी। आज भी हिन्दुस्तान को छोड़कर आफ्रिकन कन्ट्रीज़ में आप जाये तो आज तक वहां एक नियम है आदिवासी कबीलों का कि बेटी किसीके घर देनी है तो पहले पूछता है कि उसके घर में गायें कितनी है? यदि गायें है तो हम कन्या दे। गाय है तो वहां खेती होती है। गाय होगी तो गोबर होगा। इससे अच्छी जैविक खेती होगी। गौ माता का गोबर आदि ये सब पवित्र करेंगे तो इससे अर्थ संपन्नता आयेगी। गायों का दूध, गौ का घी ये समृद्धि का प्रतीक है। हम सब इसका ठीक से उपयोग करने लगे तो गाये कटनी बंद हो जाएगी; अपने आप कटती बंद हो जाएगी। मैं मेरे वक्तव्य को फिर एक बार दोहराऊं कि गायों से प्रेम किया जाये। मैं दो दिन से अखबारों में पढ़ रहा हूं, कई मुस्लिम समुदाय, कई धर्मगुरु मौलाना आदि ऐसा एलान कर रहे हैं कि गो मांस नहीं खाना चाहिए। गाय बचनी चाहिए। इस मुस्लिम समाज और धर्मगुरुओं की ओर से आ रहा निवेदन; एक साधु के नाते मैं उसको मुबारकबादी देता हूं कि गाय बचनी चाहिए। गाय को केवल हिन्दु की क्यों बना दी गई? वातावरण ऐसा है कि कोई ओर मुल्क में गाय हो ही नहीं सकती! तो इसमें गाय का कोई दोष नहीं है। जहां तक रामकथा की यात्रा में मेरा परिभ्रमण दुनिया के देशों में हुआ है; मैं साक्षी हूं; आप भी तो साक्षी होंगे कि हर मुल्क में गाय का दूध यूझ किया जा रहा है सिवाय हिन्दुस्तान! इवन मुस्लिम कन्ट्रीज़ में दूध गाय का चलता है।

राम ने अवतार लिया धर्म के लिए, अर्थ के लिए। 'बिप्र धेनु सुर', सुर यानी देवता। देवता मानी काम, संसार। संसार का आहार-विहार; उसका भी निषेध नहीं है। ये काम है। परमात्मा ने काम के लिए अवतार लिया। और चौथा

पुरुषार्थ है मोक्ष। संत मोक्ष का पर्याय है। मैं आपसे बहुत श्रद्धा से कहूं, विश्वास से कहूं, किसी पहुंचा हुआ संत आपको मिल जाये तो तुम्हें मोक्ष ओलरेडी मिल जाएगा। मुक्ति कोई बिलग नहीं है साधु से। मुझे कहने दो, साधु की प्रेमभक्ति की छाया मुक्ति है; परछाई है मुक्ति। संत के लिए ईश्वर का आना ये मोक्ष के लिए परमात्मा का आना है। तो ईश्वर कई हेतुओं को लेकर अवतार लेते हैं। खबर आई, कैकेई ने एक पुत्र को जनम दिया। इतने में खबर आई, सुमित्राजी ने दो पुत्रों को जनम दिया। चौगुना आनंद हुआ। 'मानस' में तो लिखा है, एक महीने का दिन हो गया; मानो रात होती ही नहीं, ऐसा हुआ। प्रकृति के नियम के अनुसार रात-दिन तो होते ही रहते हैं लेकिन आनंद और प्रसन्नता में लोगों को पता ही नहीं रहा कि रात होती है। सब वस्तु बुद्धि के परीक्षण से ही सिद्ध हो ये भूल जाओ। हरेक चीज को बुद्धि की कसौटी मत बनाओ। कहीं हृदय की भावना को कसौटी बनाना पड़ता है। बुद्धि जरूरी है परंतु हरेक चीज में बुद्धि काम नहीं करती। बुद्धि के परीक्षण से केवल बहिर् वस्तु सिद्ध होती है, आंतरिक वस्तु कभी बुद्धि से सिद्ध नहीं होती।

चारों भाई बड़े होने लगे। नामकरण संस्कार हुआ। कौशल्या के पुत्र का नाम राम रखा, जो विश्व को विश्राम देगा। कैकेई के पुत्र का नाम भरत रखा, जो किसीका शोषण नहीं करेगा; भरण-पोषण करेगा इसलिए भरत रखा। जिसके नाम से व्यक्ति में से शत्रुता मिट जाये उसीका नाम शत्रुघ्न रखा। और राम का अत्यंत प्रिय, उदार चरित्र और सबका आधार शेषावतार रामानुज उसका नाम लक्ष्मण रखा, जो धरती का धारक है, रामप्रिय है, बड़े उदार है। वशिष्ठजी ने कहा, राजन्, ये तुम्हारे पुत्र ही नहीं, ये वेद के सूत्र है। अब राम विश्वामित्र की कथा से जुड़ते हैं। विश्वामित्र का आगमन हुआ। विश्वामित्र ने कहा, मेरी यज्ञ अनुष्ठानी साधना में असुर विघ्न कर रहे हैं। राजन्, मैं आपसे याचना करने आया हूं; साधु तुम्हारी संपत्ति मांगने नहीं आया है, संतति मांगने आया है। राम-लक्ष्मण मुझे दो। महाराज सोंपते हैं राम-लक्ष्मण। विश्वामित्र राम-लक्ष्मण को लेकर पदयात्रा करते हैं। रास्ते में ताडका का निर्वाण कर दिया।

मैं आज जल्दी में हूं। बारह बजे पूरा करना है इसलिए भूल जाउं तो मैं फिर एक बार आपको याद दिला दूं, मैंने कल शौर्य स्मारक में तो पेड़ बोया ही है। आज भास्कर-परिवार में बाबुजी के घर जहां मैं ठहरा हूं वहां भी तीन पेड़ बोये, सुधीरभाई, आपका विचार मुझे बड़ा प्यारा लगा। उसने कहा मुझे बापू, तीन पौधे यहां लगाकर हम कथा में जायेंगे और बोले, इस तीन पौधे का नाम हम रखते हैं सत्य, प्रेम, करुणा। बहुत अच्छा। परमात्मा से प्रार्थना करूं, आपके आंगन में ये बढ़े। क्योंकि पेड़ तो बढ़ने चाहिए ना! इसलिए सत्य बढ़े, प्रेम बढ़े, करुणा बढ़े। और इसके लिए जल सींचते रहना, इसकी सुरक्षा रखना। उसको कवच बनाना कि हमारा सत्य कोई चर न जाये। हमारे प्रेम को कोई घृणा से उसकी शाखाएं तोड़ न दे। और हमारी करुणा कहीं नफ़रत में परिवर्तित न हो जाए। ये बड़ा प्यारा नामकरण किया। मैं आप सबको कहूं, रामनवमी के दिन बधाई तो मैंने दी। आपको दबाव नहीं डालूं। मैंने पहले दिन भी कहा; मैं मेरे सभी श्रोताओं को कहूंगा, पूरे भारत को, विदेश को प्रार्थना करता हूं कि रामनवमी से लेकर हनुमान जयंती तक आप सब तीन-तीन पेड़ बोओ और उसका नाम रखो सत्य, प्रेम, करुणा। और दबाव नहीं। यदि न कर पाओ तो भी ग्लानि मत करना कि बापू ने कहा था और हम कर नहीं सके। आप फ्लेट में रहते हैं, वहां कहां बोओगे? मैं प्रेक्टिकल हूं। लेकिन जहां तक संभव हो, करो। वृक्ष आपको आशीर्वाद देंगे।

दूसरे दिन यज्ञ आरंभ हुआ। सुबाहु आया। एक बिना फने के बाण से मारीच को लंका में फेंक दिया। सुबाहु को जला दिया। यज्ञ अनुष्ठान पूर्ण किया और प्रभु कुछ दिन विश्वामित्र के वहां रुके। फिर विश्वामित्रजी ने कहा, राघव, आप यज्ञरक्षा के लिए आये तो अभी दो यज्ञ बाकी है। हम जनकपुर जाये। रास्ते में एक अहल्या, जो त्यागी गई है, उपेक्षिता है उसका उद्धार करना है। और फिर जनकपुर में धनुष यज्ञ हो रहा है, सीता का स्वयंवर। आप की यात्रा यज्ञयात्रा है तो जनकपुर जाये। सिद्धाश्रम से राघव की यात्रा आगे बढ़ी। थोड़े दूर गये तो रास्ते में एक आश्रम आया। शून्य आश्रम देखकर राघव ने विश्वामित्र से पूछा। विश्वामित्र राघव को कहते हैं, महाराज, ये गौतम ऋषि का आश्रम है। और ये गौतमनारी अहल्या है। पत्थरदेह चट्टान की हो गई है। पत्थरदेह मीन्स बिलकुल स्थिर हो गई। राघव, ये पापवश नहीं है, शापवश है। राघव, आप नहीं स्वीकार करेंगे तो कौन करेगा? चरणरज दे दो। ये बिलकुल जीवन हार चुकी है, उसमें जीवन का संचार हो जाएगा।

राम का ये अद्भुत कार्य। राम को 'पतित पावन' का बिरुद अहल्या उद्धार पर से प्राप्त हुआ। सब सुधारने की

बात करते हैं; सब सुधारने में पड़े हैं। अब स्वीकार करो, जैसा भी है। ये सूत्र राम से प्राप्त हुआ है। इसलिए मैं कहता हूं, मेरा मिशन सुधारने का है ही नहीं; जो भी आये, स्वीकारना है। स्वीकार करो समाज का। मैं कभी-कभी कई झोंपड़े में चला जाता हूं। मेरे साथ कई भाई लोग होते हैं वो कभी ऐसा सोचते हैं कि बापू कहां जाते हैं? बुद्ध का एक वाक्य है, मरीज़ जब डोक्टर के पास न जा सके तो डोक्टर का कर्तव्य है मरीज़ के पास जाये। मेरा राम यदि अहल्या तक गया तो मोरारिबापू को जाना पड़ेगा। इसलिए मेरी कथा गणिका के पास जानेवाली है। किन्नरों के पास हो चुकी है। ये कोई नई उद्घोषणा नहीं है। ये कोई नया अभियान नहीं है। मोरारिबापू ने शुरू नहीं किया है। क्रेडिट मोरारिबापू को मिले वो ठीक नहीं, क्रेडिट मिलनी चाहिए राघव को और तुलसीकृत 'मानस' को। ये 'मानस' ने किया। 'मानस' गया गणिका के पास। युवान भाई-बहनों को मैं आह्वान करता हूं, जुवान जो मेरी संपदा है, मेरे फ्लावर्स है वो इतना करे, स्वीकार करने लगो।

निषेध कोईनो नहीं, विदाय कोई ने नहीं।
हुं शुद्ध आवकार छुं, हुं सर्वनो समास छुं।

राजेन्द्र शुक्ल का एक शे'र है, किसीका निषेध नहीं। किसीको विदा नहीं कि नहीं तुम यहां से निकल जाओ। मैं शुद्ध आवकार हूं। मैं सब का समास हूं। स्वीकार करो। मैं हर जगह चला जाता हूं। कभी- कभी मुझे बताया जाये कि बापू, आप यहां उसके साथ बात करोगे? मैंने कहा, मैं बात ही नहीं करूंगा। मैं उनके घर चाय पीने जाऊंगा यार! अगर सब ठुकराये और साधु भी ठुकरा दे तो जाये कहां? ये समाज को सीखना पड़ेगा।

जगतने बांधनाराओ, प्रथम बिस्तर बनी जाजो।
तमारा ए ज बंधनमां जगत आवीने बंधाशे।

कवि काग कहते हैं, दुनिया को अपनाओ, बिस्तर बन जाओ, पूरी दुनिया तुम पर लेटेगी और तुम्हारे आंगन में आ जाएगी। हर मंदिर, हर वह स्थान, सबको स्वीकार करे। कोई अछूत नहीं होना चाहिए। हरेक मंदिर खुले होने चाहिए पूरे जगत के लिए। न नात-जात पूछी जाय। अन्नक्षेत्र की पंगत में नात-जात न पूछी जाय। जो है, सबको कुबूल किया जाय। स्वीकार करो। उद्धार ईश्वर करेगा। मनुष्य कम से कम स्वीकार तो करे। हिम्मत नहीं!

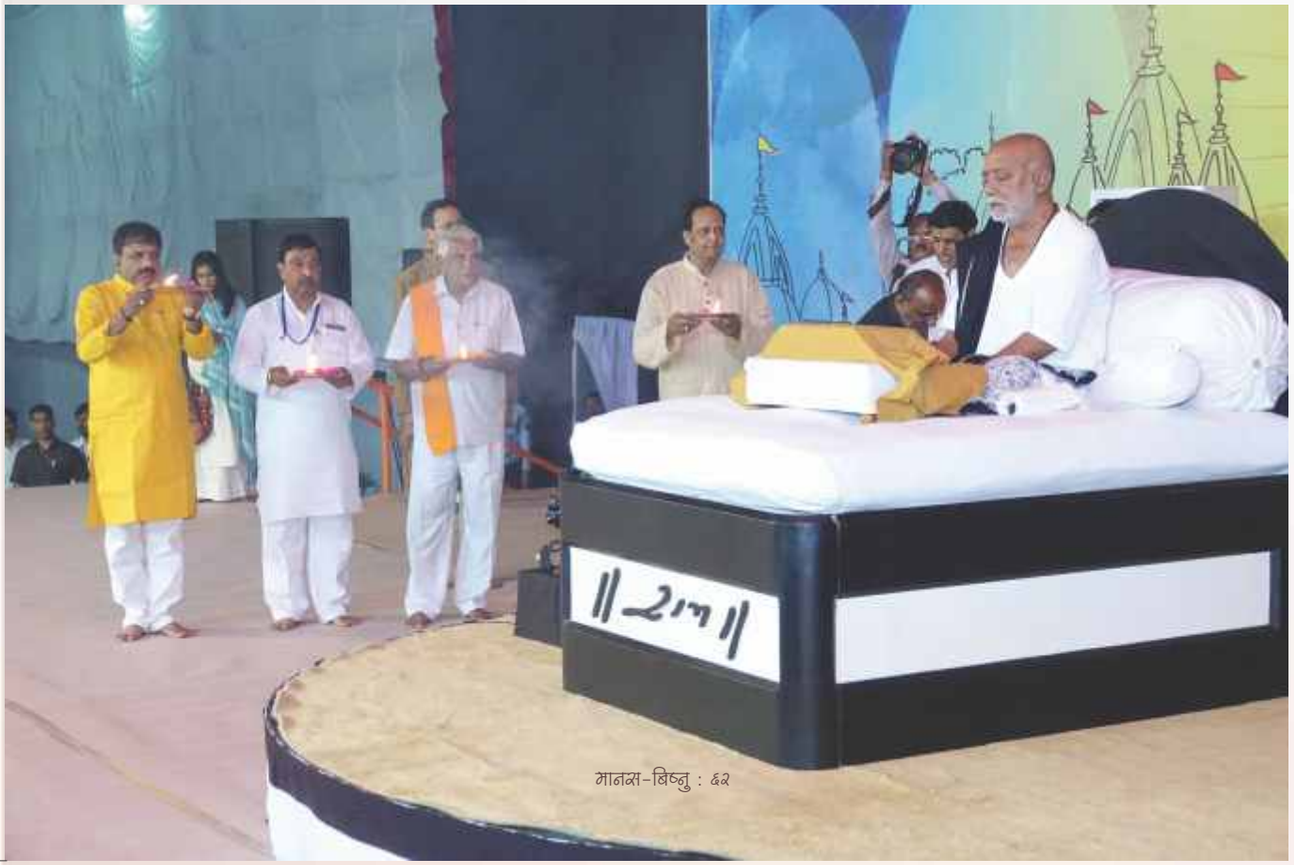

दुनिया क्या कहेगी? छोटी-छोटी बातों में न उलझो। स्वीकार करो।

अहल्या को पुन: स्थापित किया। वहीं से आगे यात्रा हुई। प्रभु ने गंगा में स्नान करके तीर्थ के देवता जो थे उसको दान-दक्षिणा दी। वहीं से यात्रा आगे बढ़कर जनकपुर पहुंची। महाराज जनक को खबर मिली, विश्वामित्रजी पधारे हैं। सबको लेकर अगवानी करने के लिए गये। बाबा को प्रणाम किया। इतने में राम-लक्ष्मण आ गये। राम को देखकर विदेहराज जनक स्तंभित हो गये! विश्वामित्र से पूछा, महाराज, ये दो राजकुमार कौन है? मुझे इतनी प्रीति क्यों जग रही है इन बालकों से? मैं विदेह हूं। नाम-रूप को मिथ्या मानता हूं। ये आकर्षण क्यों हो रहा है? ये है कौन? विश्वामित्र मुस्कुराये और कहा कि महाराज, ये प्राणीमात्र को प्रिय है क्योंकि परमतत्त्व है। दशरथ के पुत्र है, प्राकृत परिचय दिया। जनकजी बहुत खुश हुए। 'सुंदर सदन' में निवास दिया।

सांयकाल को ठाकुर नगरदर्शन के लिए जाते हैं। पूरी नगरी को अपनी रूपमाधुरी में डूबो दिया। ज्ञानी लोगों की नगरी भाव में डूब गई! दूसरे दिन सुबह भगवान पुष्पवाटिका में पुष्प लेने जाते हैं। वहां जानकीजी गौरीपूजा के लिए आई और पहली बार राम और जानकी का मिलना। जानकी राम को देखती है, राम जानकी को देखते हैं। एक-दूसरे को अंतर में उतार लेते हैं। और फिर जानकीजी गौरी की स्तुति करने के लिए सखी के कहने पर फिर मंदिर में गई और पार्वती की स्तुति करती है। भाव से स्तुति की। 'मानस' में तो लिखा है, पार्वती की मूर्ति हिलने लगी; बोली; कंठ से प्रसादी की माला गिरायी। और आशीर्वाद दिया, तुम्हारे मन में जो सांवरा राजकुमार बस गया है वो तुम्हें मिलेगा। जानकी को सगुन होने लगे। घर आई। माँ को बात बता दी। राम-लक्ष्मण पुष्प लेकर गुरु की पूजा करते हैं। दूसरा दिन पूरा हो गया। तीसरे दिन सुबह में धनुष्ययज्ञ है। सब धनुष्ययज्ञ के लिए इकठ्ठे हुए हैं। कोई शिव का धनुष तोड़ नहीं पाया। गज पंकज नाल की तरह भगवान राम ने धनुषभंग किया। जानकी ने जयमाला पहना दी। परशुरामजी आये; राम को पहचानकर अवकाश प्राप्त कर गये। दूत पत्रिका लेकर अयोध्या गये।

महाराज दशरथजी बारात लेकर आये। मागशर शुक्ल पंचमी के दिन राम-जानकी के विवाह की तिथि। राम-सीता की तरह तीनों भाईयों का ब्याह भी जनकपुर में हुआ। लक्ष्मण का ब्याह ऊर्मिला के साथ। शत्रुघ्न का ब्याह श्रुतकीर्ति के साथ। भरत का ब्याह मांडवी के साथ। चारों भाईयों का ब्याह जनकपुर में लोक और वेदरीति से हुआ। बहुत दिन बारात रुकी फिर विदा हुई। अवध पहुंचे। अब विश्वामित्र महाराज ने विदा मांगी। पूरा परिवार सरजू तट तक विश्वामित्रजी के पास खड़े रहे। बाबा, 'नाथ सकल संपदा तुम्हारी।' ये सब आपकी संपदा है। आपके कारण ये आनंद हुआ है। साधु अपनी तपस्थली में चला गया। और पहला सोपान पूरा हुआ।

दूसरे सोपान के आरंभ में राम के राजतिलक की चर्चा हुई। विघ्न हुआ। राम-लक्ष्मण-जानकी चौदह साल के लिए वनवासी हुए। चित्रकूट पहुंचे। पिताजी का देहावसान हुआ। भरत आये। पितृक्रिया हुई। सत्ता का कोई निर्णय नहीं हुआ। भरत ने साफ़ कह दिया, मैं सत्ता का आदमी नहीं, मैं सत् का आदमी हूं। मैं पद का आदमी नहीं, मैं पादुका का आदमी हूं। हम सब चित्रकूट जाये। राम को मनाये। पूरी अयोध्या को लेकर भरत चित्रकूट पहुंचते हैं। जनकराज को खबर मिली। पूरी जनकपुरी भी चित्रकूट गई। एक प्रेमनगर बस गया। महाराज दशरथजी का क्रियाकर्म हुआ। एक सभा, दूसरी सभा, सभाएं मिलती रही। निर्णय नहीं हो रहा है। आखिर में भरतजी ने समर्पण कर दिया। ठाकुर, आपका मन जिसमें प्रसन्न हो वो आदेश दो। भगवान ने पादुका दी। भरत ने शिरोधार्य की। विदा हुए। सब अयोध्या लौट आये। शुभ दिन सोचकर के पादुका सिंहासन पर प्रस्थापित की। जनकराज मिथिला लौटे। भरत नंदिग्राम में तपस्वी बनकर राज्य का संचालन कर रहे हैं। तुलसी ने दूसरे सोपान को भरत की प्रेमगाथा सुनाते विराम दिया।

प्रभु को लगा कि चित्रकूट में रहते-रहते इतना समय हुआ। सब लोग मुझे जान चुके। भगवान स्थलांतर करते हैं। अत्रि-अनसूया को मिलकर सरभंग को मिले। वहीं से सुतीक्ष्ण की प्रेमदशा का दर्शन किया। कुंभज ऋषि से वार्तालाप हुआ और जटायु से मैत्री करके भगवान पंचवटी में गोदावरी के तट पर पर्णकुटि बनाकर रहने लगे। पंचवटी में एक दिन लक्ष्मण ने अवसर देखकर प्रभु को पांच आध्यात्मिक प्रश्न पूछे। राम ने सुंदर जवाब देकर वैश्विक संदेश दिया। फिर उसके बाद भगवान ने नरलीला की योजना बनाई। शूर्पणखा आई, दंड़ित हुई। शूर्पणखा ने रावण को उकसाया। रावण मारीच को लेकर आता है। माया सीता का अपहरण कर लेता है। भगवान सीता के वियोग में रोते-रोते सीता की खोज के लिए निकलते हैं।

गीधराज जटायु को मिले। जटायु को सारूप्य मुक्ति देकर प्रभु आगे बढ़े। कबंध राक्षस आया। कबंध को मुक्ति देकर भगवान शबरी के आश्रम में पधारे। शबरी से भगवान पूछते हैं, मुझे मार्गदर्शन करो कि अब मुझे क्या करना चाहिए। कहा, आप पंपा सरोवर जाइए। वहां सुग्रीव से मैत्री होगी। वो जानकी के लिए आपको सहाय करेगा। भगवान पंपा सरोवर आये। नारदजी मिलने आये। संतों के लक्षण की चर्चा हुई।

'किष्किंधाकांड' में सुग्रीव और राम की मैत्री हनुमानजी के माध्यम से हुई। वालि को निर्वाण। सुग्रीव को राज। अंगद को युवराजपद। प्रभु चातुर्मास करते हैं प्रवर्षण पर्वत पर। चार मास बीत गये। सुग्रीव मोहनिद्रा में। लक्ष्मण को भेजकर जगाया गया। सीताखोज का अभियान चला। सभी बंदरों को भेज दिया बिलग-बिलग दिशा में। अंगद को टुकडी का नायक बनाकर जामवंत को मार्गदर्शक बनाकर जिसमें हनुमानजी भी शामिल है इस टुकड़ी को दक्षिण दिशा में सीता की खोज के लिए भेजा। सबसे अंत में हनुमानजी प्रणाम करते हैं। प्रभु ने मुद्रिका दी। अभियान आगे बढ़ा। खोज करते-करते प्यासे स्वयंप्रभा को मिले। संपाति को मिले। ये बंदरगण पहुंच गए समुद्र के तट पर। संपाति ने कहा, सीता अशोकवृक्ष के नीचे लंका के त्रिकूट में बैठी है। आखिर में हनुमानजी को आह्वान किया, हे मारुति, रामकार्य के लिए आपका अवतार है, आप चुप क्यों हैं? सुनते ही बाबा पर्वताकार हो गये। और हनुमानजी जामवंत की सीख लेकर के लंका जाने के लिए तैयार हुए। चौथा सोपान वहां पूरा करके 'सुन्दरकांड' में प्रवेश हुआ।

'सुन्दरकांड' में हनुमानजी सागर लांघकर के जाते हैं बीच में अवरोध को पार करते हुए। विभीषण से परिचय हुआ। विभीषण ने युक्ति बताई। माँ जानकी तक हनुमानजी पहुंच गये। बीच में रावण आया वगैरह वगैरह। मुद्रिका डाली। जानकी चकित चित्त से मुद्रिका देखती है। कौन है ये? रामकथा सुनाने लगे बाबा। जानकी ने कहा, प्रगट हो जाओ। हनुमानजी प्रगट हो गए। सब बातें कही। माँ खुश हुई। आशीर्वाद दिये। श्री हनुमानजी महाराज ने राक्षस को मारे। बंधन में आये। लंका में गये। रावण से वार्तालाप हुआ। जलाने की कोशिश। लंका जलाई। बाबा माँ से चूडामणि लेकर राम की शरण में आ गये। सब इतिहास कह दिया। राम ने कहा, विलंब न करे। पूरी सेना लेकर ठाकुर समुद्र के तट पर आये। यहां रावण ने मंत्रीमंडल की मीटिंग बुलाई। विभीषण ने सत्य कहा कि अभी भी जानकी सोंप दो तो बचा जाये। चरण प्रहार कर दिया विभीषण को! विभीषण राम की शरण में आया। शरणागत को कुबूल किया गया। विभीषण का मत लिया कि सौ जोजन सिंधु है लंका जाने में बीच में, क्या करे? बोले, तीन दिन आप अनशन करे। सागर मार्ग दे तो बल का उपयोग नहीं करना। तीन दिन ठाकुर बैठे। सागर ने कोई जवाब नहीं दिया तब प्रभु ने कहा कि अब शठ के सामने विनय ठीक नहीं है। और ब्राह्मण के रूप में समुद्र राम की शरण में आया। कहा, महाराज, आप सेतु बनाओ। सबको जोड़ने की बात राम की भी विचारधारा है। सेतुबंध बनाने की योजना हुई।

'लंकाकांड' के आरंभ में परम पुरुषार्थ करके सेतु बनाया गया। राम को लगा कि परम और उत्तम धरणी है। यहां मैं महादेव की स्थापना करूं। भगवान राम के हाथों से ज्योतिर्लिंग का स्थापन हुआ। आध्यात्मिक सेतुबंध भी हुआ। साथ-साथ विचारों का जोड़ भी हुआ। और पूरी सेना लंका में प्रवेश करती है। सुबेल का डेरा। उसके बाद दूसरे दिन रावण के दरबार में संधि के लिए राजदूत के रूप में अंगद को भेजा गया। संधि हो नहीं पाई। युद्ध अनिवार्य हुआ। धमासाण युद्ध हुआ। लक्ष्मण मूर्छित; फिर जीवित। सब राक्षस मरने लगे। कुंभकर्ण का निर्वाण हो गया। इन्द्रजित का निर्वाण हुआ। आखिर में इकतीस बाण चढ़ाकर भगवान राम रावण को निर्वाण देते हैं। रावण का तेज प्रभु में समा गया। मंदोदरी आई। परमात्मा की स्तुति की। रावण की क्रिया हुई। विभीषण को राजतिलक हुआ। वैसे मैं रावण को जल्दी मार देता हूं। वर्णन तो बहुत है; लेकिन मैं जल्दी रावण को मार देता हूं! और रावण जल्दी मर जाये वो ही हमारे लिए बेटर है। और आज तो रामनवमी है। रावण को आक्रमकता से नहीं मारा जाना चाहिए। राम ने मारा नहीं, तार दिया। विभीषण को राज मिला। राम और सीता का मिलन हुआ। पुष्पक तैयार हुआ। भगवान की यात्रा अयोध्या की ओर चली। रामेश्वर के दर्शन। ऋषिमुनियों को मिले और हनुमान को अयोध्या भेज दिया कि भरत को खबर करो कि प्रभु आ रहे हैं। विमान शृंगबेरपुर ऊतरा। ये निषाद, ये उपेक्षित समाज जिन्होंने प्रभु का चरण धोया था, वो केवट की बस्ती को राम मिले। उनको विमान में बिठाया और भगवान अयोध्या की ओर चले।

सातवें सोपान में पूरी अयोध्या रो रही है। एक दिन बाकी है। भरत तो बहुत मुश्किल में है। इतने में हनुमानजी आ गये। डूबते को जैसे जहाज मिल गया! कहा कि मैं पवनपुत्र हनुमान हूं। रघुपति का किंकर हूं। माँ जानकी और भैया लखन के साथ, सखा सह भगवान सकुशल आ रहे हैं। यहां हनुमानजी लौट गये। भगवान को खबर दी। विमान ने सरजू और अयोध्या की परिक्रमा की। भगवान का विमान नीचे ऊतरा। प्रभु और अपने सब सखा नीचे ऊतरे। प्रभु ने अपनी जन्मभूमि को प्रणाम किया। लंका के विमान में सवार हुए तब विभीषण असुर है, बाकी सब बंदर है, भालू है, लेकिन जैसे अयोध्या में ऊतरे तो कोई असुर नहीं है, कोई बंदर नहीं है; सब सुंदर मनुष्य रूप में आये हैं। रामकथा है मनुष्य बनाने की फोर्म्यूला। राम और भरत मिले। कोई निर्णय नहीं कर पाया कि दो में से कौन वनवासी है? प्रत्येक को प्रभु अनेक रूप लेकर मिलते हैं। माँ कैकेई भवन पहले गये। माँ कौशल्या, सुमित्रा सबसे मिले। सबको स्नान कराया। दिव्य आभूषण-अलंकार, वस्त्र धारण किये। दिव्य सिंहासन मांगा और भगवान वशिष्ठ ने आदेश दिया, राघव, आप गादी पर बिराजो। सीता-रामजी पृथ्वी को प्रणाम करके, दिशाओं को प्रणाम करके, सूर्य को प्रणाम करके, जनता को प्रणाम करके, माताओं को प्रणाम करके, ऋषिमुनि और गुरुजी को प्रणाम करते हुए गादी पर बिराजित हुए हैं। और रामराज्य की स्थापना करते हुए भगवान वशिष्ठजी राम के भाल में तिलक कर रहे हैं। रामराज्य का आरंभ हुआ। माताओं ने आरती ऊतारी। चार वेद ब्रह्मभवन से नीचे आये। राम की वेदों ने स्तुति की। उसके बाद कैलासपति महादेव धूर्जटि स्वयं महादेव कैलास से राजदरबार में आये और भगवान राम की स्तुति की। भक्ति और सत्संग का वरदान लेकर कैलास गये। प्रभु ने अपने संग आये मित्रों को निवास दिया। छः महीने बीत गये। हनुमानजी को छोड़कर सभी मित्रों को अपने-अपने कर्तव्य पालन के लिए प्रभु ने भेज दिया। एक हनुमानजी प्रभु की सेवा में रहे।

समय मर्यादा पूरी हुई। जानकी ने दो पुत्रों को जनम दिया। ऐसे ही तीनों भाईयों के घर भी दो-दो पुत्र जन्मे। रघुवंश के वारिस का नाम बता दिया लव-कुश। उसके बाद तुलसीदासजी ने रघुवंश की कथा आगे बढ़ने नहीं दी। जानकी का दूसरी बार का त्याग, वाल्मीकि आश्रम में उसको भेज देना, ये तुलसी नहीं लिखते। तुलसी का इरादा है कि जिस घटना में विवाद हो, अपवाद हो, दुर्वाद हो वो मुझे समाज के सामने नहीं पेश करना। मुझे तो संवाद पेश करना है। उसके बाद कागभुशुंडि और गरुड का संवाद है। गरुड आखिर में सात प्रश्न पूछते हैं। ये सात प्रश्नों का उत्तर भुशुंडि देते हैं, मानो सात सोपान का सार बता देते हैं। कथा पूरी होती है। याज्ञवल्क्यजी ने भी पूरा किया कि नहीं, रहस्य है। इधर महादेव ने भवानी के सामने कथा को विराम दिया। और कलिपावनावतार पूज्य गोस्वामीजी ने भी कथा को विराम दिया। इन चारों परम आचार्यो की आशीर्वाद छाया में बैठकर भोपाल में इस व्यासपीठ से हम रामकथा गा रहे थे। आज नौवें दिन मैं भी कथा का विराम दे रहा हूं।

मूल केन्द्रीय विषय तो था 'मानस-बिष्नु', भगवान नारायण, विष्णु नारायण, परम नारायण वो केन्द्र में थे जो परमतत्त्व है; और वो रामरूप में तत्त्वत: राम से अनंत विष्णु प्रगट होते हैं; मूल तत्त्व परमात्मा राम उसको केन्द्र में रखकर हम उसकी चर्चा कर रहे थे। उपसंहार कर रहा हूं जो विषय था उसका। 'रामचरितमानस' में रावण के सामने जब अंगद संवाद के लिए गया तब अंगद कहता है कि रावण, दुनिया में चौदह व्यक्ति जीये तो भी मरी हुई है। चौदह लोग जीवित हो, खाते-पीते घूमते लेकिन मरे हुए हैं, ऐसे चौदह का एक लिस्ट दिया।

सदा रोग बस संतत क्रोधी।
बिष्नु विमुख श्रुति संत विरोधी।।

चौदह मरे हुए। मैं गिना दूं लेकिन समय नहीं है। 'सदा रोग बस'; कायम रोग में जो पीड़ित है उसको मारने की मना है

प्रेम में दिशायें होती है, भक्ति में दशा होती है। प्रेम की कोई एक निश्चित्त दिशा नहीं कि प्रेम पूरब में ही जाये। प्रेम पश्चिम में ही जाये। प्रेम के लिए दसों दिशा खुल्ली है। प्रेम प्रत्येक दिशा में जाता है। याद रखना युवान, प्रेम में दिशायें होती है। और वो दिशायें दस है। उपर–नीचे, चार मूल दिशा, चार कोने। कुल दस दिशा है। वो ही प्रेम जब भक्ति बनता है; विष्णु की भक्ति बनता है, खास करके परिपूर्ण व्यापक भक्ति बन जाता है तब दिशा नहीं रहती, दशा हो जाती है।

हमारे शास्त्रों में क्योंकि ओलरेडी मरा हुआ है। 'सदा रोग बस संतत क्रोधी', चौबीस घंटो क्रोध करता है वो मरा हुआ है। 'बिष्नु बिमुख', जो विष्णु का विरोधी है। फिर विष्णु मानी एक देव के रूप में विष्णु का अर्थ है व्यापकता। जिसका व्यापक दृष्टिकोण नहीं है, जिसकी व्यापक विचारधारा नहीं, जिसकी विशाल उदार भावना नहीं ये सब विष्णु विरोधी है। और जो विष्णु का विरोध करता है; शिव को आदर दे, विष्णु का विरोध करे। राम को आदर दे, कृष्ण को आदर दे, विष्णु का विरोध करे। अंदर-अंदर जो विरोध करे। विष्णु निरादर करनेवाला मरा हुआ है। 'श्रुति संत विरोधी,' वेद को न माननेवाला संत को न माननेवाला मरा हुआ। इतना ही कहना है कि जो विशालता का विरोधी है, जो उदारता का विरोधी है, जो भेद और दीवारें पैदा करता है; छिद्रान्वेषी है वो मरा हुआ है। प्रेम और भक्ति दोनों विशाल होना चाहिए, दोनों उदार होना चाहिए। ये ध्यान रखे। मैंने कल कहा, प्रेम जब रोने लगे तब भक्ति हो जाती है।

मुझे बाबुजी के मझले बेटे कह रहे थे, मुंबई से जो आये। मुझे कह रहे थे बापू, आप माँ की बात करते हैं ना 'माँ' शब्द आता है तो मेरी आंख में आंसू आ जाते हैं। मैं रोने लगता हूं। मैंने कहा कि माँ के प्रति आपका प्रेम है, जब आंख में आंसू आते है तो मातृभक्ति बन जाती है। पिता की खानदानी याद कर जिस बेटे की आंख में आंसू आ जाये तो पितृभक्ति शुरू होती है। आप विदेश में रहते हो और भारत की याद आ जाये, हिन्दुस्तान की याद आ जाये और अपने राष्ट्र को याद करके आंख में आंसू आ जाये तो आपकी राष्ट्रभक्ति शुरू हो जाती है। और अपना कोई बुद्धपुरुष चला गया, समाधिष्ठ हो गया उसकी याद में आंख में आंसू आये तो समझना तुम्हारी आचार्यभक्ति शुरू हो गई। तो जब प्रेम रोये, भक्ति। प्रेम नाचे, भक्ति। प्रेम गाये, भक्ति। प्रेम सुने, भक्ति। तत्त्वत: एक ही है। और आखिर में इतना ही कहकर मैं आपसे विदा लेने के लिए आगे बढ़ूं, प्रेम में दिशायें होती है, भक्ति में दशा होती है। प्रेम की कोई एक निश्चित्त दिशा नहीं कि प्रेम पूरब में ही जाये। प्रेम पश्चिम में ही जाये। प्रेम के लिए दसों दिशा खुल्ली है। प्रेम प्रत्येक दिशा में जाता है। याद रखना युवान, प्रेम में दिशायें होती है। और वो दिशायें दस है। उपर-नीचे, चार मूल दिशा, चार कोने। कुल दस दिशा है। वो ही प्रेम जब भक्ति बनता है; विष्णु की भक्ति बनता है, खास करके परिपूर्ण व्यापक भक्ति बन जाता है तब दिशा नहीं रहती, दशा हो जाती है।

तो 'मानस-बिष्नु', उसको विराम की ओर लिए चलता हूं बाप! मैं आप सबको निमंत्रित करता हूं, मेरी घडी में बारह बजने में दस-बीस सेकन्ड बाकी है। मेरे प्रभु के जन्म की बेला आ रही है। पूरे हिन्दुस्तान में जहां-जहां विश्व में रामजन्म की तैयारियां झालरें बज रही है, शंख बज रहे हैं, आरतियां हो रही है। एक बार भाव से रामजनम की बधाई के समय जयजयकार कीजिए भाव से-

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्‌भुत रूप बिचारी।।

फिर एक बार रामजनम और 'रामचरितमानस' के प्रागट्य की पूरे विश्व को बधाई हो; बधाई हो; बधाई हो। मैं इतना ही कह कर अपनी वाणी को विराम की और लिए चलूं कि नौ दिन गुरुकृपा से बोला गया इनमे से कोई वस्तु आपके दिल तक पहुंच गई हो तो उसकी गांठ बांध लेना। मेरे युवान भाई-बहन, मैं तो मेरे गुरु को गा रहा हूं। इनमें से आपको कुछ प्राप्त हुआ है तो ये आपकी संपदा है। उसको संभालकर रखियेगा। जीवन के किसी कांड में आपको उपयोगी बन जायेंगे ऐसा मुझे विश्वास है। बाबुजी, आप आपका परिवार, आपका भास्कर-परिवार जो इस कथा के निमित्त बने; आशीर्वाद तो मैं क्या दूं, लेकिन गादी पर बैठा हूं तो मेरे हनुमानजी के चरणों में प्रार्थना करूं कि 'वंशे सदैव भक्ति...' आपके कुल में, आपके वंश में, आपकी परंपरा में वैष्णवी भक्ति पनपती रहे, ऐसी हनुमानजी के चरणों में मेरी प्रार्थना। मेरे प्यारे समस्त श्रोता भाई-बहन, सी.एम.साहब भी आये, विध-विध क्षेत्र के कई महानुभाव आये और मेरे दूर-दराज बैठे हुए देहातों में सुननेवाले टी.वी.पर पूरी दुनिया में सुननेवाले, सभी श्रोताओं को रामजनम की इस पावन बेला मैं इतना ही कहूं बाप! खुश रहो, खुश रहो, खुश रहो। परमात्मा आपको प्रसन्न रखे; परमात्मा आपको संपन्न भी रखे। और परमात्मा आपको सत्य, प्रेम और करुणा के चरणों में प्रपन्न भी रखे, ऐसी हनुमानजी के चरणों में मेरी प्रार्थना है। अब रही बात नौ दिन से ये रामकथा 'मानस-बिष्नु' उसका फल किसको अर्पण करें? आओ, वैष्णवी दिन है। नव संवत्सर था। राम के प्रागट्य का आज दिन है। जिस परमतत्त्व से अनेक विष्णु प्रगट होते हैं वो राम है, उसके प्रागट्य का दिन है। आइए, इस नौ दिवसीय रामकथा को हम सब मिलकर के विष्णु नारायण के चरणों में समर्पित कर दें कि हे परमात्मा, हे ब्रह्म, हे ईश्वर, ये तेरा तुझको अर्पण।

मानस-मुशायरा

उजाले अपनी यादों के हमारे साथ रहने दो।
न जाने किस गली में ज़िंदगी की शाम हो जाये।

●

लोग टूट जाते हैं एक घर बनाने में।
तुम तरस नहीं खाते बस्तियां जलाने में।

–बशीर बद्र

मेरे राहबर मुझको गुमराह कर दे।
सुना है कि मंज़िल करीब आ रही है।

●

न हारा है इश्क न दुनिया थकी है,
दीया जल रहा है हवा चल रही है।

–खुमार बाराबंकवी

शबभर रहा खयाल में तकिया फ़कीर का ।
दिन भर सुनाऊंगा तुझे किस्सा फ़कीर का।

●

हिलने लगे हैं तख्त उछलने लगे हैं ताज,
शाहों ने जब सुना कोई किस्सा फ़कीर का।

–विजेन्द्र परवाज़

ये एक ज़ख्मी परिंदा है वार मत करना।
पनाह मांग रहा है शिकार मत करना।
इरादा सामनेवाला बदल भी सकता है।
मुकाबला ही सही पहले वार मत करना।

–अंदाज़ देहलवी

हरेक बात पे बस एक ही बहाना है।
झुका के नज़रे उन्हें सिर्फ़ मुस्कुराना है।
गमों की धूप वहां तक कभी नहीं आती,
जहां जहां तेरे रहमत का शामियाना है।

–अतुल अजनबी

क्वचिदन्यतोऽपि

'भगवद्गीता' सर्जक, पोषक और सेवक है

'गीताजयंती' के अवसर पर मोरारिबापू का प्रेरक वक्तव्य

बाप! सर्व प्रथम वटवृक्ष को प्रणाम करूं कि वटवृक्ष के फलों को प्रणाम करूं? किन्तु वटवृक्ष को प्रणाम करने से पहले पूनम और भीमाणी उन दोनों को मेरा प्रणाम। ऐसे सुंदर फल जिस विरागवट ने हमें दिये, ऐसे विरागमुनि की चेतना को प्रणाम। क्योंकि अनुग्रह किए बिना हम सब को प्रसन्नता देने के लिए पधारे हुए परमपूज्य गोस्वामी १०८ आचार्य के चरणों में मेरा प्रणाम। 'गीता विद्यालय' को बहुत ही वात्सल्यपूर्वक संभाल रहे है ऐसे पूज्य शास्त्रीबापा को प्रणाम। हमारी त्रिवेणी को, इस स्थान को और कथाजगत की अनेक प्रवृत्तियों को सदैव बहुत ही साथ एवं आशीर्वाद दिये है ऐसे पूज्य लाभुदादा, त्रिवेणी परिवार के सभी पूजनीय, भगवद् गुणगान गायक के पूज्य चरणों में मेरा प्रणाम। और खास 'गीताजयंती' के परम पर्व पर ब्रह्मलीन पूज्य डोंगरेबापा को याद करूं और तपस्वी ऋषि कृष्णशंकर दादा को भी याद करूं, जिन दोनों के संवाद से त्रिवेणी का जन्म हुआ है। इसलिए उस परम चेतना को भी प्रणमता हूं। दोनों विनु, विद्यालय के सभी बच्चें, आप सब भाईयों और बहनों।

मैं यहां आता हूं; आप कहते इसलिए बोलता हूं, किन्तु 'गीता' पर बोलने के लिए मेरा अधिकार कितना? उस पर कितना बोल सकता हूं यह मैं जानता हूं। इसे खोखली नम्रता मत मानना। और मानते हैं तो मोरारिबापू की जिम्मेवारी नहीं है। किन्तु मैं जानता हूं कि 'गीता' पर क्या बोल सकता हूं? किंतु ओशो रजनीश को अहमदाबाद में गीता प्रवचन के लिए निमंत्रण दिया गया था। उनका प्रवचन प्रारंभ होने के पहले उनके समक्ष एक प्रश्न उठा कि आप 'गीता' पर बोलनेवाले हैं? तब ओशो ने सुंदर कहा कि मैंने अब तक 'गीता' का दर्शन भी नहीं किया है। 'गीता' मेरा स्वाध्याय तो है ही नहीं, किन्तु जिस भाव से हम 'गीता' को हाथ में लेते हैं उस भाव से मैंने 'गीता' का अथ से इति तक दर्शन भी नहीं किया है। किन्तु बहन प्रथम अध्याय से एक श्लोक बोलेगी, उसका भाषांतर बोलेगी, वह कागज़ मुझे देंगी फिर मुझे जो बोलना होगा वह बोलूंगा।

अब वे तो अपने क्षेत्र में पहुंची हुइ व्यक्ति। किन्तु मैं विचार करूं तो मेरी क्षमता कितनी? अभी 'रामायण' में भी सूझ नहीं हुई वहां 'गीता' पर कैसे बोलूं? मुझे कई लोग ऐसा कहते हैं कि आप नौ दिन की कथा दीजिए, उसमें बहुत कुछ करना पड़ेगा, उसके बजाय कभी-कभी तीन दिन के लिए 'गीताज्ञान' करें। मैंने कहा, आप मुझे

दुःखी करना चाहते हैं तो बात अलग है! किन्तु आप सब के चरणों में प्रणाम कर कहता हूं, 'गीता' का मैं हररोज स्वाध्याय करता हूं। प्रवचन देने के लिए नहीं। किन्तु सालों से 'श्रीमद्भगवद्गीता' और 'रामचरितमानस' मेरी वैयक्तिक आस्था के संदर्भ में कहता हूं कि 'वेद' मेरे लिए पूज्य हैं। उसकी पूजा करना पर्याप्त है। हमारे तलगाजरडा भी भगवान वेद बिराजते हैं। ब्रह्मलीन स्वामी गंगेश्वरनंदजी द्वारा स्थापित है। वर्ष में एक बार उसका पारायण भी होता है। मैं हररोज जब रामजीमंदिर, तलगाजरडा दर्शन करने जाता हूं तब भगवान वेद के पैर पड़ता हूं। मेरी दृष्टि में वे पूजनीय हैं।

'श्रीमद्भगवद्गीता' मेरे आस्था अनुसार मेरे लिए दिव्य है। 'रामचरितमानस' मेरे लिए सेव्य है, जिसका निरंतर मैं सेवन करता हूं। इसीलिए यह दिव्य, परम शास्त्र पूज्य आचार्यचरनश्री ने खूब कहा है कि 'भगवद्गीता' जैसा धर्मनिरपेक्ष ग्रंथ ओर कौन? इसीलिए इस दिव्य ग्रंथ के बारे में क्या कहना चाहिए? शायद कुछ भी कहें तो भी उसकी दिव्यता को न्याय नहीं कर सकेंगे। किन्तु फिर भी 'तदिप कहे बिनु रहा न कोई।' कोई कहे बिना रहता नहीं, 'निज गिरा पावन करन कारन राम जसु तुलसी कह्यो।' उस न्याय से भी यथा, 'ममत्वेताम् वाणी गुणकथन पुण्येन भवतं' इस कथन के न्याय से भी, मेरे से लेकर मेरा समग्र यह विश्व; यह ब्रह्मांड; उन सब को लेकर समय-समय पर चार वस्तुओं की जरूरत पड़ती हैं। आपको यह कबूल करना, स्वीकार करना कोई जरूरी नहीं। किन्तु मुझे जो गुरुकृपा से समझ में आ रहा है वही कहने आया हूं।

मैं जहां जाता हूं वहां सब ऐसा कहते हैं कि बापू ने हमको समय दिया, बहुत व्यस्तता से समय दिया। और बात भी सही है। किन्तु अमुक जगह मैं समय नहीं देता, मेरे गुरु ने दी हुई समझ-सोच देता हूं। 'गीताजयंती' में मुझे समय देने की आवश्यकता है? इस स्थान के लिए समय देने की आवश्यकता है? आप अपनी आंखों से आपके अंतःकरण की जांच कीजिए। मैं अपनी ओर से जांच करता हूं तो ऐसा लगता है कि एक वर्ष तक विरागमुनि की चेतना सुषुप्त रहती है और आज के दिन प्रकट होती है। यह तलगाजरडी विधान को आप याद रखना, और मुझे ऐसा लग रहा है कि जैसे ही 'गीताजयंती' का कार्यक्रम पूरा होता है, यह विरक्तताई भी फिर शांति हो जाएगी। यस, इसका परिणाम है अथवा मुझे अनुभूत प्रमाण है कि ऐसा हो रहा है। मैं कल कह रहा था कि मनुष्य जवान होता है, फिर वृद्ध होता है। वृद्ध होने के बाद जवान होने की कोई योजना हमारे पास नहीं है। इसके बाद, चमड़ी खलभली गई हो और फिल्मजगत में ऑपरेशन करके कडक कर लेते हैं किन्तु यह सब तो ऊपरी है। उसी तरह कई संस्थाएं जवान हों और बाद में वृद्ध होने के बाद युवा होती नहीं, मंद हो जाती है। ऐसे समय में हमारा सद्भाग्य कि इस संस्था में अभी तेज है। और तेज उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है वो भगवद्कृपा है।

समय-समय पर इस जगत को चार वस्तुओं की जरूरत पड़ती है। एक, यह जगत एक सर्जक मांगता है। मांग है इस जगत की हमें एक सर्जक मिले, 'प्रभवः।' दूसरी मांग जो मेरे गुरु की कृपा से और आप सब के आशीर्वाद और शुभकामना से समझ में आ रही है कि इस जगत को किसी रक्षक की जरूरत है। तीसरा, सर्जन हुआ जगत, रक्षित जगत उसे किसी पोषक की जरूरत है, जिसे कोई सिंचित करे। और चौथा, इस जगत को किसी सेवक की जरूरत है।

'गीता' गानेवाला इन चारों में परिपूर्ण सफल रहा है। वह सर्जक है। हाल ही में यहां 'राजविद्या राजगुह्य योग' का पठन हुआ था।

'गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत्।'

'प्रभवः।' इसका सर्जक कौन? दिखाई नहीं देता इसका मतलब यह नहीं कि नहीं है। दिखाई इसलिए नहीं देता कि उसको दिखना नहीं है। वह करुणा करे तो दिखाई दे। 'सो जानहि सोई देहु जनाई।' किन्तु शायद उसको दिखना नहीं। मकरसंक्रांति के दिन आ रहे हैं। दुकानें तैयार हो गई है, रंगीन छोटे-बड़े धागे तैयार है और आकाश पूरा पतंगों से छा जाएगा तब पतंग दिखाई देंगे, नज़दीक में होंगे तो धागा भी दिखाई देगा। किन्तु किसके हाथ से उड़ रहा है वह नहीं दिखता। कृष्ण ऐसे सर्जक है, 'प्रभवः।' और समय-समय पर जैसे सर्जक आते हैं। भगवान कृष्ण तो पूर्णरूप से पधारे, फिर तो सवाल ही नहीं। किन्तु केवल सर्जक मिले उतना ही नहीं, इस जगत की दूसरी जरूरत है रक्षक मिले। मूल्यों का रक्षण करनेवाला मुझे और आपको मिलता नहीं। संस्थाओं के पदाधिकारी मिलते हैं, सदाधिकारी नहीं मिलता। और राष्ट्र झंखता है सदाधिकारीओं। पदाधिकारी होने के लिए स्पर्धा होती है। नेटवर्क बनाया जाता है। क्यों कोई सदाधिकारी बनने हेतु फार्म नहीं भरता? क्योंकि मार्ग कठिन है, इसलिए व्यासपीठ पर बैठने का अवसर प्रभु ने दिया है तब उसके हम पदाधिकारी नहीं है अपितु जितनी मात्रा में बन सके, सदाधिकारी बने। रक्षक की जरूरत है। और कृष्ण ने यह कार्य पूर्ण किया। चाहे वे कहते हैं कि 'परित्राणाय साधूनां', किन्तु उनकी आंखों में साधु-असाधु का भेद नहीं होता। वे रक्षक है, परित्राण करनेवाला है। जगत को पोशक की जरूरत है। 'योगःक्षेमं वहाम्यहम्।' कृष्ण ने

पोषकत्व पूर्ण किया। अर्जुन का रथ चलाकर, यज्ञ में जूठे पात्र उठाकर उन्होंने सेवकपन भी सिद्ध किया। ऐसी परम चेतना की विश्व को बार-बार भूख लगती है। उसकी मांग है और मिलती रही है।

'गीता' के स्वाध्याय में मेरी आस्था के संदर्भ में देखूं तो 'भगवद्गीता' स्वयं चारों वस्तुओं को पूरी करती है। 'गीता' सर्जक है। वह किताब नहीं है, कृष्ण का मस्तिष्क है। पाश्चात्य विद्वानों को सलाम कि उन्होंने 'गीता' पर भाष्य लिखे हैं। किन्तु शंकराचार्य लिखे, उनकी तुलना में तो आ ही नहीं सकता अथवा तो जिन आचार्यों ने भाष्य किया। 'गीता' सर्जक है। विरागमुनि और हम कहीं न कहीं निमित्त हैं किन्तु इतनी छोटी यह दुनिया, 'गीता विद्यालय' का सर्जन 'भगवद्गीता' ने किया है। अतः सर्जक न भूले इसका ख्याल रखें।

मुझे जो कहना था वह बात पूज्य शास्त्रीबापा ने कह दी है। उस समय विश्वामित्र का यज्ञ मुश्केली में था और उन्होंने सम्राट के पास दो बालक मांगे, कहा कि आप दीजिए। विरागमुनि मांगते थे; शास्त्रीबापा ने भी मांग की थी। और यह एक बावा भी मांग रहा है। यह लड़का बोला या एक लड़की बोली उसके सांख्य पर मत जाईए। मुझे तो ऐसा लगता है दादा कि ये दोनों बच्चों द्वारा 'रामायण' और 'गीता' पर बोलने के बाद अन्य भाषण चाहिए ही नहीं! उन्होंने सबकुछ कह दिया। परमात्मा को क्या पसंद और क्या नापसंद उस पर इन बच्चों ने कितनी अद्भुत बात कह दी! लड़की कितनी निर्भीकता से बोल रही थी! दादा, मैंने ऐसी घटना नहीं देखी पहले। वे भी कोई योगभ्रष्ट रहे होंगे। पैर पड़ना चाहिए, उनको वंदन करना चाहिए। 'शूचिनां श्रीमतांगेह' को निकाल देते हैं, किन्तु योगभ्रष्ट होगा कोई। और यह तो मेरी व्यासपीठ का मिशन है। 'मिशन' शब्द दादा को पसंद न आए तो मेरा व्रत है। मेरी दृष्टि ऐसी है कि या तो मनुष्य को सत्यव्रत रखना चाहिए और न रहे तो मौनव्रत रखना चाहिए। हमारा हेमंत कहता है कि

गोरा पीरा की तमने आण,

सच बोलो, नहीं तो मत बोलो।

इसलिए बाप! 'गीता' सर्जक है। हमारे दादा विष्णु देवानंदगिरिजी मेरे सद्गुरु भगवान के छोटे भाई, विष्णुदास हरियाणी, वे ऋषिकेश गए, फिर महामंडलेश्वरपद, वेदान्त की उनकी यात्रा थी किन्तु उन्होंने जो पोस्टकार्ड लिखा था उसे हमने सुरक्षित रखा है। उसमें उन्होंने कहा था कि 'रामचरितमानस' तो हमारी कुलपरंपरा है ही, किन्तु बच्चों को कहना कि 'गीता' का पठन करे। 'गीता' सर्जन करती है, हमारा रक्षण करती है। 'मानस' की चोपाई है, 'कवच अभेद बिप्र गुरुपूजा। एहि सम बिषय उपाय न दूजा।' दो व्यक्तियों को तुलसीदासजी ने रक्षक कहा है। एक विप्र और दूसरा गुरु। कवच हम धारण करते हैं, किन्तु वह भेद सके वैसा हो तो कोई भी भेद डालेगा। कवच अभेद होना चाहिए। मेरा अनुभव कहूं तो 'भगवद्गीता' मेरा कवच है और 'रामचरितमानस' मेरा अभेद कवच है।

'गीता' रक्षक है। 'गीता' पोषक है। यदि 'गीता' को हम माँ कहते हैं, 'गीतामैया' कहते हैं तो माँ जैसा दूसरा पोषकतत्त्व कौन? 'गीता' की हम क्या सेवा कर सकते हैं? 'गीता' हमारी सेवा करे। ज्यादा से ज्यादा हम भाष्य करते, व्याख्या करते। उसकी क्या सेवा करे? 'गीता' ने जगत की सेवा की है। अतः 'गीता' सर्जक, रक्षक, पोषक एवं सेवक है।

समग्र 'महाभारत' के केन्द्र में जो है और जिन्होंने 'गीता' का अवतरण किया और हमारी समक्ष 'महाभारत' के अंतर्गत रखी वे व्यास व्यास भी चुतर्लक्षणी व्यास है। व्यास सर्जक है। 'नमोस्तुते व्यास विशाल बुद्धे।' व्यास जैसे सर्जक कौन? अद्भुत सर्जक है! जिसका सर्जन रमणीय, दर्शनीय, अनुसरणीय हो उस सर्जक को नीतिकारों उत्तम कहते हैं। आप कोई भी लकीरें बनाए वह सर्जन तो हुआ। किन्तु रमणीय नहीं है। मॉडर्न आर्ट चाहे कहता हो कि जैसे वेसे लकीरें बनाओ! किन्तु कद्र तो की कि इसमें आर्ट है। और है, होगी ही। यहां निकम्मा कुछ भी नहीं। इनमें से सार्थक हो उसे ढूंढना है। मैं तलगाजरडा में होता हूं तब कहता हूं कि इन कबूतरों, पक्षियों को हररोज चारा डालते रहते हों? वे कहते हैं, बापू, हररोज डाले जा रहे है। फिर कहता हूं चिटियों के द्वार पूरा जा रहा है? तो मुझे कहते हैं बापू, हरबार आप क्यों पूछते हैं? मैंने कहा, जैसे बाजरा डालो, जुवार डालो, चावल डालो और पक्षी आए और जो पसंद हो चुग ले, वैसे ही इस जगत में परमात्मा ने बहुत चारा डाला है, उसमें से हमें सुख की क्षणों ढूंढ लेनी है। अन्यथा सबकुछ बिखर गया है साहब! या तो चिटी बनकर अथवा कबूतर बनकर ले लें।

संत हंस गुन गहहि पय परिहरि बारि बिकार।

हम क्यों आलोचना करे कि मुझे तो चावल चुगना था और यहां बाजरा है, जुवार है! तेरी चांच में ताकत हो और हृदय में सच्चाई हो तो चुग ले। तुम्हें मिलेगा यह सब। 'बिधि प्रपंच गुन अवगुन साना।' उसमें से सुख मुझे और आपको ढूंढना पड़ेगा। उपलब्ध है। कहां बुद्ध, कहां मोरारिबापू! किन्तु साधु का वंश तो है ही हम! अतः बुद्ध के जो आर्यसत्य हैं कि यह जगत दुःखमय है, दुःख का

कारण है। किन्तु तलगाजरडा उसके साथ सौ प्रतिशत सहमती नहीं करता। बुद्ध के साथ प्रतिस्पर्धा में हम नहीं है। बौद्धों को पसंद भी नहीं! किन्तु इस जगत में सुख भी है, सुख के कारण भी है। सुख के निमित्त भी है, सुख के उपाय भी है। आप कबूतर बने, या आप चिटी बने। आपने गेहूं का आटा और शक्कर डाले हैं तो हाथी की ताकत नहीं है कि ले सके उसमें से। यह तो चिटी ही ले सकती है। हाथी तो अपनी सुंढ से ऐसी फूंक लगाएगा कि सब उड़ जाएगा! उसके लिए चिटी या कबूतर बनना पड़ता है। हम कबूतर नहीं हो पाए, कबूतर का घू-घू सीख गए हैं! 'मीनपियासी' मुझे याद आ रहा है-

कबूतरोनुं घू घू घू

चकलां, उंदर चूं चूं चूं ने छछूंदरोनुं छुं छुं छुं

कूजनमां शी कक्कावारी? हुं कुदरतने पूछुं छुंः

घुवड समा घुघवाटा करतो मानव घूरके- हुं हुं हुं!

कबूतरोनुं घू घू घू,

इन क्षणों में 'गीताजयंती' एक ऐसी पल है जहां से सुख को हम ले लें यह हमारी खोज है। बाप! भगवान व्यास सर्जक है, रक्षक है। व्यासपीठ के लिए तो रक्षक ही व्यास है। व्यासपीठ के स्थान कोई वाल्मीकिपीठ कहते हैं, कोई कहते हैं तुलसीपीठ, कोई कहते हैं पादुकापीठ। 'व्यासपीठ' शब्द आपको कम पड़ता है कि आपको दूसरे नाम देने पड़ रहे हैं? मैं हंमेशा 'व्यासपीठ' ही बोलता हूं। हमारे 'मानस' जगत में कुछ आचार्य अपनी पीठ को 'तुलसीपीठ' कहते हैं। व्यास को मुश्केली न पड़े, व्यास खुश हो, किन्तु तुलसी खुश न हो कि तुम व्यासपीठ ही रखोना! मैंने भी यहीं आश्रय ग्रहण किया है।

ब्यास आदि कबि पुंगव नाना।

जिन्ह सादर हरि सुजस बखाना।।

'व्यासपीठ' शब्द पर्याप्त है। हमारे किसी एक ने कहा कि यह व्यासपीठ नहीं अपितु 'चरणपीठ' है। किन्तु किसकी चरणपीठ है यह? ऐसे सर्जक क्यों बनते है? हमारा करण तो वेलजीभाई के यहां त्रिवेणी मैं ऐसा कहते थे कि मैं खड़पीठ से व्यासपीठ पर आया हूं। किन्तु उसकी यात्रा ठीक थी, खडपीठ से व्यासपीठ संभव है। दूर्वा चूंटते-चूंटते दुर्वासा तक पहुंच सकते हैं, यदि दाना चुगना आता है तो। व्यास हमारे रक्षक हैं। मुझे कई लोग पूछते रहते हैं कि बापू, आप व्यासपीठ की परिक्रमा करते हैं। मेरी आंखों ने नहीं देखा कि व्यासपीठ की परिक्रमा कर कोई व्यासपीठ पर बैठता हो। महापुरुषों आकर सीधे बैठ जाते थे। किन्तु मैं जबतक परिक्रमा नहीं करता मुझे संतोष नहीं होता। अभी-अभी मुझे बहुत पूछते हैं कि बापू, परिक्रमा करते हैं तब क्या बोलते हैं? लोगों को तो हमें नहीं बोलना हो वह बुलवाना होता है! अथवा उन्होंने तय किया हो वैसा हमारे पास बुलवाना होता है! अमरिका में हमारे एक भाई है वे कहते हैं, मेरी लड़की को आप समझाईए; उसे में कहूं ऐसे शब्दों में आप समझाईए। आपके शब्दों से समझती तो आप से ही समझ गई होती! मेरे शब्द भिन्न होंगे बाप! शायद समझना मुमकिन न भी हो। व्यासपीठ की परिक्रमा के समय मैं इतना ही कहता हूं, 'श्री व्यासपीठं शरणं प्रपद्ये।' 'मानस' को जब पैर पड़ता हूं तब कहता हूं, 'श्री 'मानसं' शरणं प्रपद्ये।'

नाम बदलने की जरूरत नहीं है। बालीश है यह! विकास विकृत नहीं होना चाहिए। व्यास हमारे रक्षक है। व्यास का एक-एक मंत्र हमारा रक्षण करता है। व्यास हमारे पोशक हैं। और कथा जगत के लिए तो खास। दादा ने आठ-दस लक्षण कहे हैं, उसमें कहा ही है कि इससे कम से कम आजीविका तो चल ही सकती है, अच्छी चल सकती है। और समाज को मैं बहुत ही स्पष्ट करता हूं कि मेरा कोई भी कथाकार व्यासपीठ पर कथा कहता हो उनकी अच्छी तरह पूजा करनी चाहिए, अच्छी तरह वंदना करनी चाहिए। वहां किसी की तुलना में न जाए। उन्होंने आपको जो दिया है उसके सामने आप कुछ नहीं! आपका पूरा घर बिक जाए तो भी आप व्यास के कर्ज़ से मुक्त नहीं हो सकते!

ओशो को किसी ने पूछा कि यह देश कैसा है! बच्चों को दूध पिलाने के पैसे न हो पर गंगा में नौका में बैठते हैं तो आठ आना या पावली गंगा में डाले बिना रह नहीं सकते! यह कैसी विचित्रता है! यह देश कितना अंदश्रद्धालु है! तब ओशो ने बहुत सकारात्मक दर्शन दिया कि मेरे देश का ग्रामीण व्यक्ति भी जानता है कि गंगा, तुम्हारे पास जो है उसके सामने मेरे पास जो है वह तुच्छ है, ऐसा कहकर डालता है।

मथुरा में मनोरथ होता है तब यमुनाजी को सारी पहनाई जाती है विश्रामघाट पर। उसे बुद्धि और तर्क से देखेंगे तो कुछ समझ में आएगा ही नहीं। सभी कहते रहते कि इतना गरीब के घर दे तो? लेकिन इतना तुम तो करो! मेरे प्रति स्नेहादर रखते हैं मेरे आत्मीय, वे मुझे सीधा नहीं कह सके। अतः अन्य को कहा कि मोरारिबापू को कहिए कि यह 'करुणा' में से दीर्घ बंध कर दे। करुणा में ह्रस्व आता है। किन्तु तिहत्तर साल तक मुझे पता ही नहीं चला! मुझे लगता था करूणा दीर्घ ही होनी चाहिए, छोटी नहीं

होनी चाहिए। अतः कहा कि बापू को कहिए न, क्योंकि गांधीजी ने 'गुण' का 'गूण' किया था विद्यापीठ में और बाद में यह शब्द स्थापित हो गया, उसी तरह बापू की 'करुणा' स्थापित हो जाएगी। मैं कोशिश करूंगा लेकिन मेरी करुणा छोटी नहीं कर पाऊंगा। करुणा दीर्घ ही होगी। भाषा की बात निश्चित है। 'शनिवार' में ह्रस्व होता है, मुझे पता ही नहीं था! मैं तो दीर्घ ही लिखता था! मेरे लिए तो शनिवार भी लंबा और रविवार भी लंबा! अभी-अभी मैंने प्रौढ़ शिक्षा प्रारम्भ की है। पक्के घड़े नहीं चढ़ेगी। किंतु इन साड़ियों को इस तरह पहना देनी और यज्ञ में सब आहूत कर देना! हां, ज्यादा व्यय नहीं होना चाहिए। पर उसके मूल के संशोधक ऋषिओं हैं। वह मनोरथ है साहब! मनोरथ को कंगाल मन से नहीं देखा जा सकता।

तो कथा करवाते तब आपकी यह जिम्मेवारी बनती है कि कथाकार का अच्छी तरह से सम्मान किया जाना चाहिए। एक घंटा गानेवाला लाख रुपये लेकर चला जाए, और मेरा कथाकार दो-दो बार टूट जाता है उतने हरिगुण गाता है। उसे अन्य जरूरत नहीं है। व्यासपीठ मिली वही पर्याप्त है। किन्तु आप भी गलत नियत से काम निकलवाओ वह ठीक नहीं। और ले ही लेना चाहिए। बाद में दसवां हिस्सा निकाल सकते हैं। किन्तु दक्षिणा जरूरी है। वह चार्ज नहीं है, दक्षिणा हैं। अन्यथा 'दक्षिणा' शब्द नहीं दिया होता। समाज का कर्तव्य हैं कि उसे दक्षिणा देनी चाहिए।

व्यासपीठ हमारा पोषण करती है। किसकी रोटी हम खाते हैं?

मैं जिसे ओढ़ता बिछाता हुं।

वो गजल आपको सुनता हूं।

दुष्यंतकुमार की यह पंक्ति है। हमने व्यासपीठ ओढ़ी है, व्यासपीठ बिछाई हैं। हमारी चारों तरफ व्यास फिरते हैं। वे हमारा पोशाक हैं। और व्यास जैसी सेवकाई किसकी? यह आदमी 'महाभारत' में कितना भ्रमण करता रहा हैं! जहां जरूरत पड़ी वहां व्यास खड़े होते हैं, शारीरिक रूप से, मानसिक रूप से, विचारों से व्यास आ कर खड़े होते हैं। 'संभवामि युगेयुगे' नहीं, जरूरत पड़ने पर व्यास 'संभवामि क्षणे क्षणे' खड़े हैं। यह ऐसी-वैसी सेवकाई नहीं है।

तो भगवान कृष्ण 'श्रीमद्भगवद्गीता', भगवान व्यास नारायण, उन्होंने चारों वस्तुएं पूरी की। और चौथा धजा में बैठकर 'गीता' सुननेवाला मेरा हनुमान। हनुमान सर्जक है। लंकादहन करके वापस आये तब अंगदादि मित्रों को हनुमानजी नया इतिहास कहते हैं। एक नए इतिहास का सर्जन हनुमानजी ने किया है। हनुमानजी रक्षक है-

साधु संत के तुम रखवारे। असुर निकंदन राम दुलारे।।

राम दुआरे तुम रखवारे। होत न आज्ञा बिनु पैसारे।।

हमारे यहां कोई भी संवाद होता तो अग्नि की साक्षी में होता है। विवाह अग्नि की साक्षी में होता है। 'रामायण' में मैत्री की बात हुई तब पावक साक्षी हुआ। मंगलकार्य अग्नि की साक्षी में होता है। किन्तु 'गीता' अग्नि की साक्षी में नहीं गाई गई; वायु की साक्षी में गाई गई है। अग्नि उतना सार्वत्रिक नहीं है जितना पवन है। अग्नि को हमें किसी पात्र में लेना पड़ता है; उसका स्थापन करना पड़ता है अथवा जहां जरूरत हो वहां विशेष विधि से उसे प्रकट करना पड़ता है। 'वायु सर्वत्र गो महानं।' वायु चारों तरफ है और उस वायु की साक्षी में 'गीता' का गायन हुआ है। हनुमान ऐसे रक्षक है कि-

भूत पिसाच निकट नहिं आवै।

महाबीर जब नाम सुनावै।।

मैंने शास्त्रीबापा से कहा, मैं तीन दिन पहले एक जगह बाप बनकर गया था। खेतसी मेरे साथ था। और एक पत्रकार की मित्र; उसे फोटो के लिए मना किया। बाद में वह लड़की जो बोली कि बापू, हमें आपका डर नहीं लगता, आपके साथ है उसका डर लगता है। समझ के लिए किसी फार्म की जरूरत नहीं। समझ तो कहीं भी आ कर उगती होती है। और दूसरा वाक्य भी कहता हूं। शेष तो अयोध्या में कहना ही है। अयोध्या के साधु मेरे प्रति बहुत प्रेम रखते हैं! मेरे किसी विचार से सहमत न हो तो अधिकार है उनको। और मुझे आदर करना चाहिए। किन्तु मेरे प्रति सबा को प्रेम गज़ब है। हमारे एक आचार्य है रामानुज संप्रदाय के। 'वाल्मीकि रामायण' के समर्थ वक्ता, उसको इस बार 'वाल्मीकि अवोर्ड' दिया जाना है। उन्होंने सतुआ बाबा को कहा कि आप बापू को बहुत मिलते हैं, तो बापू को इतना पूछिए कि यह कथा करने के लिए आपको दूसरा गांव नहीं मिला? दूसरा वाक्य उनको इस प्रकार कहा, 'क्या आपको दिक्कत है?' तब उन्होंने कहा,'थी, अब नहीं है।'

गई बहोरी गरीब नेवाजू।

सरल सबल साहिब रघुराजू।।

जिसका सबकुछ चला गया हो और ऐसा कहे कि सबकुछ मिल गया, उसे डर समाज का लगता है, साधुओं का नहीं लगता।

तुलसी राम को 'साहेब' कहते हैं। मार्गशीर्ष सुद एकादसी आज कबीरसाहब का दिवस है। हमारे साहब

बहुत सरल और सबल है। भरोसा कीजिए, चला गया होगा उसे भी वापस ला देगा। केवल भरोसा। आपने प्रश्न रख दिया कि 'स्थितप्रज्ञस्य का भाषा?' वह कैसे बोलता है, कैसे उठता है? शरणागति की क्या भाषा? वह कैसे बोलता है? कैसे उठता है? कैसे बैठता है? आप मुझे आशीर्वाद दीजिए। मैं उसे 'रामायण' से ढूंढ निकालूंगा। शरणागत बोलता नहीं। वह दो ही काम करता है। वह चुप रहता है अथवा रोता है। शरणागतों की जमा पूंजी आंसू के सिवाय अन्य कुछ नहीं। मैंने और आपने सूरदास को देखा नहीं, उनके पद हमारी आंखें बनकर दिखाते हैं। वह मनुष्य अपनी बंद आंखों से आशरा का पद गाता होगा तब वे आंखें रडती होगी।

भरोसा रखना बाप! मेरी तरफ देखकर भी भरोसा रखना। तुम्हारा भरोसा टूटने नहीं दूंगा। 'मानस' ऐसा कहता है कि सबकुछ लूट चुका हो फिर भी साहब इतने सबल और सरल है कि सबकुछ आपको वापस दे देंगे।

तो बाप! श्री हनुमानजी सर्जक है, रक्षक है, पोषक है। यदि ऐसा न होता तो श्वास भी नहीं ले सकते। हम जी नहीं सकते। वे इतना खयाल रखते हैं; कुपोषण नहीं देते। उसका यदि आश्रय मिले तो-

भूत पिसाच निकट नहिं आवै।

महाबीर जब नाम सुनावै।।

भूत अर्थात् अतीत, पिशाच अर्थात् भविष्य। यह अतीत और भविष्य के शोक एवं चिंता से हमें मुक्त रखे वह हनुमंततत्त्व है। यह भूतप्रेतों फिर 'हटो-हटो' करते हैं! किन्तु कभी-कभी यह सब जरूरी होता है। अन्यथा मुझे कोई चलने ही न देता! उसमें आक्रमकता नहीं होनी चाहिए। शील और सम्मान होना चाहिए। किन्तु जो भीड़ होती है उसमें मेरा कसूर है कि मैं हूं। लेकिन उसमें लोगों का भी कसूर है। आप इतनी भागदौड़ किस लिए कराते हैं? आपको अपने बच्चे का ध्यान न रहे। बहन-बेटी को मर्यादा का भान न रहे। मैं आपको देख नहीं पाता। आप शांति से खड़े रहे तो मैं आपको देख सकूं। मुझे आपको देखना है। इस जगत को देखने मैं आया हूं। लक्ष्मण कहते हैं, 'रामजी, पहली बार हम मिथिला में आए हैं। मुझे मिथिला का दर्शन करना है।' मुझे यह सब देखना है। मुझे भगवान कहते हैं, जिस तरह अर्जुन ने कहा कि, 'पश्य मे पार्थ रूपाणि।' तुम इन सब को देखो। किन्तु समाज थोड़ा संयम रखे तो ऐसा कुछ नहीं करना पड़े। मैं अकेला काफी हूं। व्यवस्था कराते हैं वह सबका अपना स्वभाव है, अपनी रीति ही बाधक होती है। उन लोगों को यह जान लेना चाहिए कि

आलोचना का शिकार आपके मोरारिबापू ही बनते हैं, जो निर्दोष है। किन्तु मुझे कोई परेशानी नहीं है।

कुछ तो लोग कहेंगे, लोगों का काम है कहना,
छोडो बेकार की बाते ...

मान-अपमान तो शब्दों में है। शब्द तो मन तक जाता है। आत्मा तक कहां जाते हैं? तो हनुमानजी वायु रूप में हमारे पोशाक है।

रामदूत मैं मातु जानकी।
सत्य सपथ करुनानिधान की।।

हनुमानजी सेवक है। 'मैं सेवक सचराचर रूप स्वामी भगवंत।'

तो भगवान कृष्ण चारों वस्तुओं के पूर्णावतार पूर्ण कर बिदा हुए। 'भगवद्गीता' हमारे पास है। विग्रह रूप से कृष्ण नहीं है। और 'भगवद्गीता' रूपेण उनकी वाणी चारों प्रकार से हमारा जतन करती है। भगवान व्यास भी चारों प्रकार से हमारे लिए हैं। और हनुमान चारों तरफ से हमारे लिए हैं।

तो 'गीताजयंती' के दिन यहां बोलता हूं। जन्म-जन्म से बोलते आये हैं और जन्म-जन्म बोलते रहेंगे। यही काम है। मेरा यह शिवसंकल्प है, यदि उनके यहां व्यवस्था है तो कहे, हमें तो वापस आना ही है। शीघ्र चले जा सकते हैं और वापस आएंगे तो यहां आएंगे।

हुं तो बस फरवा आव्यो छुं!
हुं क्यां एके काम तमारुं के मारुं करवा आव्यो छुं?

'निरुद्देशे', राजेन्द्रबापा और निरंजनभगत भी। तो बाप! मेरी बहुत खुशी व्यक्त करता हूं। पूज्य शास्त्रीबापा अपनी व्यस्तता से समय निकालकर दो दिवस-पांच दिवस आकर बच्चों को बल प्रदान करते रहते हैं। दादा के आशीर्वाद है, ग्रामजनों का सद्भाव है। बच्चे तो सबके केन्द्र में है और यह मेरा कथा जगत। पहले थोड़ी धारा हुई थी किन्तु बड़ी नदियों में भी प्रवाह कम-ज्यादा होता रहता है लेकिन मुनिजी को कहें, डेम के जो दरवाजे हो उसे खोल दे और फिर से प्रवाह आने दो, साहब! मेरे कथाजगत को मेरी प्रणाम सह प्रार्थना है कि यहां बोलने का अवसर मिले या न मिले आप आते रहना। वारिष्ठ कथाकारों को भी विनय है कि आप भी समय निकालकर आते रहे ताकि इन बच्चों का काम हो जाए। आपके द्वारा दो घंटा अथवा एक दिवस आने से कुछ कम नहीं होगा और मशाल ओर अधिक प्रज्वलित होगी। व्यस्त तो मैं भी हूं। सूर्य और चन्द्र न हो उतना व्यस्त हूं! सूरज मेरे बाद निकलता है और मेरे बाद डूब जाता है, इतना मैं दौड़ता हूं। उसकी मुझे प्रसन्नता है। मुझे सौंपा हुआ यह मेरा स्वधर्म है, उसमें कोई उपकार नहीं है। मैं यह न करूं तो क्या करूं? विकलांग हो सकता हूं यदि मेरे यह वोक-टोक न हो! विश्व में मुश्केली पड़ सकती है।

गौतमबापा ने कल कितनी मर्यादा में बातें की संस्कारों की! हमारा धनंजयभाई, मुझे पता नहीं था कि रुकमणि स्तुति में सात प्रकार की भक्ति आती है। जब-जब महापुरुषों को सुनाता हूं तब फायदा लेकर जाता हूं। किसी भी दिन में नुकसानी में नहीं गया। कई अभागी लोग ऐसे भी होते हैं जो इतना सब मिल रहा हो फिर भी कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकते हैं। बहुत अनुभव से कहता हूं कि कोई भी वक्ता को आप सुनते हैं उसमें से आपके लिए आप चिटी या कबूतर होंगे तो कुछ जरूर मिलेगा। यह आज तक अब मेरा अनुभव रहा है। मैं पांच मिनट भी कथा में जाता हूं अथवा गाडी लेकर निकलता हूं तो कथा के मंडप के बाहर दूर से सुनता हूं, कुछ नहीं तो एक श्लोक मेरे कान पर पड़े तो ऐसा लगता है हमें कितना प्राप्त हुआ!

अब सब आते हैं, आते रहना। उद्घाटनों के समय यदि मिलता हो, शिलारोपण का समय मिलता हो, तो इन बच्चों के लिए आना है, मोरारिबापू के लिए नहीं। शास्त्रीबापा या दो विनु के लिए नहीं, किन्तु बच्चों के लिए। आज की 'गीताजयंती' में यह दो परिणाम तो कितना बड़ा बल दे सके ऐसे हैं! तो उपनिषद के मंत्र की तरह यह संस्था 'उतिष्ठत' खड़ कर रही है। कितनी मात्रा में इसे छोड़िए, लेकिन कुछ हो रहा है इसका आनंद है।

मैं पंकज को पूछता था कि इतने सालों में कभी मेरी अनुपस्थिति रही है? मुझे कहा, नहीं हुआ। आए हैं उसका मुझे आनंद है और मेरे यह व्रत का मेरा हरि बराबर पालन कराए। उपनिषदों में केवल आनंद की ही महिमा नहीं है। आनंद की बात तो है, लेकिन उससे आगे बढ़ें तो मेरे विष्णुदादा कहते थे कि 'अपरोक्षानुभूति' भाष्य में एक वाक्य है कि, आनंद का स्वरूप हम है। किन्तु आनंद ही नहीं, अखंडानन्द मिलना चाहिए। हमारे अखंड आनंद के लिए भी यहां आते रहिए। यह संस्था अयाचक है, किसी के पास कुछ मांगती नहीं और मांगेगी भी नहीं। 'भगवद्गीता' है; विरागमुनि बैठे हैं। मांगना नहीं, दे तो स्वीकार। यह कोई पारंपारिक संस्था नहीं है, गंगा की धारा जैसी संस्था है। आता ही रहेगा और चलती ही रहेगी। और कभी नहीं चले तो नहीं खेलते!

('गीताजयंती' (२०१८) के अवसर पर जोडियाधाम (गुजरात) में प्रस्तुत वकतव्य : दिनांक १९ डिसम्बर, २०१८)

॥ जय सीयाराम ॥